इंदू सांप्रदाय



रचयिता : त्रिमत के एकैक गुरु

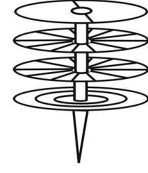
आध्यात्मिक साम्राज्य के चक्रवर्ती, (88) दश अष्टाधिक ग्रंथकर्ता

इंदू ज्ञान धर्मप्रदाता, संचलनात्मक रचयिता, त्रैतसिद्धान्त आदिकर्ता

श्रीश्रीश्री आचार्य प्रबोधानंद योगीश्वर

www.thraithashakam.org





इंदू सांप्रदाय

रचयिता : **त्रिमत के एैकक गुरू**

आध्यात्मिक साम्राज्य के चक्रवर्ती, (88) दश अष्टाधिक ग्रंथकर्ता

इंदू ज्ञान धर्मप्रदाता, संचलनात्मक रचयिता, त्रैतसिद्धान्त आादिकर्ता

श्रीश्रीश्री आचार्य प्रबोधानंद योगीश्वर



Published by

इंदू ज्ञानवेदिका

(Estd. in 1978 - Regd.No.: 168 / 2004)

त्रैत शक : 39 **प्रथम मुद्र** : May - 2017

प्रतियाँ : 1000 **खीमत** : 100/-




योगीश्वर जी के संचलनात्मक त्रिमत के आध्यात्मिक रचनायें

02 इंदूज्ञानवेदिका के प्रचुरण

01) त्रैत सिद्धान्त भगवद्गीता
02) जनन मरन सिद्धान्त
03) ईश्वर का चिह्न - ९६३
04) धर्म शास्त्र कौनसा है?
05) इंदुत्व की रक्षा करते हैं
06) कौनसा असली ज्ञान हैं?
07) आध्यात्मिक प्रश्न - जवाबात
08) तत्वार्थ के तसवीरों में ज्ञान
09) मंत्र - महिमा (सच या झूट?)
10) गीतम - गीता (गानों में ज्ञान)
11) लु का क्या मतलब? (तेलुगु)
12) हिंदू मत में सिद्धान्त कर्तायें
13) तीन ग्रंथ, दो गुरू, एक बोधक
14) ईश्वर का ज्ञान कब्ज़ा हुआ है
15) हेतुवाद प्रश्न - सत्यवाद जवाब
16) त्रैत सिद्धाँत आध्यात्मिक घंटु
17) मेरा लोचन है तेरा आलोचन है
18) क्या जिहाद का मतलब युद्ध है?
19) क्या ईसा मरगया? या मारेगया?
20) तीन दैव ग्रंथ - तीन प्रथम वाक्य
21) कौनसा पहला है पेड या बींज ?
22) दैवग्रंथ में सत्यासत्य की विचक्षण
23) जिन्न - भूतों के यदार्थ संघटनायें
24) क्या सायिबाबा ईश्वर है या नहीं?
25) क्या श्रीकृष्ण ईश्वर है या भगवान
26) कलियुग (कभी भी युगाँत नही होगा)
27) गालियों में ज्ञान - आशिर्वादों में अज्ञान
28) ज्योतिष्य शास्त्र (शास्त्र है या अशास्त्र?)
29) क्या ईश्वर के आमद का समय ये नहीं है
30) क्या स्वर्ग इंद्रलोक और नरक यमराज्य है
31) हमारे त्योहार (कैसे करना है मालूम है?)
32) कृष्ण मूसा (श्री कृष्ण के मरण की बाद की ज़िदगी)

33) गुत्ता
34) सुबोधा
35) प्रबोधा
36) समाधि
37) कसौटी
38) फैसला
39) कर्मपत्र
40) आदित्य
41) धर्मचक्र
42) माँ - बाप
43) मत - पथ
44) भाव - भाषा
45) धर्म - अधर्म
46) प्रबोधा तरंग
47) त्रैत सिद्धान्त
48) प्रसिद्ध बोधा
49) सुप्रसिद्ध बोधा
50) वार्तक - वर्तक
51) तत्वों में ज्ञान
52) मरण रहस्य
53) गीता परिचय
54) त्रैतशक पंचांग
55) ईश्वर का चिह्न
56) ईश्वर की मुहर
57) तुझे मेरी लेखा
58) योहान सुवार्ता
59) कथाओं में ज्ञान
60) कथाओं में ज्ञान
61) त्रैताकार रहस्य
62) गुरुप्रर्थना मंजरि
63) देवालय के रहस्य
64) हेतुवाद - प्रतिवाद
65) पुनर्जन्म का रहस्य
66) त्रैताराधना
67) इंदू सांप्रदाय
68) आत्मलिंगार्थ
69) द्राविड ब्राह्मण
70) विश्व विद्यालय
71) प्रवक्तायें कौन?
72) पहेलियों में ज्ञान
73) एक ही दोनों हैं
74) एक बात तीन ग्रंथ
75) सामेताओं में ज्ञान
76) नास्तिक - आस्तिक
77) प्रबोदानंदं नाटिकायें
78) क्या सुलेब ईश्वर है?
79) यज्ञ (सच या झूट?)
80) क्या इंदू ईसायि है?
81) निगूढ तत्वार्थ बोधिनि
82) रूप बदला हुआ गीता



भाषा में पांडित्य को छोडकर, भाव में पांडित्य को देखनेवाला ही असली ज्ञानी है

01) माता
02) माता -पिता
03) मत - पथ
04) युग - योग
05) पैत्य - सैत्य
06) प्रभू - प्रजा
07) इंदू - हिंदू
08) बात - दवा
09) भक्ति - भय
10) भाव - भाषा
11) धर्म - अधर्म
12) नैज़ - सहज
13) प्रभू - प्रभुत्व
14) सुख - आनंद
15) दश - दिशायें
16) स्त्री - पुं/लिंग
17) पुस्तक - ग्रंथ
18) द्राविड - आर्य
19) भूत - महाभूत
20) ज्ञान - विज्ञान
21) प्रकृति - विकृति
22) मरण - शरीर
23) मुर्गा - पादरस
24) पैदाहोना - मरना
25) सृष्टि - सृष्टिकर्ता
26) द्वितीय - अद्वितीय
27) मायक - अमायक
28) सेकू वलि - कूलिसेवा
29) देश दोखा - देह मह
30) माँ बाप - गुरू दैव
31) गोरू - गुरू (नाखुन)
32) दिव्य खुरान - हदीस
33) दादा
34) आत्मा
35) समाधि
36) टकलू
37) यादव
38) भगवान
39) सांप्रदाय
40) कलियुग
41) वेलुगुबंट
42) ज्ञानशक्ती
43) ६-३=६
44) गुरुपौर्णमी
45) संचित कर्मा
46) इंदू महासमुद्र
47) त्रैत सिद्धान्त
48) कर्म का मर्म
49) श्रीकृष्णाष्टमी
50) सात आकाशें
51) तीन ग्रंथ
52) चमत्कार आत्मा
53) चंद्राकार (गंजा)
54) गुरू कोन है?
55) श्रीकृष्ण कौन है?
56) १ २ ३ गुरूपौर्णमी
57) एकता - एकाग्रता
58) श्रीकृष्ण जन्म मधुरा
59) आत्मा का काम
60) मतों में पवित्रयुद्ध
61) पुनर्जन्म का रहस्य
62) खिलानेवाली आत्मा
63) तेलुगु में तीन - छ - नौ
64) नाटक करनेवाली आत्मा

65) शैव - वैष्णव
66) जीर्ण+आशय
67) निदर्शा - निरूप
68) सेवा की फीसद
69) कौनसा धर्म है?
70) अधर्म आराधनायें
71) कौनसा शास्त्र है?
72) क्या ईश्वर का कोइ
73) काय - फल - काया
74) दैवज्ञान - माया महत्य
75) तीन पैदायिश - दो जगह
76) क्षमा न कियेजानेवाला पाप
77) ज्ञान के पास जत्तन रहना!!
78) बाल आत्मा की निशान है
79) एक निरंजन - अलकनिरंजन
80) हरिपैर - हरहाथ (हथेलि - तलवा)
81) बिना गुरू की विद्या अंधी विद्या ह
82) तीन निर्माण - एक परिशुभ्रता
83) सहज मरण - तात्कालिक मरण
84) मेघ एक भूत - रोग एक भूत है
85) प्रपंच की श्रद्धा - परमात्मा की श्रद्धा
86) कर्मवाला कृष्ण -बिना कर्मवाला कृष्ण
87) गुरू वह है जो पहचाना नहीं जाता
88) इच्छादीन कार्य - अनिच्छादीन कार्य
89) इच्छादीन कार्य - अनिच्छादीन कार्य
90) योगीश्वर जी का जन्मदिन का संदेश
91) बाहर का समाज - अंदर का समाज
92) सीने पर मोहर - माँ बाप की निशानी
93) स्वार्थ राजकीय (स्व + अर्थ राजकीय)
94) पैदायिश का दिन किसी को नहीं आता
95) आटा - दोबूचलाटा (खेल - छुपाछुपी का खेल)
96) टक्कु टमार, इंद्रजाल महेंद्रजाल, गजकर्ण गोकर्ण

97) भय
98) गुरुचिह्न
99) मतद्वेश
100) धर्म चक्र
101) पुरुषोत्तम
102) हान्कनेवाला
103) अर्थ - अपार्थ
104) ग्रंथ - बोधा
105) प्रज - मानव
106) दंत - अंत
107) शव - शिव
108) अदुरू - बेदुरू
109) भक्ति - श्रद्धायें
110) आस्ती - दोस्ती
111) दैवग्रंथ
112) ग्राहिता शक्ति
113) त्रैतशक संतक
114) कालज्ञान के वाक्य
115) ईश्वर की आज्ञा - मौत
116) मत सामरस्य
117) तेरे पीछेवाला
118) माया मर्म - आत्म धर्म
119) कालज्ञान के वाक्य
120) ज्ञान कब्जा हुआ है
121) क्या ईश्वर एक है! या दो!!
122) आध्यात्मिक प्रश्न - जवाबात
123) अंतिम दैवग्रंथ में प्रथम वाक्य
124) मोक्षमु - मोसमु (मुक्ति - धोका)
125) श्रीकृष्णमरगया? या मारेगया?
126) अक्षर ज्ञान

प्रबोधाश्रम (श्रीकृष्ण मंदिर)

चिन्न पोडमल (ग्राम), ताडिपत्रि (मं), अनंतपुर (जिला) A.P
Cell : 98665 12667, 99516 75081, 94903 63038

इंदूज्ञान वेदिका शाखा
अनंतपुर टौन, A. P
Cell : 97059 59390, 99855 80099

के. लक्ष्मीनारायणा चारि (प्रसिडेन्ट)
मार्केट स्र्टीट, धर्मवरम, अनंतपुर (जि)
Cell : 94405 56968,
92900 12413, 94406 01136

आदिशेषय्या (टीचर) (प्रसिडेन्ट)
गुत्ति, अनंतपुर (जि)
Cell : 9491362448, 7382986963

पि.आदिनारायण
मुद्दिरेड्डि पल्ली (ग्रां), अनंतपुर (जि)
Cell : 9440745800, 7259851861

ए.नागेंद्र (प्रसिडेन्ट)
क्रोत्त चेरुवु (ग्रां, मंडल) अनंतपुर (जि)
Cell : 9493622669, 9959316410,
9949995090

टि.वि.रमणा (प्रसिडेन्ट)
मुदिगुब्बा (ग्रां), अनंतपुर (जि)
Cell : 9440980036, 07406039453

पि.नागय्या (प्रथम मेंबर)
वीकर सेक्षन कालनी, कर्नूल टौन
Cell : 9440244598, 9849303902

एन.वि.रामकृष्ण (प्रथम मेंबर)
बोद्दाम (ग्रां), राजाम (मं), श्रीकाकुलम
Cell : 9494248963, 9959779187

इंदू ज्ञानवेदिका (Head office)
चैतन्यपुरि, दिलसुख नगर, हैदराबाद,
तेलंगाना रार्ष्ट. Cell : 9491040963,
9032963963, 9848590172

वि.शंकर राव (टीचर) (प्रसिडेन्ट)
अशोक नगर, विजयनगर (जिल्ला)
Cell : 9703534224, 9491785963

तुलसी राव
टि.टि.डि कल्याण मंडप, विजयनगर
Cell : 9441878096, 9030089206

यस अनिल कुमार
काकिनाडा टौन, तूर्पु गोदावरि जिल्ला
Cell : 9866195252, 9640526520,
73960 38888

बंडारु सत्यनारायण
मामिडि कुदुरु (मं), तू, गोदावरी जिल्ला
Cell : 95535 07141, 84669
20419, 94902 95577

यन.वि.रामकृष्णा (प्र.सभ्य)
बोद्दाम (ग्रां), राजाम (मं), श्रीकाकुलम (जिल्ला)
Cell : 9494248963, 9959779187

इंदू ज्ञानवेदिका शाखा
मल्लिगां (ग्रामं), कोत्तपेट (पो), रायगड (जि),
ओडिसा (राष्ठ). Cell : 09437527499,
09437527470, 09437975781

इंदू ज्ञानवेदिका शाखा
विशाख पट्टणम, आर्न्ध्रप्रदेश
Cell : 76749 79663, 94400 42763, 89777 13666, 92478 26253

एन.बि.नायक (प्रथम मेंबर)
पेदमडका, अगनंपूडी, विशाख पट्टणम (जि)
Cell : 73964 92239, 92483 15309, 73862 12589

वि.सि.वर्मा आनंदाश्रम
मज्ञिवलस(ग्रां, पोस्ट), भीमिलि (मं), विशाख पट्टणम (जि)
Cell : 94415 67394, 95021 72711

वि.शंकर राव (टीचर) (प्रेसिडेन्ट)
अशोक नगर, विजयनगर (जि)
Cell : 9703534224,9491785963

तुलसी राव
तळळ दत ग.ग.ऽ.कल्याण मंडप, विजयनगर (जि)
Cell : 9441878096,9030089206

डा बि धर्मलिंगाचारी (प्रथम मेंबर)
श्री कनकमहा लक्ष्शी क्लिनिक, (कोट), विजयनगर (जि).
Cell:08966-275208, 9704911737

टि.उदयकुमार (प्रेसिडेन्ट)
भीमवरम १ टौन, पशिचम गोदावरी जिल्ला
Cell : 9948275984,7386433834

यम मुरलि
जड्चर्ला, महबूब नगर जिल्ला
Cell : 97057 16469

इंदू ज्ञानवेदिका शाखा
विशाख पट्टणम, आर्न्ध्रप्रदेश
Cell : 76749 79663, 94400 42763, 89777 13666, 92478 26253

यम अल्लिपीर
मडकशिरा, अनंतपुर (जिल्ला), आं. प्र.
Cell : 89780 58081

शेक षफी
चेन्नै, तमिलनाडु रार्ष्ट
Cell : 09445554354

शेक इब्राहीम
कर्नूल टौन, आंध्रप्रदेश
Cell : 70950 08369

शेक अमीर अली
नल्गोंडा जिल्ला, तेलंगाण रार्ष्ट
Cell : 9505 989898, 9505768181

श्री प्रबोध क्लिनिक यु.जनार्दन
आटोनगर, बस्टान्ड रोड, कोयिल कुंट्ला (मं), कर्नूल (जिल्ला). Cell : 9491851911

अनमल महेश्वर (प्रेसिडेन्ट)
चवटपाल्यम (ग्रां), गूडूरु, नेल्लुरु जिल्ला
Cell : 9494631664, 9490809181, 8106065300

रौतु श्रीनिवास राव (प्रेसिडेन्ट)
एटुकूरु रोड, दर्गा मान्यम, गुंटूर जिल्ला
Cell : 9948014366, 9052870853

नर्रा श्रीनिवास रेड्डि
कंभं (मं), प्रकाश्म जिल्ला
Cell : 9849883261, 8142853311, 8187084516

डा.यम.वेंकटेश्वर राव (प्रेसिडेन्ट) M.D(Acu)
शान्ति नगर, नेल्लूरु जिल्ला
Cell : 9440615064, 9246770277

यन.बी नायक (प्र.सभ्य)

पेदमडक, अगनंपूडी, विशाक पट्नम (जिल्ला)
Cell : 92483 15309,
73862 12589, 73964 92239

नायुडु

ख.क.ऊ कोलिमि गुंड्ला, कर्नूल (जिल्ला)
Cell : 9440490963

तलारि गंगाधर

गुडिपाटि गड्डा, नंद्याल टौन.
Cell : 9491846282, 7671963963

वै.रविशेखर रेड्डि

पेद्द कोट्याल (ग्रमं), नंद्याला (मं)
कर्नूल जिल्ला. Cell : 9440420240,
9885385215

टि.उदय कुमार (प्रसिडेन्ट)

भीमवरम वनटौन, पश्चिम गोदावरी जिल्ला.
Cell : 99482 75984, 73864 33834

इंदू ज्ञान वेदिका शाखा

विशाक पट्नम, आंध्रप्रदेश रार्ष्ट.
Cell : 76749 79663, 94400 42763,
89777 13666, 92478 26253

इंदू ज्ञान वेदिका शाखा

कोत्तकोट, महबूब नगर (जिल्ला)
Cell : 87905 58815,
9440655409, 9701261165

पि रामकृष्णारेड्डि

कोलिमि गुंड्ला, कर्नूल (जिल्ला)

Cell : 9666202963

घडियं.पेद्दिरेड्डि (प्र.सभ्य)

नरसरावपेट, गुंटूरु जिल्ला
Cell : 9989204097, 9849555738

यम जैराम नायक

पद्मावती कालनी, महबूब नगर टौन.
Cell : 70321 74830, 90009 16419

सायि शंकर श्रेष्टी (टीचर)

अच्चं पेट, महबूब नगर जिल्ला.
Cell : 9948947630, 9640717574

पोटु वेंकटेश्वर्लु (प्रेसिडेन्ट)

हुजुर नगर, नलगोंडा जिल्ला.
Cell : 9848574803, 9866423853

बि.देवेंदर

भुवनगिरि टौन, नल्गोंडा जिल्ला.
Cell : 76800 65963,
9704885964, 9848741703

इ.श्री नाथ श्रेष्टि

गणेश स्ट्रीट, जनगां, वरंगल जिल्लाह.
Cell : 9573552963, 8096958359

ए.राघवेंद्र श्रेष्टि

श्री कृष्ण मेडिकल्स जनरल्स, पटेल नगर, ३ क्रास होस्पेट, बल्लारि जिल्ला, कर्णाटका रार्ष्ट.
Cell : 097318 16452, 096111 33635

A.V LAKSHMI NARAYANA

San Antonio, TEXAS,U.S.A
+1(210)714 9696, +1(210)527 3436

K. SIVA KRISHNA

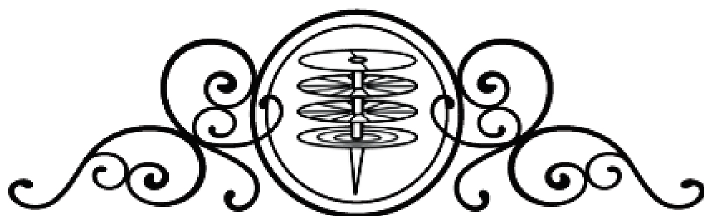
Atlanta, GEORGIA, U.S.A
+1 (404) 551 3297, +1 (470) 658 7635

www.thraithashakam.org

विषय सूचि

विषय सूचि

क्रम संख्या - विषय - पेज नं



इंदू सांप्रदाय

सांप्रदाय का शब्द सिर्फ एक हिंदू मत में ही सुनायी दे रहा हैं। एक मंदिर को जाकर पूजाएँ करके कुछ लोग कहते हैं कि यही हमारा सांप्रदाय है। और कुछ लोग ऐसे भी हैं कि एक शादि करके कहते हैं कि हमने सांप्रदाय के मुताबिक शादि की हैं। उसी तरह एक जाति के लोग एक ही तरह के कपडे पहनते हुये कहते हैं कि यहीं हमारा सांप्रदाय हैं। और भी खुले तरीके से बयान करें तो इंदू मत में एक एक जाति (वर्ण) के लोग एक एक तरीके पर चलते हुये कह रहे हैं कि हमारा वर्ण का सांप्रदाय यही हैं। इसतरह सांप्रदाय कहलानेवाला शब्द बहुत जगहों पर सुनायी देने के बावजूद हकीकत में यह कोई नहीं जानता कि सांप्रदाय का क्या मतलब हैं? इंदूमत हिंदूमत की तरह बदलगया हुआ इस ज़माने में अपने आप को हिंदू कहते हुये वह मनुष्य जिसे अपने मत का निजस्वरूप (असलियत) तक नहीं मालूम,सांप्रदाय क्या चीज़ हैं इसका भी ज्ञान उसे न होने के कारण, अगर कोई भी उससे कहता हैं कि यह सांप्रदाय हैं या फलाना काम सांप्रदाय है तो फौरन बिना सोचे समझे उनकी बात पर यकीन करके उसीको (यानि दूसरे लोगों ने जिसे सांप्रदाय कहा था उस कार्य को ही) सांप्रदाय समझ रहा हैं लेकिन उस मामले में ईश्वर ने खुद को दी हुयी अखल का इस्तेमाल बिलकुल भी नहीं कररहा है। कुछ लोग ऐसा समझ रहे हैं कि अगर एक मनुष्य मरजाता हैं तो उसके मृतदेह को ज़मीन में दफनाने के काम को भी सांप्रदाय समझ रहा हैं। और एक प्रॉंत में कुछ लोग ऐसा समझ रहे हैं कि मृतदेह को लकडियों से जलाना भी सांप्रदाय ही है। कुछ लोग इसतरह कहते हैं कि सांप्रदायों के बारे में हम तो नहीं जानते, लेकिन जो लोग इसका ज्ञान रखते हैं जैसे वे कहते हैं वैसा सुनना ही अच्छी बात हैं। इसतरह जैसे वे कहते हैं वैसे ब्लैन्डली (अंधेपन के साथ) सुनने पर

भी जब एक ही काम दो क़िस्म से रहता हैं तो फिर उन दोनों में से कौनसा तरीके को सांप्रदाय कहना चाहिये? इसतरह सवाल ज़रुर उठेगा। वे लोग जो अखलमंद होते हैं इसतरह के लोपभूयिष्ट यानि दो तरह के बातों को देखकर कुछ लोग कहते हैं कि यह सब अंधविश्वास हैं, और वे लोग असली सत्य को नहीं ढूँढते ऊपर से अपने आप को हम हेतुवादियाँ हैं कहते हुये सत्य से दूर हो रहे हैं। ऐसी सूरत में वे लोग जो अपने आप को सत्यवाद (आस्तिकवाद) कहते हैं वे किसी भी काम को पकडके सांप्रदाय कहसकते हैं, जो लोग अपने आप को हेतुवादियाँ कहते हैं वे हर सांप्रदायबद्धवाली काम को पकड कर अंधविश्वास कह सकते हैं? इन दोनों के बीच सांप्रदाय (रिवाजें) तो कब का गायब होगये। इस ज़माने में सत्यवाद के नाम पर असत्यवाद मौजूद हैं, हेतुवादियों के नाम से नास्तिवादियाँ मौजूद हैं तो आज जो भी आचरण या अमल किया जा रहा हैं वह हर काम आस्तिकवादियों के लिये सांप्रदाय है तो, वह हर काम जिसका विवरण(जानकारी) नहीं मालूम उन कामों को नास्तिवाद अंधविश्वास समझ रहे हैं।

ऐसी हालत में इधर आस्तिकवादियों केलिये उधर नास्तिवादियों के लिये सांप्रदाय (रिवाजें) क्या चीज़ हैं यह बात मालूम होना बहुत ज़रुरी हैं। जब फूल अलग अलग से रहते हैं तो उन्हे हार का नाम नहीं दिया जाता, जब उन फूलों को एक धागे (सूत्र) से बाँधा जाता हैं तो एक तरीके के बराबर, एक लैन में तय्यार होजाने से उसे हार कह रहे हैं। ऐसाही जिसकी जैसी मरज़ी यानि अपने पसंद के मुताबिक करनेवाले कामों को सांप्रदाय (रिवाज़) का नाम या सांप्रदाय का शब्द लागु नहीं होता। शास्त्र कहलाने वाले सूत्र से जब एक काम जोडा जाता हैं या बाँधा जाता हैं तो एक ही मतलब के साथ कहीं भी हो एक ही तरीखे (पद्धती) से रहनेवाले काम को सांप्रदाय

कह रहे हैं। जिसतरह फूल धागे से बाँधे नहीं गये तो हार नहीं होता, उसीतरह एक इन्च मोटेवाले रस्सी में आधा आधा अगर कम करते गये तो छोटा सैज़ धागा होता हैं। हम एक इंच में छटवीं हिस्से (सिक्सत पार्ट) के दलवाली धागे से यानि सुई जितनी मोटी रहती है उतने मोटे धागे से फूल को हार जैसा बाँध सकते हैं। ऐसा ही ब्रह्मविद्याशास्त्र जो शास्त्रों में छटवी हैं, पाँच स्थानों को पार करके छटवी स्थान में हैं, उस ब्रह्मविद्याशास्त्र से जब एक कार्य को निर्देश करते हैं तब ही वह काम सांप्रदाय होता हैं। जिसतरह बगैर सूत्रबद्ध के फूल हार नहीं होता, उसी तरह वे काम जिसमें ब्रह्मविद्याशास्त्र बद्धता नहीं होता है वे काम सांप्रदाय नहीं होते। जैसे हार में धागा छुपा हुआ हैं वैसे कार्य में भाव बसा हुआ रहनी चाहिये। ऐसा हार नहीं रहता जिसमें धागा नहीं टूटता हो, उसी तरह ऐसा सांप्रदाय नहीं रहता जिसमें भाव (अंतरार्थ) खराब न होता हो। अब कुछ लोग एक सवाल पूछ सकते हैं। कुछ लोग शादि के कार्य में तलंबर डालना, अक्षिंत डालना वगैरा कामों को सांप्रदाय नाम रखके कर रहे हैं ना! तो फिर आप यह कैसे कह रहे हैं कि आज के ज़माने के लोगों को सांप्रदाय क्या हैं यह बात बिलकुल भी नहीं मालूम। इस सवाल पर हमारा जवाब यह है कि! बैल के गले में फूल का हार रहने के बावजूद उस बैल को यह तक नहीं मालूम कि वह फूल का हार हैं या नहीं और ना हि वह उस फूल के हार की अहमियत जानती हैं। चाहे उसके गले में फूल का हार हो, या रस्सी हो उसकेलिये तो दो भी एक ही चीज़ है। ऐसा ही वह अज्ञानि जिसे कार्य का विवरण नहीं मालूम उस अज्ञानि के काम में सांप्रदाय छुप कर रहने पर भी उसको यह तक नहीं मालूम कि यह सांप्रदाय है और ना हि उस काम की अहमियत जानता है। उसके काम में सांप्रदाय रहे या असांप्रदाय रहें दोनों एक ही बात है। शादि के कार्य में जब शादि करनेवालों को

हो, करवालेने वाले को हो, देखनेवाले को हो जब उसका अर्थ या मतलब मालूम नहीं हैं तो वह साँप्रदाय होने पर भी रहस्य ही हैं (ऐसा रहस्य जिसका असली विवरण किसीको नहीं मालूम), इसीलिये वह साधारण कामों में से एक काम हो रहा हैं लेकिन, किसी के लिये भी साँप्रदाय नहीं हुआ। रीसेन्टली एक शादि हुयी थी। टीवी वाले भी उन दृश्यों को टीवी पर दिखाये थे। वहाँ के पुरोहितों ने कहा कि शादि में हर कार्य को हमने साँप्रदाय के साथ किया हैं यह बात हमने टीवी पर सुना था। वे लोग ज़बान से इसतरह कह रहे हैं लेकिन कह सकते हैं कि वहाँ के पुरोहितों को हो, वधूवरों (दुल्हा दुल्हन) को हो, शादि पर आये हुये बंधु मित्रों को हो साँप्रदाय बात का मतलब तक वे नहीं जानते। वहाँ उन्होने जो काम किये उनमें से कम से कम एक काम का मतलब वे नहीं जानते। वह काम व्यर्थ हैं जिसका मतलब नहीं जानते। यानि मतलब न जानते हुये काम करना बेकार हैं, इसलिये मालूम होगया कि वह बिलकुल भी साँप्रदाय ही नहीं हैं। कुछ लोग रिजिस्टर आफिस को जाकर शोहर बीवी को, बीवी को शोहर रिजिस्टर करवाले रहे हैं। अगर इसीतरह कुछ वक्त गुज़र जाता है तो आनेवाले ज़माने के लोगों को यह तक नहीं मालूम होगा कि आख़िर साँप्रदाय नाम की एक चीज़ हैं। ऐसी आफत आये बगैर हर मनुष्य को साँप्रदाय के बारे में शास्त्रबद्ध के साथ, सूत्रबद्ध के साथ जानना बहुत ही ज़रूरी हैं। चलिये अब आख़िर यह साँप्रदाय है क्या? यह बात उसीसे पूछके मालूम करते हैं जिसे कहनी चाहिये (यानि उससे पूछते हैं जो साँप्रदाय का असली रहस्य जानता हैं)

हर दिन मनुष्य अपने जीवन गमन में कुछ न कुछ काम तो करही रहा है हर काम के पीछे कुछ न कुछ आदय (इनकम या पैसा) रहता हैं। चाहे आदाय किसी भी रुप में क्यों न रहे वह तो दिखने के लायक होती हैं। धन हो, धान्य हो,सोना हो चाहे वह किसी

भी रुप में रहें उसे दिखनेवाली फलित की तरह ही हिसाब किया जाता हैं। हम आदाय उसे कह रहे हैं जो कार्य करने के बाद उसके प्रतिफल में आता (दिखता) हैं। खास करके गौर करनेवाली बात यह हैं कि हर कार्य (काम) में जिसतरह दिखनेवाला आदाय (फलित) हैं उसी तरह नज़र न आनेवाला फलित भी एक है। उसीको **कर्मफलित** कह रहे हैं। दिखनेवाली फलित **धन, धान्य, सोना, वस्तुवाहन** के रुप में कई तरीकों से हैं तो, नज़र न आनेवाली फलित सिर्फ दो क़िस्म से ही हैं। उसमें एक **पाप,** दूसरा **पुण्य** हैं। इसके मुताबिक यह मालूम हो रहा हैं कि काम में आनेवाले आदाय दो प्रकार के होते हैं उनमें से एक **दिखने वाला आदाय,** दूसरा **नज़र न आनेवाले आदाय।** और यह भी मालूम हो रहा हैं कि दिखनेवाले आदाय बहुत क़िस्म से हैं तो, नज़र न आनेवाले आदाय सिर्फ दो क़िस्म से ही हैं। मानव के जीवन में दिखने वाले आदाय से भी नज़र न आनेवाला आदाय ही मुख्य हैं। दिखने वाला आदाय उस जीवन में उपयोग होसकता हैं या उपयोग नहीं भी हो सकता हैं। नज़र न आनेवाला आदाय बाद के जन्मों तक भी आकर ज़रुर उस व्यक्ति के लिये ही इस्तेमाल हो रही है जिसने उसको कमाया हो। चाहे कितने भी तरीकों से देखलें दिखनेवाले आदाय से भी नज़र न आनेवाला आदाय ही मुख्य हैं। इसीलिये वह कर्मफलित जो काम करने के बाद आ रहा है उसे एक विशेषता देकर, **प्र शब्द को जोडकर प्र + आदाय = प्रदाय कहा हैं। (प्र शब्द का अर्थ विशेषता हैं) इसके मुताबिक आदाय यानि दिखनेवाली धन, सोना, वस्तु, वाहन है तो प्रदाय यानि नज़र न आनेवाली पाप,पुण्य हैं।**

जो धन प्रस्तुत जीवन(जीवित) में इस्तेमाल होरही है वह **आदाय** है तो, बाद वाली जिंदगी में इस्तेमाल होनेवाली धन **प्रदाय** है

कहकर मालूम हो रहा हैं। आदय हो, प्रदाय हो मनुष्य भुगतनेवाले (या अनुभव करनेवाले) चीज़ें ही हैं। एक मनुष्य जो पैसा कमाता हैं उनमें अनुभव करने वाले चीज़ें ही नहीं बल्कि जिसका अनुभव नहीं किया वे चीज़ें भी मौजूद हैं। इसके मुताबिक आदायों (इनकम्) को तीन प्रकार विभजन कर सकते हैं। भुगतनेवाले आदाय (पाप, पुण्य इसतरह) दो प्रकार से हैं तो, जिस आदाय का अनुभव नहीं किया वह एक प्रकार का आदाय हैं। पूरे तीन प्रकार के आदाय हैं। तीसरी प्रकार वाली आदाय भी नज़र न आनेवाली आदाय ही है फिर भी, वह आदाय भी कर्म की तरह सर में पहुंचती हैं फिर भी, वह आदाय कर्म से व्यतिरेक रहते हुये कर्म को नाश करती हैं। यह तीसरे आदाय को ही **दैवज्ञान** कह रहे हैं। पहलेवाली से दूसरी वाली श्रेष्ट हैं तो, दूसरीवाली से भी तीसरी वाली और भी श्रेष्ट हैं। **धन से भी तक़दीर (कर्म) बडी हैं। विधि से भी ज्ञान बडी हैं। हिंदी भाषा में संस्कृत भाषा में "स" यानि भक्ति, "ज्ञान" का अर्थ हैं। संत को भक्त, ज्ञानियाँ भी कहते हैं। अच्छाई को, अहमियत को, दैविक अर्थ को बताने वाले "स" "प्र" शब्दों को दैवज्ञान को जोडकर स + प्र + आदाय = साँप्रदाय कहा हैं।** जब एक काम में नज़र न आनेवाली आदाय यानि दैवज्ञान बसीहुयी होतो, उस काम में अर्थवंतवाली आदाय जब हमारे सर में चढता हैं तो वह मामूली आदाय नहीं होता, ऐसा ही कर्म की तरह प्रदाय भी नहीं होता, वह साँप्रदाय हो रहा हैं जो कर्म से भी बढकर हैं। एक काम में दैवज्ञान बस कर (छुप कर) रहने के बावजूद भी अगर उस काम में का विवरण जब हमारे सर में नहीं चढा (यानि हमें अगर समझ में नहीं आया) तो वह साँप्रदाय की तरह हिसाब नहीं किया जाता। जब एक काम में दैवज्ञान से जुडाहुआ अर्थ बसा हुआ होता है तो उस काम को दैवज्ञानवाली अर्थ के साथ जानकर करेंगें तो वह साँप्रदाय बनता हैं।

ज्योतिश्य शास्त्र पाँचवी शास्त्र है, उस ज्योतिश्य शास्त्र के प्रकार दैवज्ञान का अधिपति चाँद हैं। इसलिये ज्ञान चिह्न की तरह चंद्र को ही दिखा रहे हैं। जिस योगी का कर्मशेष बाकी हैं वह अगर उस जनम में मोक्ष नहीं पाया तो दूसरे जनम में चंद्रतेजस के साथ पैदा होगा कह कर भगवद्गीता अक्षर परब्रह्मयोग २५ श्लोक में **चाँद्रमसम ज्योतिर्योगि प्राप्यनिवर्तते** कह कर स्वयं भगवान ने ही कहा हैं। इसके मुताबिक चंद्रग्रह ज्ञानचिह्न हैं यह बात जानकर दैवज्ञान को रखनेवाले मनुष्य को चाँद से कम्पार करके इंदू कहा करते थे। जिस काम में दैवज्ञान रहता हैं उस काम को इंदू साँप्रदाय भी कहा करते थे। **चाहे कौनसे भी मत में क्यों न हो दैवज्ञान रखनेवाला व्यक्ति इंदू ही होता है,दैवज्ञान बसाहुआ हर काम भी इंदूसांप्रदाय ही होता है।** हमारी रचनाओं में से **देवालय रहस्य** पुस्तक में हमने पहले ही बतादिया कि चंद्रबिंब ज्ञान की निशानि हैं तो, नक्षत्र मोक्ष (ईश्वर) की निशानि हैं। बढता हुआ चाँद को सर पर सखलिया हुआ शंकर हमें यह मेसेज दिखाये जैसा लग रहा हैं कि मेरे सर में दैवज्ञान बढ़रहा हैं। क्योंकि शंकर चाँद का विवरण पूरे तरीके से जानता हैं इसलिये वह इंदू है, उसने सर पर अर्थ को जानकर चाँद को रखलेने का काम किया था इसलिये यह कहसकते हैं कि उसने इंदूसाँप्रदाय को आचरण करके दिखाया। जब एक चाँद को रखलिया हुआ शंकर को ही हम इंदू कहें तो फिर उन्हे क्या कहना चाहिये जिन्होने चाँद और सितारे को रखलिये। इंदू ही कहना चाहिये। अगर वे लोग उस काम के मतलब की अहमियत जानकर करें तो उसे इंदू साँप्रदाय ही कहना चाहिये। जिस काम में ज्ञान का विवरण नहीं हैं वह काम साँप्रदाय नहीं होता। आज के दिन दूसरे मतों में भी पैरों में छल्ले, चाँद, सितारों के पताक (झंडे) रह कर वहाँ भी इंदू साँप्रदाय के निशानियाँ दिख रहे हैं। आदिवार छुट्टी का दिन

हैं कृतयुग से आचरण में आया हुआ स्वच्छ इंदूसाँप्रदाय हैं। आज के दिनों में भी इस देश में, विदेशों में हो आदिवार छुट्टी के दिन जैसा ही रहते हुये इसतरह चिढा रही हैं कि तुम्हारे बुध्दियों को मेरी अहमियत के बारे में मालूम न होने के बावजूद भी मैं सजीव से ही हूँ,देखिये। और ऐसा सवाल भी कर रही हैं कि हमारा मत अलग हैं कहने वालों को छोडकर इंदू देश में पैदा होकर भी आक़िर हिंदू बनगये हुये तुमलोग भी अगर मुझे नहीं पहचाने तो तुमलोगों को क्या कहना चाहिये?

गीता में खुद भगवान ने कहा कि धर्मों का ग्लानि (कालुष्य) होसकता हैं मगर नाश नहीं होसकता। इसीलिये हमलोगों को मालूम न होने पर भी इंदू साँप्रदाय आज जैसे के वैसे ही बगैर नाश हुये हमारे बीच ही मौजूद है। इंदू साँप्रदाय विदेशो में भी नज़र आ रहे हैं। इसके मुताबिक यह मालूम हो रहा है कि पूर्व में इंदू साँप्रदाय विश्वव्याप्त होकर रहा करते थे। अगर आज उनकी पूरी जानकारी मालूम होजाये तो देशविदेशों में रहनेवाले सब इंदू (ज्ञानियाँ) ही होजायेंगे। उस दिन पूरा विश्व इंदुत्व से भर जायेगा । हम यह बता रहे हैं कि अगर साँप्रदायों की जानकारी मालूम नहीं होगा तो कम से कम देश भी इंदुत्व (ज्ञान से भरा हुआ देश) नहीं बनेगा। इसलिये कम से कम थोडे लोग तो हमारे बीच के साँप्रदायों को जानकर पहले इस देश को इंदुत्व बनासके तो बाद में विश्वव्याप्त वह खुद ब खुद बनजायेगा। उसके बगैर हम अपने आप को हिंदू कहें या विश्व हिंदू कहें तो भी कुछ फायिदा नहीं हैं। हम पहले इंदू के जैसा बनकर दूसरों को तुम भी इंदू ही हो कह कर याद दिलाये तो अच्छा हैं। हम इंदूओं के जैसा बदलने केलिये हमारे बीच पूर्व काल से बिना मतलब के जो आचरण मौजूद हैं उनके बारे में जानने की कोशीश करते हैं। उन आचरण में जो अर्थ है उसका विवरण देखते हैं। **हर एक जन**

दिखनेवाली आदाय से भी नज़र न आनेवाले आदाय यानि साँप्रदाय को अहमियत दीजिये। इंदू की तरह बनने केलिये यह मालूम करने की कोशीश कीजिये कि साँप्रदाय क्या है।



शिशु को सूप में रखना

मनुष्य का जीवन(जीवित) पैदाइश से शुरु हो रही हैं। पैदाइश से शुरुहुयी जीवित मरण (मौत) से अंत्य हो रही हैं। पैदाइश से शुरुहुयी प्रारब्द कर्म मरण से उसी जनम में खत्म होजा रही हैं। पैदाइश, मरण और उन दोनों की बीच की जिंदगी में इंदूधर्म मानव से जुडे हुये हैं। पहले उस विषय को देखते हैं जो पैदाइश के वक्त होरहा है। शिशु पैदा होने के बाद प्राण (जान) आते ही, नाभि की रस्सी को काटने से पहले ही, सूप में शिशु को सुलाने की आदत पूर्व में रहती थी। हो सकता हैं कि आज कहीं पे भी हो एक प्रतिशत सूप में सुलाने की साँप्रदाय मौजूद हो लेकिन यह कहसकते हैं कि ९९ प्रतिशत बिलकुल भी नहीं हैं। कहीं पर भी नज़र नहीं आता कि यह साँप्रदाय आज मौजूद है लेकिन पूर्व में सब लोग पैदा हुआ शिशु को सूप में रखा करते थे। इसतरह सुलाने की वजह से देखनेवालों को थोडा ज्ञान समझमें आये जैसा किये। पूर्व में सब उस काम का मतलब जानकर ज़रुर उसीतरह सुलाया करते थे। सूप में ही नाभि की रस्सी को काटते थे। नाभि की रस्सी को काटने के बाद ही सूप में से सैड को निकालते थे। उसदिन उनके इस साँप्रदाय का क्या मतलब हैं यह जानने के लिये उस ज़माने को जाकर देखने से यह मालूम हो रहा हैं कि

पूर्व में सब लोग उनके अपने अपने घरों में सूप इस्तेमाल किया करते थे। आज के ज़माने में कुछ लोगों को यह तक नहीं

मालूम कि सूप का क्या मतलब है। आज भी छोटे छोटे गाँवों में धान्य को साफ करने केलिये सूप का इस्तेमाल किया करते हैं। जिस आहार धान्य को हम खाते हैं उन्हे पहले सूप में डालकर धान्य में का भूसा वगैरा जानेकेलिये सूप से पछडने (उछालना या साफ करने) के बाद ही पकवान केलिये इस्तेमाल करना आज भी वहाँ वहाँ मौजूद हैं। हम खाकर अनुभव करनेवाले धान्य आख़िर सूप से ही पकवान की बरतन में जा रहे हैं। हम जीने के लिये जो आहार धान्य चाहिये वह सूप से ही आ रहे हैं। ऐसा ही प्रपंच में जीवित (ज़िदगी) चलानेकेलिये जो कर्म चाहिये वे कर्मनिलय से ही आ रहे हैं। एक जीवित (जीवन) चलने केलिये कर्मों को पहुँचानेवाली प्रारब्द निलय को उस सूप से कम्पार किये जो हमको आहार पहुँचाती है, शिशु को सूप में इसलिये सुलाते थे कि लोगों को यह बात समझमें आजाये कि तुम प्रारब्द कर्म में दाखिल होकर हो। नाभि की रस्सी को गरदन से लपेट कर सूप में सुलाया करते थे ताकि उससे यह मालूम होजाये कि प्रारब्द कर्म में गुण कहलानेवाले पाश (रस्सी) से तुम बाँधे जाकर हो। जब के ज़माने के लोग ऐसा करते थे कि यह दृष्य को वहाँ के सब लोग देखें और जिन लोगों को इसका आध्यात्मिक मतलब नहीं मालूम उनको इस तरीके का विवरण देकर फिर शिशु के नाभि की रस्सी को काट के शिशु को सूप में से उठाकर सैड में सुलाया करते थे।

शरीर के गोल लपटलिया हुआ नाभि की रस्सी को चाखू से काट कर सूप से शिशु को निकाल कर बाहर रख रहे हैं ताकि इससे लोगों को यह ज्ञान हासिल हो कि गुण कहलानेवाली पाश (रस्सी) को ज्ञान कहलानेवाली चाखू से काटने पर ही कर्मचय से बाहर पडकर मुक्ति पासकते हो। मनुष्य के पैदाइश में ही इतनी महत्व ज्ञान को बतानेवाली आचरण को रखे हुये बडों को ज़रुर धन्यवाद कहना ही पडेगा। सूप को कर्मकुंडली,अंतडी को गुण पाश

की तरह कम्पार करके ज्ञान खड्ग (ज्ञान की तलवार) से गुणों को काट कर कर्म से बाहर पडे जैसा नाभि की रस्सी को काट कर सूप से बाहर निकालना (क्या तुमलोगों को ऐसा नहीं लगता कि) यह सब महत्व अर्थ के साथ जुडी हुयी साँप्रदाय हैं। मानव के पैदाइश में ही सूप को कर्म कह कर, अंतडी को बंधन कह कर बताके यह भी बतादिये कि अंतडी कहलानेवाले बंधन को काटना चाहिये, सूप कहलानेवाले कर्म से बाहर पडना चाहिये।

आज भी कुछ लोग इसतरह कहना हम सुनते ही रहते हैं कि कहीं भी हो कोई भी हो जब (एक व्यक्ति) दुख की अनुभव करता हैं तो उसको देखकर यह सब कुछ जब सूप में गिरा था उस वक्त लिख्खी गयी लिख्खत हैं। यह कहनेकेलिये बैबिल में भी एक वाक्य को इस्तेमाल किये कि ईसा प्रभु बडा (महत्ववाला) हैं उनके कर्म को खुद उन्होने ही फैसला करलिया। बैबिल का वह वाक्य **उनका सूप उनके हाथ में ही हैं** कहा हैं। हमने यह बयान करलिया ना कि **इंदू का मतलब ज्ञान हैं!** इंदू साँप्रदाय का मतलब,मानव को ईश्वर के तरफ जाने की मार्ग की सूचना देनेवाली। इसीलिये यह कहसकते हैं कि मनुष्य जब पैदा होता हैं तब ही कर्मचय को, गुणों के बंधन को, उन पर जीत हासिल करने की ज्ञान को, मुक्ति पाने को बतानेवाली आचरण की निशानि यानि शिशु को सूप में रखने का साँप्रदाय तखरीबन नाश होगया हैं। फौरन सब मत के लोग सूप के साँप्रदाय पर चलें, जिन को सूप का साँप्रदाय नहीं मालूम उन्हे बतायें ताकि बहुत ही महत्ववाली साँप्रदाय पूरे तरीके से नाश न हो, और हम यह कह रहे है कि जब इसतरह करते हैं तब ही इंदू साँप्रदायों को कम से कम थोडे हद तक तो आचरण करके उनकी रक्षा करलिये जैसा होगा। बिना मतलब के पूजायें, बेकार खर्चे छोडकर तुम्हारे दृष्टी को इंदू साँप्रदायों की तरफ मोडिये।

झूले में रखना

हमने यह बयान करलिया ना कि शिशु जनम लेने के बाद पहले सूप में रखकर, शिशु को साँस आने के बाद नाभि की रस्सी को काटकर सूप से बाहर निकालना साँप्रदाय हैं। उसीतरह एक अच्छादिन देखकर डोलारोहन करवाना भी साँप्रदाय की तरह रहा करता था। डोलारोहन यानि शिशु को झूले में डालना। कुछ लोग ऐसा पूछ सकते हैं कि पैदा हुआ बच्चे को झूले में रखना भी आचार ही हैं क्या! इस ज़माने में अगर बच्चा रोता हैं तो उसके रोने को गवाने केलिये या वह सुख से सोने केलिये बच्चे को झूले में सुलाना हो रहा हैं। पहले सुलाना अर्थ के साथ जुडाहुआ काम की तरह पूर्व में रहा करता था। बाद में सुलाना किसी और काम केलिये भी होसकता हैं। मनुष्य के जीवित में साँप्रदाय के साथ जुडा हुआ पहला घट्ट (इङ्घज्ञथद ख्ङुञथठ) सूप में ही अंतडी को काटना है तो,झूले में पहले सुलाना दूसरा साँप्रदाय घट्ट (ग्ठट्टतत्ङ्ग ख्ङुञथठ) की तरह समझते थे।

सूप उस विषय को बताती है जो कर्म की आवरण में रहती है तो,नाभि की रस्सी गुणों की विषय को बताती हैं तो, अंतडी के बंधन को काटना मतलब ज्ञान की तलवार से गुणों पर जीत हासिल करना, सूप से बाहर गिरना ही मुक्ति को पाना इसतरह हमारे बडों ने हमे दिखाया तो अब हम यह देखते हैं कि उन्होने झूले में सुलाने की दूसरी साँप्रदाय के बारे में क्या बताये होंगे। मानव की जिंदगी जनम से शुरु होकर, जीवन का अंत्य मुक्ति से खत्म हो रहा हैं। जब तक मौत से जगह (स्थल) बदलने पर भी जीवन तो लैन से फिर से शुरु हो ही रहा हैं। इसीलिये एक पैदाइश से शुरु हुयी जिंदगी चाहे कितने भी शरीर क्यों न बदले बिना रुकावट के, आखिर में सिर्फ एक मुक्ति से खत्म हो रही हैं। यह कहसकते हैं कि जो कुछ

जनम और मुक्ति के बीच मौजूद है वह सब जीवित (ज़िंदगी) ही हैं। जब से जीव पैदा हुआ तब से लेकर खत्म होजाने तक जो जीवित हैं उसमें सुख, दुख तो दोनों आते जाते रहते हैं। दुख मनुष्य को एक तरह का अनुभव देते हैं तो, सुख उसके व्यतिरिक्त दिशा में अनुभव देते हैं। यह बात तो सब जानते ही हैं कि सुख, दुख पूरब और पश्चिम की तरह एक दूसरे के व्यतिरिक्त होते हैं। जब तक जीव को मोक्ष नहीं मिलता तब तक उसे सुख दुख पाना ही पडेगा, आज से तुम्हारि ज़िदगी शुरु हुयी हैं, आज से सुख दुखों के बीच तुम्हे झुलना ही पडेगा, इसतरह जीवित में (सुख दुखों के) बीच झुलने को झूले की रुप में दिखाये। बडों ने डोलारोहन को इसलिये रख्खा ताकि देखने वालों को यह समझमें आजाये कि **हमेशा सुख दुखों में, अच्छे बुरों में, पाप पुण्यों में झुलते रहना ही जीवित हैं।** झूला एक तरफ झुलके वहाँ गम्य न मिलने की वजह से दूसरे तरफ झुलता रहता हैं। दिशा,व्यतिरेक दिशाओं में झुलनेवाला ही जीवित हैं। जीनेवाला पूरा जीवित काल इसीतरह ही रहता हैं यह बात बताने केलिये बच्चे को झूले में रख के झुलाके दिखाने के कार्यक्रम को साँप्रदाय की तरह बडों ने रखा हैं। साँप्रदाय वे हैं जो ज्ञान के साथ जुडे हुये मतलब को बताते हैं। इसलिये अगर मनुष्य दूसरे साँप्रदाय यानि झूला झुलने को समझ करलिये तो यह मालूम होजायेगा कि असल में जीवित में क्या हैं (और क्या नहीं)।

सुख दुखों के बीच झुलना ही जिंदगी का मतलब है उसके सिवा और कुछ नहीं हैं, यह बताने केलिये सबको बुलाकर,सबके सामने शिशु को झूले में रख कर झुलाया करते थे। आज भी कहीं पे भी नाम के वास्ते डोलारोहण का दिन रहने पर भी वह मतलब के साथ जुडा हुआ नहीं हैं। जिनके पास पैसा हैं वे अपने आप को जताने के लिये उनके संतान को डोलारोहन कर रहे हैं मगर साँप्रदाय के

पद्धती से नहीं कर रहे हैं। पूर्व में राजा से लेकर गरीब तक यह साँप्रदाय को विधी से अर्थसहित से किया करते थे। इसलिये पूर्व में सब आध्यात्मिक चिंता ही करते थे। लेकिन आज साँप्रदाय नहीं मालूम इसलिये आध्यात्मिक चिंता हो, पाप पुण्य का डर हो प्रजाओं में नहीं हैं। नये नये मंदिर गोपुर बडते जा रहे हैं उसके बावजूद भी, कई स्वामीजियाँ पैदा हो रहे हैं उसके बावजूद भी, वास्तव में मानव को जो दैवज्ञान चाहिये वह नहीं मिल रहा हैं। दैवज्ञान युक्त साँप्रदाय जो अनेक संख्या में हैं वे सब मिट्टी में मिलजा रहे हैं। उपन्यासों में कई स्वामीजियाँ मनुष्यों से महान बोल कर कहलवाये जा रहे हैं लेकिन पूर्व काल के ज्ञान को नहीं बता पा रहे हैं। सौ, दो सौ संवत्सरों के नीचे जो लोग पैदा हुये वे भी देवताओं की तरह तय्यार हो रहे हैं तो, योगो में भी कई नाम रखे गये कई नये विधान आ रहे हैं होने से, मनुष्य को यह नहीं मालूम हो रहा हैं कि अगर हम जाये तो भी किसतरफ जाये। इस नेपथ्य में पूर्वकाल की ज्ञान को, पूर्वकाल में बडों ने बताये हुये साँप्रदायों को मनुष्य भूल गया हैं। कम से कम अबसे तो हम लोग नये देवताओं को, नये योग ध्यान को छोडकर असली दैवज्ञान को जानने की कोशीश करते हैं।



उपनयन

नयन का मतलब आँख हैं। मनुष्य को दो आँखे हैं। दोनों को भी नयन ही कहते हैं। तो एक को भी उपनयन नहीं कहते। उपनयन भी नज़र या निगाह वाली आँख ही है मगर वह हमारे चहरे पर रहनेवाले दो आँखों जैसी नहीं हैं। **उप** का मतलब दूसरा कह कर समझलेना चाहिये। दोनों आँखों से देखनेवाले पूरे विषय प्रपंच के विषय ही हैं, दोनों आँखों से देखे हुये विषयों को ही मन खयाल

रखलेकर वापिस उनको दिखाति रहती हैं। मानलीजिये कि कल के दिन आप ने एक फिल्म या सिनेमा देखे थे। उस सिनेमा में आँखों के द्वारा देखे हुये कुछ दृष्य मन को छू जाते हैं दूसरे दिन घर में बैठकर रहने पर भी सिनेमा याद आते ही जो दृष्य देखे हैं वह आँखों के सामने दिखे जैसा ही लगता हैं। इसतरह दो आँखों के द्वारा देखे हुये विषय मनोज्ञप्ति के द्वारा वापिस दिखना भी हो रहा हैं। इसतरह देखा हुआ विषय हो, सुना हुआ विषय हो, खाया हुआ पदार्थ का स्वाद हो, वापिस मनोनेत्र के द्वारा देखने को तीसरे आँख से देखना कहते हैं। एक विषय जैसा देखा हैं वैसा ही याद आने को मनोदृष्टी से देखे जैसा बोललेते हैं। इसतरह आँखों के बिना ही पहले देखेहुये सिनेमा के दृष्य को देखने को तीसरी आँख से देखे जैसा, मनो नेत्र से देखे जैसा कहते हुये, उसीको कुछ लोग **सूक्ष्मदृष्टी** कहते हैं।

जैसे कुछ लोगों ने कहा कि आँखों से देखे हुये दृष्य को मनोनेत्र से देखना उपनयन से देखे जैसा नहीं है। स्थूल आँखों से देखे हुये विषय को वापिस मन के द्वारा देखने पर भी वह उपनयन की दृष्टी नहीं होती। मन उपनयन कहनेवाला नेत्र नहीं है। मन के द्वारा दिखाये गये विषय पहले आँखों से देखे गये विषय ही हैं इसलिये वे आँखों के दृष्टी के संबंधित विषय ही होते हैं। मनोनेत्र के द्वारा देखते हुये, आँखों से न देखने पर भी वह विषय आँखों से देखे जैसा ही हिसाब किया जा रहा हैं। मनोनेत्र को स्वयं दृष्टी नहीं हैं। आँख, कान, नाक, ज़बान, चमडे को जो इंद्रियशक्तियाँ हैं उनके द्वारा वापिस मन दिखा पा रही हैं। लेकिन वास्तव में मन को दिखाने की शक्ति नहीं हैं। अगर स्थूल आँखों को नज़र नहीं है और वे कोई भी दृष्य को नहीं देखसकने वाले हैं तो मन भी कुछ नहीं दिखासकती। ऐसा ही सब अवयवों से भी मन इसीतरह पेश आती हैं। इससे यह मालूम हो रहा हैं कि मन इंद्रियों के विषयों के सिवा दूसरे नहीं दिखासकती हैं, ऐसा दिखाने केलिये उसे स्वयं नज़र नहीं हैं।

क्योंकि मनोदृष्टी इंद्रिय दृष्टी जैसी ही है, मन को स्वयं आँख न रहने की वजह से मनो दृष्टी को तीसरी नज़र कहसकते है। लेकिन मनोनेत्र को उपनयन नहीं कहसकते। मनोदृष्टी बडों से भी छोटे बच्चों को ही ज़्यादा रहती हैं। मिसाल के तौर पर मानलीजिये कि पूरा कुटुंब (परिवार) एक सिनेमा देखें थे। सिनेमा में छोटे दृष्य से शुरु होकर सारे दृष्य छोटे बच्चों को ज़्यादा याद आते हैं। जैसे उनको याद आता है वैसे बडों को याद नहीं आते। यही है बडों के और छोटों के मनोदृष्टी में रहनेवाला फरख। मनोदृष्टी बच्चों को बचपन से ही रहता है। इसलिये कोई दूसरे लोग उनको मनोदृष्टी देने की ज़रुरत नहीं हैं। उपनयन अलग है, मनोनेत्र अलग हैं। इसलिये उपनयन सबकेलिये ज़रुरत हैं। मनोनेत्र तो पहले से ही मौजूद हैं इसलिये वह किसी को ज़रुरत नहीं हैं।

क्योंकि मनोनेत्र पहले से ही मौजूद हैं इसलिये यह समझमें आया कि वह क्या हैं उसका सामत्य क्या हैं? इसलिये अब यह जानने की कोशीश करते हैं कि उपनयन का क्या मतलब हैं। स्थूलवाले दो आँखों से हो, मनोनेत्र से हो उपनयन का कोई संबंध नहीं हैं। एक दो आँखों के द्वारा स्थूल दृष्यों को, तीसरी आँख के द्वारा सूक्ष्म से दबी हुयी स्थूल दृष्यों को देखसकते हैं। उपनयन उन विषयों को दिखा पा रही है जो प्रपंच इंद्रियों से संबंध नहीं रखते। पाँच ज्ञानेंद्रियों से संबंध रखनेवाले शब्द, रुप, रस, गंध, स्पर्श विषयों को दिखानेवाली नहीं है। हम जिस देश में निवास कर रहे हैं, उसके बारे में उपनयन नहीं बताती। उपनयन वह उपदेश को दिखाती हैं या बताती हैं जो देश है लेकिन देश नहीं है। उपनयन के द्वारा उपदेश मालूम होता है, उस उपदेश को ही आत्मस्थल कह रहे हैं। उपनयन के द्वारा आत्मा को अध्ययन करने की नज़र या निगाह पैदा होती है। उपनयन की नज़र आत्मा को दिखाती है। उसीको आत्मज्ञान दृष्टी कहते हैं। आत्मज्ञान

दृष्टी यानि उपनयन गुरु के ज़रिये ही पैदा होती है। जो लोग संपूर्ण ज्ञान रखते हैं उनसे एक शुभकाल में ज्ञानदृष्टी को पैदा करवालेने को हि उपनयन करवालेना कहते हैं। इंदूसाँप्रदायों में तीसरी साँप्रदाय यह है कि मनुष्य को थोडा उमर आने के बाद फौरन उपनयन करना चाहिये। मनुष्य को १२ संवत्सर आने के बाद बुद्धी को थोडा ताखत पहुँचती है। इसीलिये १२ संवत्सर के बाद कभी भी उपनयन करवासकते हैं। बडों ने कहा कि सबसे पहले आत्मज्ञान बोधा को गुरुमुख सिखाने से या बोधा करने से उस समय से ही उपनयन प्राप्त होता है। बाद में जब जब आत्म बोधायें मालूम करलेने से उपनयन को थोडा थोडा नज़र पैदा किये जैसा होता है। नयन को नज़र पैदा होने के बाद जिसे देखना चाहिये वह है उपदेश। इसलिये थोडा ज्ञान जानाहुआ व्यक्ति को उपदेश ज़रुरी है। दृष्य से पहले आँख ज़रुरत है। इसलिये उपदेश से पहले उपनयन ज़रुरी है। ज्ञान बोधाओं के द्वारा पहले उपनयन को पाना होगा।

मनुष्य को १२ साल की उमर आने के बाद पूर्वकाल में इंदू साँप्रदाय के प्रकार एक शुभमुहूर्त में सोमवार के दिन उपनयन पानेकेलिये इंतेज़ाम करलेते थे। जिस दिन उन्होने निर्णय करके रखलिया उसदिन सब बंधुमित्रों को आह्वान भेजकर बुलवालेकर, एक गुरु के ज़रिये सबसे पहले आत्मज्ञान बोधा करवाते थे। इसतरह पहली आत्मज्ञान बोधा से उस बालक को उपनयन पैदा हुआ कह कर समझते थे। यह सब उस जमाने का यानि पूर्व में रहनेवाला उपनयन का साँप्रदाय है तो, उसका रुप आज दूसरे क़िसम से बदल गया। कुछ लोग जंद्य पहनाकर, मंत्र बोलकर कह रहे हैं कि हमने उपनयन किया। कालगमन में जिसतरह धर्म अधर्म में बदलगये उसीतरह साँप्रदाय भी बदलगये। कुछ लोग तो ऐसा कहते हैं कि बचपन में ही ज्ञान की क्या ज़रुरत है? इसतरह वे साँप्रदाय को ही

भूलगये। कुछ लोग अपने बच्चों को ऐसे पाल रहे हैं कि उनको प्रपंच विद्या के सिवा परमात्मा की विद्या क्या है यह बिलकुल नहीं मालूम। पचास साल पूरा होने के बाद भी अगर उनको ज्ञान की याद दिलायें तो कहते हैं कि अब ही क्यों पूरे तरीके से बूढा होने के बाद देखते हैं इसतरह कहनेवाले भी बहुत हैं। कितना भी उमर क्यों न आये प्रपंच से किसी भी तरह का संबंध न रखने वाली उपनयन के बारे में न जानते हुये अज्ञान अंधकार में डूब रहे हैं। अंधापन जाकर ज्ञान दृष्टी को पाने केलिये पहले उपनयन कहनेवाली आँख की ज़रुरत है। बाद में श्रद्धा को पकड कर नज़र को रोशन करलेसकते हैं।

इंदू साँप्रदायों में मुख्य कार्य उपनयन का कार्य है। पूर्व में उपनयन किये बगैर अपने बच्चों को विवाह नहीं किया करते थे। वह पद्धती ब्राह्मण, वैश्य वगैरा जातियों में आज भी रहने पर भी कहसकते हैं कि थोडा साँप्रदाय तरीके से नहीं है। उपनयन का मूल आत्मज्ञान ही है इसलिये आत्मज्ञान को बताये बगैर मंत्र कहने पर भी जंद्य पहनाने पर भी वह कार्य उपनयन नहीं कहलाता। उपनयन करवाना इंदुओं का मुख्य आचार है। इंदुओं की तरह रहनेवाले सबलोग अपने बच्चों को जिन में थोडा बुद्धि ग्राहिता शक्ति बढा (उनको) साँप्रदाय बद्धवाली उपनयन करवाकर रहना चाहिये (यानि यह शासन है किसी भी सूरत में उपनयन करवाना ही पडेगा) बच्चों को दैवज्ञान सिखाने में ईसायी, इसलाम मत के लोग ही आगे है जैसा दिख रहा है। यह मालूम हो रहा हैं कि दैवज्ञान में सबसे पीछे हिंदू ही है। हिंदुओं में बडे उमर वाले भी ज्ञान से दूर रहते हुये अपने बच्चों को भी ज्ञान से दूर रख्खे हैं। देवालयों में जाकर मन्नतें या मुरादें माँगने के सिवा ज्ञान को हासिल करनेवाली एक आचरण भी उनमें नहीं रहा। मैं तो सच ही कह रहा हूँ लेकिन आप लोग इस बात से दुखित न होते हुये कम से कम अब से तो कुछ दिन रहकर खतम हो

जानेवाली इस जीवित पर नज़र न रखते हुये थोडा बहुत दैवज्ञान पर भी नज़र रखें। यही मैं चाहता हूँ। इंदू साँप्रदाय अपने अंदर दैवसाराँश को रखते हैं ऐसा आचरण करना चाहिये कि दूसरे लोगों को भी यह साँप्रदाय मालूम हो। **बिना सार वाला आहार, बिना दैवज्ञान वाली ज़िदगी निरर्थक है** बडों की इस बात को याद रखके ज्ञानवाली ज़िंदगी को गुज़ारना चाहिये।

उपदेश

मानव जीवित में अत्यंत श्रेष्ट साँप्रदाय उपदेश पाना ही है। जिन्होने उपनयन को पाया है उन्ही को ही ज़रुर (किसी भी हालत में हो) वह उपदेश को पाना चाहिये जो इंदू साँप्रदायों में चौथि साँप्रदाय है। अगर आँख नहीं है तो नज़र नहीं है उसीतरह अगर उपनयन नहीं है तो उपदेश भी नहीं रहता। उपदेश का मतलब हमारे सैड में रहनेवाला देश है, जिसे हमने अबतक नहीं देखा और नज़र न आनेवाला एक प्रदेश है। उपदेश को देखनेकेलिये पाने केलिये ज़रुर वह आँख होना चाहिये जिससे हम उसको देख सकें। उस आँख को ही उपनयन कहते है। उपनयन थोडा युक्त उमर आने के बाद पाकर, धीरे धीरे नज़र को बढालेकर एक हालत पर गुरु के ज़रिये उपदेश को देखना (पाना) होगा। आज के ज़माने में तो यह भी नहीं मालूम कि उपनयन क्या है, इसलिये उपदेश भी बिलकुल मालूम नहीं हो रहा हैं। कुछ लोग इसतरह कह सकते हैं कि हमने हमारे गुरु के पास उपदेश को पाया हैं। कुछ शिश्य ऐसा भी कहसकते हैं कि हमने हमारे गुरु के पास से उपदेश पाकर आये हैं। शिश्य कहनेवाले इसतरह कह रहे हैं तो जिन्होने गुरु के नाम को रखलिये वे सब कोई भी व्यक्ति हो, कभी भी हो उनके पास आये तो वे उपदेश

देनेकेलिये तय्यार हैं। ये पूरे पद्धतियाँ देख रहे हैं तो यह मालूम हो रहा है कि इंदू साँप्रदाय कितने कमज़ोर हालत को पहुँचे है मालूम होता हैं।

पूर्व के आचार के प्रकार उपनयन की तरह उपदेश को भी शादि से पहले ही पाना चाहिये। जिसे उपनयन नहीं रहता हैं उसे विवाह केलिये बच्ची को नहीं दिया करते थे। इस ज़माने में महम्मदीय मत में खुरान नहीं पढने वाली लडकी को जिसतरह निखा नहीं करलेते उसीतरह पूर्व में भी जिस व्यक्ति ने उपनयन उपदेश को नहीं पाया उसे अपनी लडकी को देनेवाले नहीं रहते थे। इसलिये जब युक्त उमर (जवानी उमर) आजाती हैं तो इंदूसाँप्रदायों में तीसरी वाली उपनयन, चौथिवाली उपदेश को युवक ज़रुर पाया करते थे। हमने यह मालूम किया कि गुरु के द्वारा सबसे पहली ज्ञान बोधा से उपनयन को पैदा करलेसकते हैं या तय्यार करले सकते हैं। बाद में यह मालूम करते हैं कि उपदेश को कैसे पाना हैं। उपनयन को पाने के बाद उसके श्रद्धा के मुताबिक वह उपदेश की योग्यता पा सकता हैं। श्रद्धा जितना ज्यादा होता है उतनी ही जल्दी से उपदेश को पासकते हैं। उपनयन को जिसतरह बुद्धि ग्रहिता शक्ति की ज़रुरत हैं उसीतरह उपदेश को श्रद्धा शक्ति की ज़रुरत हैं। बुद्धि ग्राह्यता से उपनयन को नज़र खूब दिखे जैसा करलेने के बाद उस नज़र के द्वारा जिसे देखना हैं वह उपदेश को ही हैं। इसलिये एक अनुकूल मंगलवार के दिन शुभमुहूरत देखलेके वह गुरु के ज़रिये उपदेश लिया करते थे जिसने ज्ञान बोधा करके उपनयन करवाया था। उपदेश यानि गुरु के ज़रिये ज्ञान शक्ति या ज्ञान की आग को दान में दिलवालेना। जबतक ज्ञानबोधा करके उपनयन को नज़र पैदा किया हुआ गुरु उपदेश के दिन अपने अंदर की ज्ञानाग्नि को शिश्य के अंदर दाखिल करता हैं। जबतक ज्ञान को दान किया हुआ गुरु

अब ज्ञानाग्नि को दान करने को ही निजउपदेश (असली उपदेश) कहते हैं।

कुछ लोग इसतरह पूछ सकते हैं कि जब आपने यह कहा कि उपनयन का मतलब प्रत्येक नज़र रखनेवाली है तो, जब उपदेश होता है तो शिश्य को क्या दिखेगा। उसका जवाब यह है कि! ऐसा कुछ नहीं है जो उपदेश पाये हुये समय में प्रत्येक से दिखता हो। **ज्ञाननेत्र आँख जैसी है लेकिन आँख नहीं है, ज्ञान की दृष्टी नज़र जैसी है लेकिन नज़र नहीं है, ज्ञानशक्ति दृष्य जैसी है लेकिन दृष्य नहीं है, उपदेश देश जैसी है लेकिन देश नहीं है।** इसलिये उपदेश पाये हुये व्यक्ति को प्रत्येक से दिखनेवाली चीज़ कुछ नहीं रहती। जिसने उपदेश को पाया उसे जैसे गुरु ने कहा वैसे योग साधना करनी होगी। उपदेश को पाने के बाद योग की साधना करने से गुरु ने जो ज्ञानाग्नि दी हैं वह प्रज्वलित होती हैं। जो व्यक्ति योग नहीं करता उसमें ज्ञानाग्नि नहीं बडती। यह जानलें कि उपदेश को पाने के बाद जब योगसाधना करते हैं तब ही ज्ञानाग्नि बढ़कर कर्म कहलानेवाले लकडियों को जलाने की ताकत आती हैं। यह बात नहीं भूलना चाहिये कि भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण के ज़रिये बतायी गयी दो क़िस्मों के यज्ञों में से ज्ञान यज्ञ में उपयोग होने वाली अग्नि ज्ञानाग्नि ही हैं। अग्नि जैसी हैं लेकिन अग्नि नहीं है उसे ही ज्ञानाग्नि कहते हैं ऐसा ही लकडियाँ जैसे होते हैं लेकिन लकडियाँ नहीं हैं उन्ही को कर्म के लकडियाँ कहते हैं। तो वैसी ज्ञानाग्नि से कर्म के लकडियों को जलाने से वह मानव जिसका कर्मशेष खत्म होगया वह मुक्ति पायेगा। आख़िर मुक्ति पाने केलिये, ईश्वर में दाखिल होने केलिये उपदेश बेहद ज़रुरी हैं। इसीलिये पूर्व में ज्ञान जाने हुये बडे लोगों ने उपदेश को सॉँप्रदाय बद्ध किया हैं।

मानव कर्म से छुटकारा पानेकेलिये बडों ने किये हुये कोशीशें ही इंदू साँप्रदाय हैं। काल गमन में साँप्रदाय कालुष्य होकर पोशीदा हो जा रहे हैं। थोडे हद तक कहीं भी हो साँप्रदाय बद्ध आचरण रहने पर भी उनका मतलब कोई नहीं जानता। आज भी गुरुयें मौजूद हैं, शिश्य हैं,उपदेश कार्यक्रम हैं। फिर भी उपनयन में ज्ञान हो, उपदेश में ज्ञान शक्ति हो नहीं हैं। ऐसा ही शिश्य करने वाले योगों में कर्म जल नहीं रहे हैं। भगवद्गीता में ईश्वर ने जो दो योगों को कहा हैं उनको छोडकर मानव नये नाम रखलेकर, नये योगों को कर रहा हैं। ऐसे योग कितने करने पर भी बिना भाडे (बिना पैसेवाला) के काम जैसा ही होता है। उन्हे यह मालूम नहीं हो रहा हैं कि फलित या फल न देनेवाली साधना कितना करने पर भी कुछ प्रयोजन नहीं हैं। और एक विचित्र यह हैं कि कुछ गुरु ऐसा नही कहते कि मोक्ष मार्ग को दिखानेवाले योग हैं लेकिन उसके बदले में आरोग्य (सेहद के) सूत्रों को बताते हैं कि दद्द दमादि योग करने से रोग चलेजाते हैं, मुह पर ध्यान रखने से रोग नहीं आते हैं, दर्दे कम होने केलिये दर्द पर ध्यान रख्खे, इसतरह अनेक प्रकार के आरोग्य योगों को बता रहे हैं। ईश्वर ने कर्मनिर्मूलन करलेने केलिये जो योग बताया था उनके बारे में न कहते हुये रोग निर्मूलन योगों को बताये तो मनुष्य ईश्वर के मार्ग के तरफ कैसे सफ़र करसकते हैं? (आप खुद सोचलीजिये)

जब इस बात पर नज़र नहीं रहता हैं कि इंदूसाँप्रदाय का क्या मतलब है? दैवधर्म मतलब क्या हैं? तो साँप्रदाय खराब होसकते हैं, धर्म अधर्मों में बदलसकते हैं। अब साँप्रदाय क्या है यह मालूम न होने से, धर्म अधर्मों में बदलजाने के कारण कहीं भी हो अगर आध्यात्मिक उपदेश हुआ तो वह नाममात्र (नाम के वास्ते) उपदेश ही हैं लेकिन वास्तव में वह उपदेश नहीं हैं। ऐसे गुरुउपदेशो में अष्टाक्षरि, पंचाक्षरि मंत्र में **सोहम** नाम के मंत्र को हो या राम नाम के मंत्र को

हो किसी न किसी एक मंत्र को हो शिश्य के कान में बोधा करना हो रहा हैं। पूर्व में इंद्रियातीत ज्ञानाग्नि को गुरुओं ने शिश्यों को दान किया तो आज इंद्रिय से संबंध रखनेवाले शब्दमंत्रों को उपदेश कह कर बोधा करना क्या यह सब दैवमार्ग के विरुद्ध काम नहीं हैं? दैवमार्ग में, साँप्रदाय पद्धतियों में कई तरीकों से खराब हो गये हुये हम कम से कम अब तो संभालकर (केरफुल से) इसतरह सोचने की हालत में पहुँचना चाहिये कि हमारे साँप्रदाय क्या हैं और वे कितने महत्वपूर्ण हैं। उन इंदू साँप्रदायों को वापिस आचरण करने की कोशीश करना चाहिये जो आखरी साँस में (यानि क्षीण दशा में है) हैं। इसतरह जब करसके तो बडों ने हमारेलिये जो कोशीश की हैं उनको पूरा किये जैसा होगा। हम भी दैवमार्ग का अनुसार करते हुये आखिर में मोक्ष पासकते हैं। इसलिये अगर तुम छोटे होतो उपनयन उपदेश को पाओ। बडे होगये होतो कम से कम ऐसा करो कि तुम्हारे बच्चों को तो उपनयन उपदेश संप्राप्त हो।



पेल्लि - पेल्लि कोडुकु, पेल्लि कूतुरु

(शादि - दुल्हा, दुल्हन)

शादि को **तेलुगु** ज़बान में **पेल्लि** कहते हैं। उसीतरह **बेटे** को **कोडुकु** कहते हैं और **बेटी** को **कूतुरु** कहते हैं। यहाँ पर तेलुगु ज़बान में इसलिये समझाया जा रहा हैं क्यों कि तेलुगु ज़बान सृष्टादि से मौजूद हैं और आध्यात्मिक भाव को ज़ाहिर करने वाले शब्द जितना खरीब तेलुगु ज़बान में है उतना खरीब वे दूसरे ज़बान में नहीं हैं। इसलिये यहाँ पर धर्म और साँप्रदाय की निज स्वरूप (असलियत) बताने केलिये और शादि की आध्यात्मिकता बताने के लिये उसी ज़बान के शब्दों को लेकर समझाया जा रहा हैं। वैसे भी पानी कहें या

वाटर कहें या तन्नी (तमिल में पानी को तन्नी कहते हैं) कहें एक ही तो बात है भाषा बदलने से पानी के धर्म तो नहीं बदल रहे हैं ना। उसी तरह यहाँ समझाया जा रहा शब्द तेलुगु ज़बान के हैं लेकिन भाव तो एक ही हैं। भाषा को देखे बगैर भाव को देखने वाला ही असली पंडित है यह बात भूलना नहीं चाहिये। दुल्हे (दुल + हा) को पेळ्ळि + कोडुकु (यानि शादि + बेटा) कहते हैं ऐसा ही दुल्हन (दुल + हन) को पेळ्ळि + कूतुरु (यानि शादि + बेटी) कहते हैं। तो तेलुगु ज़बान में इन लफजों को देखकर अखलमन्द इनसानों को एक सवाल अंदर पैदा होगा कि अरे यह क्या, बेटा और बेटी को शादि? इसका क्या मतलब होसकता है (ये कैसे लफ़्ज़ बनाये है हमारे बडे लोगों ने आखिर इसतरह लफ़्ज़ बनाने के पीछे वे हमें क्या समझाना चारहे है? इन लफ़्ज़ों को देखकर ऐसा तो हमने कभी नहीं सोंचा..) और इन शब्दों में छुपा हुआ आध्याम्तिक रहस्य क्या हैं। चलिये अब इसका आध्यात्मिक रुप खुले तरीके से बयान करलेते हैं।

शादि!! यह शब्द तो शायद सब जानते ही हैं। हर एक के जीवित(जीवन) में शादि का एक दिन ज़रुर आता हैं,वह एक ऐसा पर्वदिन की तरह बाकी रहता है जिसे भूला नहीं जाता। हमारे बडों ने शादि को एक विशेष अर्थ देनेवाली कार्यक्रम की तरह डिज़ैन करके रखा। खास कर बताये तो बडे महत्व अर्थों को बतानेवाले कार्यों से जुडा हुआ प्रत्येक कार्य है कहसकते हैं। इसमें सबसे पहले पेळ्ळि कोडुकु (यानि दुल्हा), पेळ्ळि कूतुरु (यानि दुल्हन) को तय्यार करने के कार्य के बारे में बयान करलेते हैं। जब तक साधारण से रहने वाले व्यक्ति को प्रत्येक से दुल्हे की तरह तय्यार करना तो सब जानते ही हैं। ऐसा ही साधारण से रहनेवाली स्त्री को भी प्रत्येक से अलंकरण आचारों के साथ दुल्हन के जैसा तय्यार करना भी सब जानते ही हैं। कुछ लोग इसतरह समझसकते हैं कि यह तो सब को

मालूम है इसमें क्या नयी बात है? फिर भी यह कहसकते हैं कि इसमें ऐसी विषय छुपी हुयी है जो हम लोगों को बिलकुल भी नहीं मालूम। अगर मर्द है तो उसे दुल्हे (पेल्लि कोडुकू) की तरह, औरतों को दुल्हन (पेल्लि कूतुरु) की तरह तय्यार करना इंदू साँप्रदाय सिद्ध काम है। ऐसा ही शादि के संबंदित हर काम भी साँप्रदायसिद्ध ही है।

साँप्रदाय यानि विशेष अर्थ के साथ जुडा हुआ धर्म का आचरण है। जब यह बात मालूम नहीं होता है कि इंदुओं के सब साँप्रदायों में कौनसा धर्म, कौनसा अर्थ बसा हुआ है तब उस साँप्रदाय का आचरण करें या न करें दोनों एक ही बात हैं। खास करके जब अर्थ या मतलब मालूम नहीं होता है तो आचरण करनेवाले साँप्रदाय अधर्मयुक्त होने का मौका है। साँप्रदाय वह है जो पूर्वकाल के ज्ञानियों ने दैवज्ञान के साथ जुडे हुये धर्मों के प्रकार तय्यार किये हैं। अब शादि की आचरण (साँप्रदाय) का विवरण मालूम करते हैं। जो लोग माता पिता को पैदा होते हैं उन्हे फलान लोगों का संतान है कहते हैं। एक व्यक्ति के बारे में जब इसतरह पूछते हैं कि यह कौन हैं तो उसके जवाब में यह मिलता हैं कि वह फलाना व्यक्ति का बेटा हैं। ऐसा ही अगर स्त्री होती हैं तो फलान व्यक्ति की बेटी हैं कहते हैं। सपोज़ ऐसा समझिये कि दोनों युवती युवक के बारे में एक व्यक्ति ने ऐसा कहा कि वे दोनों रामय्या की बेटी,रामय्या का बेटा हैं। ऐसा कहने से यह साफ मालूम होजा रहा हैं कि उन दोनों में से एक भाई है तो दूसरी बहन होती हैं। नहीं तो एक दीदी हुयी तो दूसरा छोटा भाई होते हैं। **जब दोनों का बाप एक ही है** तो वे दोनों भाई बहन होकर रहते हैं। अब असल विषय पर आते हैं। शादि के कार्य में पेल्लि कोडुकु (दुल्हा), पेल्लि कूतुरु (दुल्हन) को तय्यार करना तो सब जानते ही हैं। एक ही पेल्लि (शादि) केलिये वे दोनों कोडुकु (बेटा) कूतुरु (बेटी) होरहे हैं(यानि बेटा बेटी को मिलाकर शादि कर रहे हैं) इससे यह

बात आसानी से मालूम हो जा रहा हैं कि वे दोनो भाई बहन हैं। रमय्या की बेटी, रामय्या का बेटा कह कर जैसे हमने दोनों के बारे में कहा हैं उसी तरह यहाँ पेळ्ळि कोडुकु, पेळ्ळि कूतुरु कह रहे हैं। इसलिये यहाँ पर **शादि** को **बाप** से कम्पार किये तो, उस बाप को संतान की तरह एक युवति एक युवक तय्यार हुये है। जब तक किसी और को पैदा होकर अलग अलग बाप रखनेवाले सिर्फ शादि के दिन उस बाप के नाम को कहे बगैर प्रत्येक से पेळ्ळि कोडुकु, पेळ्ळि कूतुरु कहना, अगर इस बात पर हम सोचे तो समझमें न आनेवाला विचित्र ही हैं ना! जब एक बात समझमें नहीं आता है या उसका पूरा विवरण जब मालूम नहीं होता हैं तो हर एक केलिये विचित्र ही हुआना! जब एक बात समझमें नहीं आति है तो उसके पूरे डीटेयिल्स मालूम नही होते है तो वह विचित्र की तरह ही दिखेगा। ऐसी सूरत में कई सवाल हम में पैदा होते हैं। वे यह है कि! जब शादि दोनों के ओर एक ही है तो, शादि के लिये दोनों बेटा बेटी हुये तो उन दोनों का रिश्ता भाई बहन का रिश्ता ही होता है ना। ऐसी सूरत में भाई बहन को बिठाकर उनसे इसतरह कहना विचित्र नही है क्या कि दोनों एक जगह पहुँच कर संतान की उत्पत्ति करो?जबतक जो लोग अलग अलग से थे उनको उस शादि के दिन कोडुकु (बेटा) कूतुरु (बेटी) कह कर शादि करके बाद में उन्ही को पति पत्नि कहना अजीब नहीं हैं क्या? ऐसे कई सवालों के जवाबात को ढूँढना होगा। शादि के संबंधित धर्म क्या हैं यह बात तो बडों के द्वारा ही मालूम करना पडेगा। पूर्व में बडों ने जो विवरण बताया था उसे अब बतानेवाले कोई भी न रहने की वजह से पूर्व में क्या कहा हैं अब हम उसके बारे में तफसील से बयान करलेते हैं।

ज़मीन पर पैदाहुये औरत मरद हर मनुष्य बचपन से युक्त उमर आने तक उन्हे यह तक नहीं मालूम कि दैवज्ञान क्या चीज़ हैं,

उनका ध्यान पूरा पढायियों पर,खेल कूदों पर रहते हुये उन्हे यह तक नहीं मालूम कि जीवित का गम्य क्या है। इसतरह रहनेवालों को उमर आने के बाद एक पुरुष को एक स्त्री से जोडकर उसदिन से ज्ञानमार्ग में चलते हुये ईश्वर को जानो कह कर बतानेवाली कार्य ही शादि (पेळ्ळि) का कार्य हैं। पेळ्ळि कोडुकु (दुल्हा), पेळ्ळि कूतुरु (दुल्हन) करने में यह अंतरार्थ छुपा हुआ है कि अबतक तुम लोगों ने समझा कि मैं फलाना व्यक्तियों के बेटा बेटी हुँ लेकिन निजसे (हखीकत में) तुम लोग उनके संतान नही हो तुम्हारा बाप प्रत्येक से हैं, तुम्हे ही नहीं बल्कि सबका बाप एक ही है। **भगवद्गीता में गुणत्रय विभाग योग में सर्वजीवों केलिये मैं बाप हूँ माता प्रकृती है** कह कर भगवान ने कही हुयी मुख्य ज्ञान हैं। यह बात जानलें कि वहाँ पर ईश्वर ने बताये हुये धर्म सबको मालूम होने केलिये उसका आचरण कार्य रुप में बताना ही शादि में पेळ्ळि कोडुकु पेळ्ळि कूतुरु बनाने का अंतरार्थ है। सबका बाप परमात्मा हैं, उसका अर्थ ही आचरण में **शादि (पेळ्ळि)** कहलानेवाला शब्द दोनों के लिये बाप बना।

पेळ्ळि (शादि) शब्द परमात्मा की निशानि हैं जिसने सर्व प्रपंच को पैदाकिया, जो सब मत (मज़हबों का) अधिपति हैं, बिना नाम, बिना आकार के सब जगह फैलकर हैं। यह जान लें कि पेळ्ळि (शादि) दैव हैं उसकेलिये आज से ही तुम ज्ञानोदय से यह जानलो कि तुम दोनों ईश्वर के कोडुकु (बेटा) कूतुरु (बेटी) हो यह बतानेकेलिये ही पेळ्ळि कोडुकु (शादि + बेटा) पेळ्ळि कूतुरु (शादि + बेटी) नाम रखे हैं। जब तक अज्ञान में रहनेवाले भी उस दिन से ईश्वर कौन हैं, हम कौन हैं, हमें कैसे रेहना चाहिये यह सबकुछ मालूम हुये जैसा निर्माण किया गया हुआ कार्य ही शादि का कार्य हैं।

उपनयन उपदेश पाने के बाद भी जो लोग अज्ञान में डूब गये हैं,अगर उसवक्त तक उपनयन उपदेश नहीं पाये हुये लोग, ईश्वर का ज्ञान क्या है यह बात मालूम हुये बगैर ही अज्ञान में जीनेवाले शादि के दिन से ज्ञान तरीके से बदले बगैर हम किसकी संतान हैं अगर यह बात मालूम नहीं हुआ तो वह शादि निरर्थक हैं। ज्ञान न मालूम करनेवाली जीवित व्यर्थ होजाती हैं। बचपन से यव्वन में प्रवेश किया हुआ जीवित ही दैवज्ञान मालूम करने केलिये योग्यता पायी हुयी हैं। इसलिये ज़मीन पर पैदाहुये औरत मरद दोनों भी ईश्वर की ही संतान ही हैं कह कर बतानेवाली पहली ज्ञान संदेश ही पेह्लि कोडुकु (दुल्हा), पेह्लि कूतुरु (दुल्हन) हैं। शादि का दिन वह पहला दिन है जिसमे ज्ञान से जुडे हुये कई विषय जानते हैं,और यह विषय भी जानते हैं कि तमाम जगत ईश्वर की ही संतान हैं। इसीलिये उसदिन ही जीवित में मालूम करनेवाले सब ज्ञान संदेशों को कार्यरुप में रख्खा हैं। इसीलिये शादि के दिन को ही संपूर्ण ज्ञान संदेश का दिन कहते हैं। उसदिन जो चीजें आचरण करना हैं उनमें से थोडे नीचे लिख्खे हैं देखिये।



तोडु पेह्लि कोडुकु

(शादि में दुल्हे के साथ बैठने वाला साथी दुल्हा)

इंदू साँप्रदाय के प्रकार विवाह के कार्य में पेह्लिकोडुकु (दुल्हे) के सैड में उसके साथ दूसरा एक व्यक्ति दुल्हे की तरह रहता हैं उसे ही **तोडु पेह्लि कोडुकु** (साथ में बैठनेवाला दूसरा दुल्हा) नाम रख के बुलाना हो रहा हैं। पहले ही एक नियम हैं कि विवाह के तमाम कार्य आत्मज्ञान से संबंध रखनेवाले ही हैं। इसीलिये यह जानना चाहिये कि तोडु पेह्लिकोडुकु (साथ का दुल्हा) भी आत्मज्ञान का

अंतर्भाग ही हैं। विवाह के कार्य में पेळ्लि कोडुकु जो भी काम करता हैं उन सब कामों को देखते हुये खुद कुछ न करते हुये सैड में बैठना ही तोडु पेळ्लि कोडुकु (साथ बैठनेवाले दुल्हे) का काम है। साथ बैठने वाले दुल्हे का विधान यह हैं कि पेळ्लि कोडुकु जो काम कर रहा हैं उन कामों को, जो बातें (मंत्र) वह बोलता है उन बातों को देखते हुये, सुनते हुये मौन से सैड में रहना ही उसका विधान हैं। शादि के कार्य में बेमतलब का काम नहीं रहता है। तो हम अब इसका कारण देखते हैं कि पेळ्लि कोडुकु के सैड में बैठकर खुद को भी दुल्हा कहलवालिया हुआ तोडु पेळ्लि कोडुकु उसके सैड में रहते हुये एक काम भी न करते हुये तटस्थ से रहने की क्या वजह है?

ज़मीन पर पैदाहुआ हर मनुष्य सुबह से लेकर कुछ न कुछ काम कर ही रहा हैं। एक मनुष्य यानि शरीर के साथ सजीव से रहनेवाला। मनुष्य को विभाजित करके देखें तो शरीर अलग है जीव अलग हैं। अगर हम इस बात पर गौर (परिशीलन) करें तो जब एक मनुष्य काम करता है तो क्या वह काम जीव कर रहा हैं या शरीर कर रहा हैं तो ऊपर से हमलोगों को शरीर ही किये जैसा ही दिख रहा हैं। जो काम शरीर कर रहा हैं उस काम को जीव गौर करते हुये इसतरह के भ्रम में है कि वह उस काम को खुद कर रहा है मगर हक़ीकत में उसने कुछ नहीं किया। अब एक सवाल पैदा होसकता हैं वह यह है कि! जब शरीर काम कर पा रहा हैं तो क्या वह शरीर काम करसकता है जिसमें जीव नहीं हैं? इसतरह पूछ सकते हैं। उसकेलिये हमारा जवाब यह हैं कि जिस शरीर में जीव नहीं हैं उस शरीर को काम करने की ज़रुरत ही नहीं हैं। सिर्फ जब जीव रहता हैं तब ही शरीर काम कर रही हैं। वैसा बोलकर जीव ने भी काम नहीं किया हैं। ऐसी सूरत में यह शक भी आसकता हैं कि तो क्या शरीर स्वयं से काम कर रहा हैं? उसके जवाब में यह कहसकते

हैं कि शरीर भी स्वयं से काम नहीं किया हैं। शरीर केवल काम करनेवाला डिवैज़ ही है लेकिन वह स्वयं काम नहीं कर सकती। अब मुख्य सवाल यह है कि जब शरीर सिर्फ एक डिवैज़ जैसी है तो, और केवल वह एक जड पदार्थ ही है तो, जब जीव भी काम नहीं कर रहा हैं तो जो काम हो रहा है वह कौन करवारहे हैं?

जब शरीर में का जीव केवल सुखदुखों का अनुभव करने केलिये ही हैं तो, शरीर में हो रहे कामों केलिये जब जीव की ताकत जरा भी उपयोग ही नहीं होरही है तो, काम करनेकेलिये जब जीव को ज़रा भी ताकत नहीं है तो, शरीर भी स्वयं से काम नहीं करसकती हैं तो, वह काम होने का कारण इधर जीव, उधर शरीर नहीं है तो यह कहसकते हैं कि उसकी वजह कोई और ताकत है । सजीव शरीर में एक जीव, दूसरा शरीर इन दोनों के अलावा तीसरावाला भी एक जन है जो ये सब काम होने केलिये शक्ति स्वरुप में हैं। उसीको आत्मा कह रहे हैं। आत्मा शरीर में निक्षिप्त होकर किसी को मालूम हुये बगैर हैं। दिखनेवाले शरीर में नजर न आनेवाली आत्मा मौजूद है। नजर न आनेवाली आत्मा बाहर की शरीर को हिला कर काम करवा रही है। तोडु पेह्लि कोडुकु (साथ में बैठनेवाला दुल्हे) को दिखाने के पीछे का उद्धेश ही यह हैं कि उस आत्मा के बारे में बताना जो शरीर में चैतन्य शक्ति होकर, किसी को न मालूम होते हुये रहस्य से है। हमने यह बात तफसील से मालूम किया ना कि पेह्लि (शादि) यानि ईश्वर या दैव हैं,पेह्लि कोडुकु (शादि + बेटा) यानि ईश्वर का बेटा या दैवपुत्र हैं। ईश्वर सर्व प्राणियों का बाप है कह कर भगवद्गीता गुणत्रय विभाग योग में चारवीं श्लोक में **सर्वयोनिषु कौंतेय! मूर्तय : संभवंतियाः, तासाम ब्रह्म महद्योनिः अहम बीजप्रदः पिता** कहा हैं। ऊपर के श्लोक से यह मालूम हो रहा हैं कि **चाहे वह कोई भी प्राणि हो किसी भी योनि में से पैदा क्यों न हो उसकेलिये बाप**

परमात्मा हैं, माँ प्रकृती हैं। दिखनेवाले पूरे विश्व को डिवैड करके देखें तो यह मालूम हो रहा हैं कि आत्मायें तीन हैं तो प्रकृती एक हैं। तीन आत्माओं में परमात्मा बाप के स्थान में हैं तो प्रकृति माँ के स्थान में हैं। बाकी दो आत्माओं में से एक जीवात्मा हैं तो दूसरा आत्मा हैं। जीवात्मा को प्रकृती पुरुषों को पैदा हुआ बेटे की तरह हिसाब किये हैं। और भी खुले तरीके से बतायें तो दैवपुत्र की तरह, पेह्लि कोडुकु की तरह जान चुके हैं। अब जीवात्मा के बाद में जो बचा हैं वह सिर्फ एक आत्मा ही है। अगर जीवात्मा को पेह्लि कोडुकु कहा तो फिर आत्मा को क्या कहना चाहिये? इसतरह अपने आप में सवाल करलेके देखलेते हैं।

अगर हम कहते हैं कि जीव पैदा हो रहा हैं तो उसका मतलब यह है कि वह जीवात्मा एक शरीर को पहुँच कर उसमें निवास कर रहा हैं। इसतरह दाखिल हुये शरीर में कितना वक्त रहना चाहिये? क्या करना चाहिये? क्या खाना चाहिये? कौनसे कौनसे सुख दुखों का अनुभव करना चाहिये? किस किस से संबंध रखलेना चाहिये? कौनसे कौनसे प्राँत में रहना चाहिये? इन सबकी इनफरमेशन (विवरण) उस जीवात्मा के साथ आकर रहता हैं। वह सिर्फ एक हिसाब किताब ही है, उसीको **कर्म** या कर्मपत्र या नसीब या तकदीर कहते हैं। उस हिसाब किताब के बराबर जीव शरीर को नहीं चला सकता,शरीर भी स्वयं नहीं चलसकती। शरीर में जीव ताकत नहीं रखता हैं जीव सरमें सिर्फ एक जगह बहुत ही छोटा सा होता हैं और उसका आकार गोल रहता हैं। (मतलब इतना छोटा कि हमारे हाथ के लिटिल फिनगर के तीन अंगुल में आखरी अंगुल (इंच) वाली जगह को १०८ हिस्से करेंगें तो उसमें एक हिसा जितना होता हैं उतना सैज में जीव होता हैं।) शरीर को भी स्वयं हिलने की ताकत नहीं हैं। शरीर में सब काम करने केलिये, कर्म कहलानेवाली

हिसाब किताब के प्रकार शरीर हिलकर काम करने केलिये, शरीर में कहीं अंदर सर में रहनेवाले जीव सुख दुखों की अनुभव करने केलिये कारण आत्मा ही हैं। आत्मा शक्ति स्वरुप होकर शरीर को हिला रही है। इसीलिये उसको चैतन्य शक्ति कह रहे हैं। इधर शरीर को उधर जीव केलिये आधार आत्मा ही हैं और वह आत्मा जीव के साथ शरीरो में रह रही है। जहाँ पर जीव रहता हैं वहीं आत्मा होती हैं। इसके प्रकार देखें तो बिना जीववाला शरीर होसकता हैं मगर बिना आत्मा के जीव नहीं रहता। एक सजीव शरीर में होनेवाले तमाम काम जीव केलिये आत्मा कर रहा हैं। आत्मा ही ये सब काम कर रही हैं उसके बावजूद क्यों कि ये तमाम काम जीव के ज़रुरत केलिये किये जा रहे हैं इसलिये सब ऐसा समझले रहे हैं (इस भ्रम में है) कि जीव ही कर रहा हैं। जीव भी ऐसा ही समझ रहा हैं कि ये सब काम वह खुद कर रहा हैं। लेकिन आत्मा सब करते हुये भी, पूरे शरीर में फैले होते हुये भी आत्मा बाहर किसी को मालूम नहीं हो रही हैं।

सब हरकतों को कर्म के प्रकार हिलानेवाली आत्मा के बारे में मालूम न होना, वह जीवात्मा जिसे कामों से किसी तरह का भी संबंध नहीं हैं वह खुद मैं ही सब काम कर रहा हूँ समझने के पीछे कारण जीव का अज्ञान ही है। यह जानलें कि ज्ञान के प्रकार हमें नज़र न आते हुये, न मालूम होते हुये हमारे सैड (साथ) में रहनेवाली आत्मा की मौजूदगी के बारे में बताना ही पेह्लि (शादि) में तोडु पेह्लि कोडुकु (साथ वाला दुल्हे) को सैड में रखके दिखाना। बिना जीववाला देह रहसकता हैं लेकिन बिना आत्मा के जीव नहीं रहता इस बात को हमने पहले ही बयान करलिये थे। जीवात्मा आत्मा दो जोड आत्माओं की तरह हैं। एक को छोडकर दूसरा नहीं रहता। मरण में जब शरीर को छोडते हैं तब, जनम में जब शरीर को पहनते हैं तब

दो आत्मायें भी जोड से सफर कर रहे हैं। अनुभव करने केलिये जीवात्मा, अनुभव कराने केलिये आत्मा शरीर में हैं। या ऐसा भी कहसकते हैं कि कर्म भुगतने केलिये जीवात्मा, कर्म को भुगतवाने केलिये आत्मा शरीर में मौजूद हैं। इसलिये मौत और पैदाइश दो भी जीवात्मा आत्माओं के ज़रिये ही हो रहे हैं। सिर्फ जीवात्मा केलिये ही ईश्वर (परमात्मा) ने आत्मा की सृष्टी की हैं। सृष्टी में रहनेवाले हर जीव केलिये एक आत्मा को साथ में रखा हैं। जीवात्मा आत्माओं को भगवद्गीता में क्षर अक्षर कहा हैं। और यह भी बताया कि क्षर अक्षर दोनों भी कूटस्थों की तरह शरीर में मौजूद हैं। यह कहसकते हैं कि क्षर पुरुष जीवात्मा, अक्षर पुरुष आत्मा दोनों पुरुषोत्तम यानि परमात्मा को ही पैदा हुये हैं। इसलिये जब हम जीवात्मा को पेह्लि कोडुकु (दुल्हा) कहा हैं तो आत्मा को तोडु पेह्लि कोडुकु (साथ में बैठा हुआ दुल्हा) कहना पडा। शादि में दुल्हे के साथ तोडु पेह्लि कोडुकु को इसलिये रख रहे हैं ताकि उससे यह मालूम होजाये कि जीवात्मा के साथ आत्मा भी एक मौजूद हैं।

जिस शादि में तोडु पेह्लि कोडुकु (साथ वाला दुल्हा) नहीं रहता हैं उस शादि को पूर्व में नहीं किया करते थे। पूरा शादि का कार्य उन कामों से डिजैन किया गया होता है जिनसे अज्ञानों को ज्ञान अच्छी तरह से समझमें आजाये। इसलिये शास्त्रबद्ध के साथ धर्मबद्ध से करनेवाले शादि के कार्य में पेह्लि कोडुकु के साथ तोडु पेह्लि कोडुकु को रहना ही होगा। शादि के काम में दुल्हे से ही तमाम कार्य करवाने पर भी इन सब कामों के पीछे आत्मा है यह बात बताने केलिये ही तोडु पेह्लि कोडुकु की तरह एक व्यक्ति को दिखाना धर्मयुक्त का काम हैं। आत्मा जीवात्मा के साथ पैदा हो रही है, जीवात्मा के साथ मर रही हैं। इसलिये यह बताने केलिये कि आत्मा हमेशा जीव के साथ ही है **तोडु या साथ वाला या जोड वाला** कहना

हुआ। परमात्मा से जीवात्मा और आत्मा दोनों पैदा किये गये। कहसकते हैं कि ईश्वर केलिये जीवात्मा, आत्मा दोनों भी बेटें ही है। इसके प्रकार जब जीवात्मा दुल्हा है तो आत्मा भी दुल्हा ही होता है। इसलिये आत्मा को साथवाला दुल्हा कह रहे हैं। जीवात्मा, आत्मा की मौजूदगी को बताने केलिये जीवात्मा को दुल्हा (पेह्लि कोडुकु) कहते हुये एक मनुष्य को, आत्मा को साथवाला दुल्हा (तोडु पेह्लि कोडुकु) कहते हुये दूसरे मनुष्य को विवाह के कार्य में दिखा रहे हैं।

तलवार (खड्ग)

जिस दिन दुल्हा बनाकर यह बता रहे है कि तू दैवपुत्र है उसी दिन उसके हाथ में तलवार दे रहे हैं ताकि उससे यह मालूम हो कि आज के दिन से तुम प्रत्येक से युद्ध करना चाहिये। जिन लोगों ने अज्ञान में से दैवमार्ग में प्रवेश किया उन्हे माया के साथ युद्धकरना होगा, आज से माया तेरी बडी दुशमन है,वह कई रुपों में रहती हैं,उससे जंग करके जीतने केलिये हमेशा सैनिक की तरह रहना चाहिये इसतरह बोधा करते हुये उसी मतलब के साथ हाथ में तलवार दिये थे। पूर्व काल में बडे लोग बडी तलवार को हाथ में दिया करते थे ताकि वह सैनिक की तरह दिखे तो गुज़रते वक्त के साथ साथ उस तलवार का आकार आज छोटा होगया हैं। कम से कम इस बात से हमें खुश होना चाहिये कि यह साँप्रदाय पूरा खत्म हुये बगैर थोडी छोटी तलवार तक तो हाथ में दे रहे हैं। पूर्व काल में आचरण (कोई भी काम हो) मतलब जान कर अमल किया करते थे। आज आचरणों के अंतरार्थ बदल गये हैं। आचरण तो थोडा बाकी हैं। खास करके हल्दी के कपडे पहनकर हल्दी लीप लेकर मैं पवित्र हूँ ऐसा ऊपर से दिखाते हुये दुल्हा बनने पर भी कोई भी दुल्हा हो अपने आप

में इस बात पर बिलकुल खयाल या सोंच नहीं रहे हैं कि मैं किसका बेटा हूँ, मेरी पवित्रता क्या हैं इसतरह योचना तक वह नहीं कर रहा हैं। उसीतरह छोटी तलवार को हाथ में पकडा हुआ दुल्हा यह तक नहीं सोच रहा हैं कि आखिर मुझे किस पर युद्ध करना चाहिये? इसतरह आज से अर्थ रहित हुये बगैर, अर्थ सहित होकर आचरण को अर्थ के साथ पूरा कीजिये। इस विषय को अब आपने जानलिया फौरन अब आप का कर्तव्य यह है कि शादि के दिन पेह्लि कोडुकु (दुल्हा), पेह्लि कूतुरु (दुल्हन) को यह बात बतायें कि उन दोनों का पिता परमात्मा एक ही है। ऐसा ही दुल्हे को बाह्य से तलवार को देना ही नहीं बल्कि अंतरंग में ज्ञान कहलानेवाली बडी तलवार को देके उसको माया से जंग करने वाले सैनिक की तरह तय्यार कीजिये।



भाषिंग

(दुल्हा,दुल्हन के पिशानि पर बाँधनेवाला धागा)

दुल्हा बनाने के बाद हो, दुल्हन बनाने के बाद हो उनके सर पर पिशानि के भाग में चावल से जमाये गये भाषिंग को बाँधने का आचार हैं। जैसे जैसे वक्त गुज़रता गया उनमें भी बदलाव आकर इस ज़माने में चावल से तय्यार किये गये भाषिंग नहीं मिल रहे हैं उसके बदले में अलग क़िस्म से भी तय्यार हुये। उनमें थोडा बदलाव आने पर भी कम से कम कुछ जगहों में तो चावल से तय्यार किये गये भाषिंग रहना खुशी की बात हैं। ऐसी हालत में उनके बारे में मालूम करना ज़रुरी है। पूर्व में इस उद्धेश से भाषिंग को रखा गया कि!

हमारे शरीर में सात मुख्य नाडिकेंद्र मौजूद हैं। वे रीढ की हड्डी के नीचे के भाग से लेकर शिरस (सर) तक रीढ की हड्डी के

द्वारा फैली हुयी नर (नस) में मौजूद हैं। ब्रह्मनाडि कहलानेवाली उस नाडि में ऊपर रहनेवाले दो केंद्र बहुत ही प्रशस्त हैं। आध्यात्मिक परिभाषा में ऐब्रोस (कनुपापा) के बीच में जो नाडि केंद्र हैं उसे भ्रूमध्य स्थान कहते हैं, ऐसा ही आखिर में ऊपर रहनेवाला केंद्र को सहर्सार कहते हैं। ज्ञान दृष्टी आने केलिये भ्रूमध्यस्थान, ज्ञान और ज्ञानशक्ति स्टोर होने केलिये सहर्सार योग्यता रखे हुये हैं। जो नाडि केंद्र ऐब्रोस के बीच है वह ज्ञान दृष्टी की केंद्र है तो, भूमि पर पिकनेवाले धान्यों में चावल ज्ञान की पहचान रखते हुये ज्ञान की निशानि के तौर पर है। ज्योतिष्य शास्त्र के प्रकार ज्ञान का मालिक चाँद हैं,चाँद का धान्य चावल है। आध्यात्मिक में चाँद को चावल को ज्ञान चिह्न की तरह कहते हैं। यहाँ भाषिंग की तरह चावल को जमाकर बाँधना नोटिस करनेवाली बात है।

वे युवता जो युक्त उमर आनेतक ज्ञान की दृष्टी नहीं रखते अगर उन्होने उपनयन उपदेश को नहीं पाया तो, उस शादि के दिन से ज्ञान दृष्टी रखलेना चाहिये कह कर सूचना देतेहुये चावल से बनायी गयी वह भी धान्य से हाथ से छिले हुये चावल से तय्यार किये गये भाषिंग को ही बाँधा करते थे। हाथ से बनायी गयी काटन से चावल को तीन लैनों में जमाकर बाँधे हुये भाषिंग को ही पूर्व में वधू वरों के पिशानि पर भ्रूमध्य स्थान के खरीब बाँधते थे। इसतरह ज्ञान बोधा करके भाषिंग को पहनाते थे कि शादि के दिन से ज्ञान दृष्टी को रखलेना चाहिये। **ज्ञाननेत्र प्रकाश होनेवाले स्थान में पहनाने वाली हैं इसीलिये उसे प्रकाश नेत्र कहा करते थे।** पूर्व में सत साँप्रदाय के प्रकार उसी को प्रकाशांग कहते थे आखिर में आज वह भाषिंग की तरह बाकी हैं। भाष देनेवाली है इसीलिये उसे भाषिंग भी कह रहे हैं। रुपमें भी, नाम में भी थोडा बदलने पर भी साँप्रदाय की निशानि के तौर पर अभी भी बाकी है इस बात पर हमें खुश होना चाहिये। इससे

संतृप्त न होते हुये सँप्रदाय के प्रकार अब से चावल को ही भाषिंग की तरह इस्तेमाल करने की कोशीश करते हैं। पूर्व काल की धर्म को अमल करते हैं। चलिये अब से ज्ञाननेत्र रखते हैं।

गाल पे टीका

शादि के कार्य में दुल्हा दुल्हन के मुख के गाल पर काले गोल (बिंदू जैसी) टीका को लगाते हैं। उसका खुलासा या विवरण न जानते हुये भी वैसा लगाना आदत सी होगयी हैं। कुछ लोग गाल पर टीके को इस ज़माने में नज़र का टीका कहते हैं और उसको लगाने से वधू वरों को किसी की भी नज़र नहीं लगती है कहते हैं। इसीलिये उसे नज़र का टीका या दृष्टी का टीका कहते हैं। इस ज़माने में गाल पर लगानेवाले टीके के बारे में कोई भी कुछ भी समझलें यह कहसकते हैं कि वह पूर्व से आता हुआ रस्म ही हैं। पूर्व में न इसे नज़र का टीका कहते थे न दृष्टी का टीका। पूर्व में अर्थ से जुडाहुआ विधान को बतानेकेलिये उस तरह से गाल पर टीका लगाते थे। क्यों कि वह टीका दृष्टिदोषनिवारण केलिये लगाया नहीं जाता था इसीलिये उसे दृष्टी का टीका नहीं कहते थे। शादि के कार्य सब दैवज्ञान के बारे में बोधा करनेवाले ही हैं इस नियम के अनुसार यह जानलें कि गाल पर टीका भी ज्ञान से संबंधित आचरण ही है। अब हम उस ज्ञान के बारे में बयान करलेते हैं कि जो लोग गाल पर लगाये हुये बिंदु टीका को देखते हैं उससे उन्हे क्या ज्ञान को मालूम करनी चाहिये। मनुष्य शिशु की तरह पैदा हो रहा हैं।

पैदा हुये हर शिशु को ईश्वर याद रखले रहा हैं। पैदा हुआ हर शिशु का शरीर ईश्वर की निलय की तरह हैं। शरीर प्रकृति संबंध का ही हैं मगर शरीर में परमात्मा, आत्मा और जीवात्मा हैं।

परमात्मा विशालवाला हैं फिर भी शरीरों में भी हैं इसलिये **मत स्थानि सर्वभूतानि** कह कर भगवद्गीता में राज विद्या राज गुह्या योग चारवीं श्लोक में कहा हैं। मत यानि मेरा, स्थानि यानि स्थान है। परमात्मा विशाल से है और सब जीवराशियाँ (प्राणियाँ) परमात्मा में ही हैं। ऐसा ही परमात्मा सब शरीरों में भी हैं इसलिये यह कहसकते हैं कि वह सबमें मौजूद हैं। इसके मुताबिक यह कहसकते हैं कि हर शरीर ईश्वर की पहचान में ही हैं, सब उसके नज़र में या उसके दृष्टी में हैं। इस विषय को हर मनुष्य पहचाने जैसा हर मनुष्य के शरीर पर पैदाइश से ही एक **मतस्था** को रखा हैं। कालक्रम में मतस्था शब्द को मत्सा कह कर पुकार रहे हैं। शरीर पर काले मतस्था को पैदा होते ही देखसकते हैं। शरीर पर पैदाइश से ही कहीं एक जगह रहनेवाले **मतस्था को पैदाइश का मत्सा (मोल या तिल)** कहना हो रहा हैं। लेकिन यह कोई भी नहीं सोच रहा है कि पैदाइश से ही मत्सा पैदाहोने की ज़रुरत क्या है। पैदाइश का मत्सा (तिल) शरीर पर पैदाइश से रहने की वजह से उसके ज़रिये ईश्वर हमें यह बता रहा हैं कि तुम जब पैदा हुये थे तब से ही मेरी पहचान में हो। कहसकते हैं कि **मत्सा** वह निशानि है जो यह बताती है कि हर एक जन (जीव) ईश्वर का ही स्थान होकर हैं। जब पैदा हुये है तब पैदाइश का मत्सा ही नहीं बल्कि बाद में जीवन काल में शरीर पर छोटे छोटे मत्से आते रहते हैं। इससे यह मालूम हो रहा हैं कि सिर्फ यह बताने केलिये ही पैदाइश के मत्सायें हमारे जिसम पर मौजूद हैं कि जब पैदा हुये थे तब और पैदा होने के बाद हमेशा तेरा शरीर मेरे आधीन में ही हैं, तुम मेरी नज़र में ही हो।

पैदा हुआ स्त्री शरीर हो,पुरुष शरीर हो मत्सायें रह कर ईश्वर की मौजूदगी को ज़ाहिर कर रहे हैं। यह विषय बताने केलिये ही पूर्व में दैवज्ञान को जाने हुये बडेलोग शादि के कार्य में दुल्हा,



दुल्हन के चहरे पर प्रत्येक से दिखे जैसा गालों पर काले टीके को लगाते थे। दुल्हे को सीधे तरफ गाल पर काला टीका रखे तो, दुल्हन को बायें तरफ काले टीके को लगाया करते थे। **ऐसा लगाने में बडों का भाव यह हैं कि शरीर में सीधा तरफ परमात्मा से संबंदित हैं, बाया तरफ प्रकृति संबंदित हैं। यह जानलें कि इसी मतलब के साथ अर्थनारीश्वर आकार भी सीधे तरफ ईश्वर की तरह बायें तरफ पार्वती की तरह चित्र करके दिखायें।** यह जानलो कि पैदाइश के वक्त जो तिल (मत्सा) हमारे जिसम पर ईश्वर ने रखा है उस मत्से के नमूने के तौर पर ही गाल पर काला टीका लगाते थे। बहुत ही महत्व दैवज्ञान को बताने के लिये निशानि के तौर पर रख्खी गयी मत्सा को नज़र का टीका या दृष्टि का टीका हो नहीं कहना चाहिये। ऐसा समझना गलत हैं। पूर्व में शादि के कार्य में हर कार्य का अर्थ या खुलासा वधू वरों को बताया करते थे। बडे लोग गाल पर टीका ज़रुर लगाया करते थे ताकि जब तक उन्हे जो दैवविषय नहीं मालूम है उस विषय को उस दिन से वधू वरों को मालूम होना चाहिये। वह आचरण इन दिनों में भी बाकी रहने के बावजूद भी उसमें जो दैवज्ञान बसा हुआ हैं वह तो किसी को खयाल नहीं हैं। हम यह बता रहे हैं कि कम से कम अब से तो बडों ने जो इंदू साँप्रदाय बतायें उनके प्रकार अर्थसहित के साथ गाल पर टीका लगाकर शादियाँ करलेनी चाहिये।



वडि बिय्यमु - मुडि बिय्यमु

(गोद में चावल - चावल गांठ बाँधना)

शादि के कार्य में दुल्हे को मुडि बिय्यमु,दुल्हन को वडि बिय्यमु बाँधने का साँप्रदाय भी पूर्व में रहा करता था। **चावल** को

तेलुगु ज़बान में **बिय्यमु** कहते हैं। दुल्हन के पेट के सामने चावल डालके गांठ बाँधने को तेलुगु ज़बान में **वडि बिय्यमु** कहते हैं उसीतरह अगर चावल दुल्हे के टवल में डाल के गांठ बाँधने को **मुडि बिय्यमु** कहते हैं। दुल्हे के कन्धे पर एक टवल के आखिर में थोडे चावल को गांठ डालकर रखते थे। रेशम के शालुवे में चावल को गांठ बाँध कर सीधे कन्धे के ऊपर से पीछे बायें कन्धे के नीचे लाकर ऐसा लटकाके रखते थे कि वह सीधे कन्धे के पीछे के तरफ रहें। आगे से सीधे कन्धे पर बाये बगल के नीचे वापिस बायें कन्धे के ऊपर शालुवा दिखता हैं। चावल की गांठ तो सिर्फ सीधे कन्धे के पीछे लटकाये जैसा रहता हैं। इसतरह रखलेने से उसे देखते ही ऐसा लगता हैं कि सद्दि की पोटली (खाने की थैली) पीछे लटकालिये जैसा रहती हैं। पूर्व काल में एक वाक्य रहता था कि **बडों की बात सद्दि की पोटली जैसी हैं** यानि खाने की पोटली है। **बडों की बात मतलब जो लोग ज्ञान जानते हैं उन्होने कही हुयी आत्मज्ञान ही बडों की बात हैं।** दैवज्ञान को बडों की बात कहना सहज ही है । यह बात बतानेकेलिये ही गांठी डाला हुआ चावल को दुल्हे को बाँधते थे कि दैवज्ञान को बडों से मालूम करके मैं भी हमेशा ज्ञान को अपने अंदर रख्खूँगा । मनुष्य के अंदर का ज्ञान बाहर नज़र न आते हुये रहता हैं। इसलिये यह नहीं कहसकते हैं कि किस मनुष्य में कितना ज्ञान बसा हुआ हैं। देखते ही ज्ञान नहीं दिखता इसलिये चावल को ज्ञानचिह्न की तरह बनाकर पीछे इसलिये रख्खे हैं ताकि वह नज़र न आये। यह शादि के समय में दुल्हे को बाँधने का मुडि बिय्यमु (गांठ बाँधा हुआ चावल) का साँप्रदाय है। **स का अर्थ अच्छा ज्ञान हैं, द्दी का मतलब बुद्धि हैं,** पूर्व में अच्छा ज्ञान रखनेवाली बुद्धि को सद्दि कहते थे और बोधा करनेवाले ज्ञानियों को बडे लोग कह कर बुलाते थे। इसीलिये अपने अंदर ज्ञान को रखने को सद्दि मूटा (खाने की पोटली) रखनेवाला

कह कर बुलाते थे। इसतरह की सद्दि मूटे के सैज में मुट्ठी भर चावल को पोटली में बाँधकर शादि में जो बडेलोग होते थे वे रखा करते थे। उसीको मुडि बिय्यमु (चावल की पोटली) कहा करते थे।

दुल्हन को पेट के सामने चावल को गांठ डालकर रखना भी हैं। इसतरह चावल रखने को वडि बिय्यमु कहते हैं। चावल कहते ही मालूम हो रहा हैं कि वे ज्ञान के चिह्न हैं। अब हम यह बयान करलेते हैं कि इसतरह चावल को गोद में रखने में पूर्व में बडों का उद्धेश क्या था। स्त्रीयों में गर्भोत्पत्ति का स्थान पेट हैं। अगर स्त्री का पेट पका तो पैदाहोनेवाली संतती दैवज्ञान को रखना चाहिये इस मक़सद से ही पेट के स्थान में ही चावल को बाँधते थे। स्त्री वडि बिय्यमु को यह बताने केलिये पहन रही हैं कि शिशु पैदा हुये तो उसे गोद में रखलेते हैं। गोद में पलने वाले बच्चे को मैं ऐसा बढा करुँगी कि वह सिर्फ अपने अंदर ज्ञान को ही रखें, मेरे पेट के संतती ज्ञान में ही बडा होकर सिर्फ ज्ञान ही अपने अंदर रखेगा। वडि बिय्यमु (गोद में भरनेवाले चावल) में चावल के साथ पाँच वस्तु रखने का तरीका भी हैं। वे पाँच वस्तु डूब गये जैसा चावल को ज्यादा डालके इसलिये बांधते हैं कि जो बच्चा पैदाहुआ वह पहले पंच भूतों की विषयों में पैदा होने पर भी, जैसे वह मेरे गोद में पलेगा पाँच प्रपंच के विषय दैवज्ञान में डूब जायेंगें। दुल्हे को मुट्ठी भर चावल बांधते हैं तो, दुल्हन को पाँच वस्तु डूबगये जैसा ज्यादा चावल को बांधने का आचार हैं। वडि बिय्यमु (गोद में चावल बांधना), और उसमें छोटे छोटे पाँच वस्तु रखना आज भी मौजूद है लेकिन उनका अर्थ किसी को भी नहीं मालूम। वडि बिय्यमु का अर्थ पोशीदा होजाने पर भी स्त्री यों को वडि बिय्यमु शादि में शोहर के घर को भेजते समय पेट के सामने बांधना आज भी हैं। लेकिन पुरुषों को आज यह तक नहीं मालूम कि शादि के समय में बांधने वाले मुडि चावल का क्या मतलब हैं। अर्थ मालूम

न होने पर भी वडि बिय्यमु बांधना आज भी मौजूद हैं। यह कहसकते हैं कि मुडि बिय्यमु का आचार आज कुछ जगहों पर नहीं हैं। शादि यानि ईश्वर हैं, चावल यानि ज्ञान हैं यह बात न मालूम होने की वजह से आज शादि के सब कार्य अज्ञान के साथ ही जुडे हुये होकर हैं। कम से कम अबसे तो यह जानो कि शादि का कार्य मतलब ईश्वर के बारे में बतानेवाला कार्य हैं इसतरह समझे तो ही सही इंदूसाँप्रदाय को अमल करने वाले होंगें। असली बीवी शोहर होजायेंगें। मतलब जाने बिना की गयी शादि ड्रामे वाली शादि हाती है जब वे नाटकवाले बीवी शोहर होंगे लेकिन असली बीवी शोहर नहीं होंगे।



कालि मेट्टेलु (बिछुआ)

(पैरों में पहनने वाले छल्ले)

तेलुगु ज़बान में ससुराल को **मेट्टिनिल्लु** कहते हैं ऐसा ही मैके को **पुट्टिनिल्लु** कहते हैं। इस ग्रंथ में पहले भी बताचुके कि जो ज़बान आध्यात्मिक से बहुत ही खरीब हैं वह तेलुगु ज़बान ही है इसलिये यहाँ पर शादिशुदा औरतें पैरों में लगालेने वाले छल्ले (रिंग्स) में छुपी हुयी आध्यात्मिकता को समझाने के लिये तेलुगु ज़बान के ही शब्द इस्तेमाल किये गये। भाषा सिर्फ अपने खयालों को दूसरों को ज़ाहिर करने केलिये इस्तेमाल होने वाली एक टूल हैं इसीलिये भाषा से भी भाव बहुत इंपार्टेन्ट हैं। चलिये, अब असल बात पर आते हैं। पुट्टिनिल्लु (मैका), मेट्टिनिल्लु (ससुराल) सिर्फ स्त्रीयों को ही रहता हैं। पुरुष को सिर्फ मैका है। परमात्मा जो पुरुष है वह हमेशा एक ही तरह रहता हैं कभी भी नहीं बदलता यह बात बतानेके लिये ही बडों ने कहा कि पुरुष जो परमात्मा की निशानि हैं उसे सिर्फ मैका ही रहता हैं।

लेकिन प्रकृति जो स्त्री स्वरुप है, वह हमेशा एक ही तरह नहीं रहती, पैदा होने के बाद बदलती रहती हैं यह मालूम हुये जैसा हमारे बडों ने ऐसा कहा कि स्त्री जो प्रकृति की निशानि हैं उसे मैके के साथ साथ ससुराल भी हैं। पैदाइश (तेलुगु ज़बान में पुट्टुटा), मौत (तेलुगु ज़बान में गिट्टुटा) के बीच जीना (मेट्टुटा) भी हैं। जीना यानि जीवन को गुजारना। प्रकृति के वजह से ही जीव जीवित (जीवन) विधान को गुज़ार रहे हैं। इसीलिये यह कहते आये थे कि ससुराल रखनेवाली स्त्री हैं। इसतरह बडे लोग इसलिये कहते थे कि इससे पुरुषतत्व परमात्मा को (ईश्वर को), स्त्री तत्व प्रकृति को मालूम करेंगे।

शादि के बाद मैके में कोडुकु (बेटा) बेटे की तरह ही रहता हैं,मगर घर आयी हुयी लडकी तो **बहू** कहलानेवाली एक नया नाम पाति हैं। जिनके नाम शादि के वक्त पेल्लि कोडुकु (दुल्हा), पेल्लि कूतुरु (दुल्हन) थे शादि के बाद पेल्लि कोडुकु (दुल्हा) **कोडुकु** (बेटे की तरह ही रहजाना), पेल्लि कूतुरु (दुल्हन) बहू (तेलुगु जबान में **कोडलु)** की तरह नाम बदलजाने में जरुर कुछ न कुछ विषेशता है कहसकते हैं। वह यह है कि! **कोडुकु (बेटा), कोडलू (बहू) शब्दें ही बहुत ही प्रत्येक अर्थ के साथ जुडे हुये शब्द हैं।** कोडुकु एक वचन से जुडा हुआ है तो कोडलू बहुवचन से जुडी हुयी है। आध्यात्मिक अर्थ के प्रकार कोडुकु (बेटा) परमात्मा का अंश हैं तो कोडलु (बहु) प्रकृति का अंश हैं कहसकते हैं। उसके प्रकार यहाँ बेटा मतलब एक वचन से कहेजाने वाली परमात्मा की अंश जीवात्मा है तो, बहू (कोडलु) का मतलब बहुवचन से कहेजाने वाली प्रकृति की अंश गुण ही बहू है। **गुणों की, जीव की निशानि के तौर पर बहू,बेटा कहना पूर्व में रहता था।** शरीर में के गुणों से जीव मिलजा रहा हैं इसीलिये मिलनेवाले को या जुडनेवाले को एक वचन में बेटा कह रहे हैं। उसीतरह ही गुण भी जीव को अपने में मिलाले रहे है। इसलिये जीव को अपने साथ

मिलालेने वाले या जुडालेनेवाले गुणों को बहुवचन में कोडलु (बहु) कहा हैं। कोडुकु (बेटे) का मतलब जुडनेवाला, कोडलू (बहू) का मतलब जोडेजानेवाली है। यहाँ आध्यात्मिक मतलब यह है कि जुडनेवाला जीव है तो, जोडेजानेवाले गुण है।

शरीर में जीनेवाला जीव है तो जीवन को कार्य रुप में चलानेवाले गुण हैं। गुणों को यानि प्रकृति का दूसरा रुप स्त्री को ससुराल है कहते हैं। मेट्टिनिल्लु (सास का घर) का मतलब जीवित को चलानेवाली है। उसीको बाह्य रुप से इसतरह कहते हैं कि अगर एक औरत मैके (खास घर) से ससुराल (सास के घर) गयी तो मरे तक वहीं पर उसको रहना होगा। सांस रुकजाती है तो ही मौत आति हैं। पंचभूतों में सांस दूसरीवाली हैं। जब हम जिंदा होते हैं उस वक्त सांस आत्मशक्ति की वजह से ही चल रही हैं। बडे लोग कहते थे कि ससुराल में रहनेवाली स्त्री मरण तक खुद को ताकत देनेवाली आत्मा को भूलना नहीं चाहिये। जीव की ज़िंदगी को गुणों से चलानेकेलिये शरीर में आत्मशक्ति इस्तेमाल हो रही हैं। आत्मा जबतक शरीर में सांस चलाति हैं तब तक ही जिंदगी चलती हैं। अगर सांस रुकगया मतलब अंदर के गुण भी रुकगये हैं।

जीवन चलने केलिये पंचभूत काम कर रहे हैं ऐसा ही शरीर को चलानेकेलिये पैर काम कर रहा है। जिसतरह गुज़रते हुये जीवन केलिये पंचभूत हैं, उसीतरह चलता हुआ पैर को भी पाँच उंगलियाँ हैं। अगर पैर के उंगलियों को पंचभूतों की तरह हिसाब करलिये तो पहली बडी अंगूठा आकाश की तरह, दूसरी उंगलि हवे की तरह, तीसरी उंगलि आग की तरह, चौथि उंगलि पानि की तरह, पाँचवीं उंगलि भूमि की तरह याद रखलेना पडेगा। दूसरी उंगलि हवे की तरह हिसाब किये जाकर शरीर में की सांस (प्राण) की निशान होकर हैं। सांस को ही प्राण भी कहरहे हैं। शरीर में जब

तक प्राण होता हैं तब तक ही जीव रहता है। जब तक आत्मा है तब तक ही प्राण रहता हैं। यह मत भूलना चाहिये कि प्राण यानि सांस आत्मशक्ति के वजह से ही चलरहा हैं। ससुराल में रहनेवाली स्त्री को मरनेवाला घर भी वही होना चाहिये। इसीलिये जबतक प्राण है तबतक वहीं पर (ससुराल में) बहू के नाम से रहना चाहिये। अगर हम गुज़रती हुयी प्रकृति जीवन को चलरहा पैर के साथ कम्पार किये तो, पैर के उंगलियों को पंचभूत के साथ कम्पार करते हैं तो, उसमें की दूसरी उंगलि को प्राण की तरह कम्पार करते हैं तो, यह मालूम होता है कि प्राण आत्मा की वजह से ही चल रही हैं लोगों को यह बात मालूम होने के लिये ही स्त्री के पैर के दूसरी उंगलि को **मेट्टे** (बिछुआ) के नाम से अंगूठी जैसी चीज़ को आत्मा की निशानि के तौर पर रखना हुआ। लोहों में से सोने को परमात्मा की निशानि की तरह, चांदी को आत्मा की निशानि की तरह,रागि (तांबे) को जीवात्मा की निशानि के तौर पर बडों ने रखा। इसतरह निर्णय करके मंगलसूत्र (तेलुगु में तालि बोट्टु) जो परमात्मा की निशानि हैं उसे सोने के साथ, आत्मा की निशानि मेट्टों (रिंग्स) को चांदी के साथ बनवाते थे। आज भी वही पद्दती चलरही है फिर भी यह कहसकते हैं कि चांदी के छल्लों का, सोने के मंगलसूत्र का अर्थ किसी को नहीं मालूम।

जब तक मौत आती है तबतक जीवन को गुज़ारना ही पडेगा, जीवन सांस से चलरही हैं, वह सांस आत्मा की वजह से चल रही हैं यह बताने केलिये ही कि शादि हुयी हर स्त्री के पैर के दूसरी उंगलि को मेट्टेलु (बिछुआ) रखना सांप्रदाय हुआ है। मेट्टों की सांप्रदाय आज भी बाकी होना थोडे हद तक खुशी पंहुचाये तो भी, लेकिन उनका विवरण कोई नहीं जानना यह तो थोडा चिंता करने की बात ही है। यह जानना भी आत्म ज्ञान ही हैं कि पैर को लगालेने वाली छल्ले की

तरह है, वह जीवित आत्ममय होकर आत्मा के वजह से ही चलरही है कहनेकेलिये चांदी से ही छल्लों की धारण करना चाहिये, वो छल्ले भी वे स्त्रीयाँ ही पहननी चाहिये जिन्होने बहू का नाम पाया हो। बडोंने शादि के कार्यों में आत्मज्ञान सांप्रदायों को रखा है तो, आज उन सांप्रदायों का अर्थ मालूम न होने पर भी कम से कम कुछ आचार तो हमारे बीच बाकी हैं। **रिंग्स पहनने का आचार इधर इंदूमत में ही नहीं बल्कि उधर क्रिस्टियन मत में भी और इस्लाम मत में भी भारत देश में नज़र आ रहा हैं।** प्रत्यक्ष से मालूम न होने पर भी परोक्ष से ईश्वर की ज्ञान को बताने का सांप्रदाय दूसरे मतों में भी रहना खुशी की बात हैं। आगर कोडुकु नहीं है तो कोडलु शब्द का मतलब ही नहीं है। इसीलिये उस पत्नि के पैर के छल्लों को निकाल दे रहे हैं जिसका पति मरा हो। कोडुकु कोडलु आध्यात्मियुक्त शब्दे हैं। इसीलिये आध्यात्मिक अर्थ के साथ ही कोडुकू जाने के बाद छल्लों को निकालना हो रहा हैं। बिना छल्ले वाली स्त्री का मतलब यह हैं कि वह औरत (बीवी) जिसका शोहर नहीं हैं उसीतरह आध्यात्मिक से इस हालत को ऐसा समझना चाहिये कि बिना आत्मा की प्रकृति जैसी है। (यानि बिना आत्मा के प्रकृति मुरदे के बराबर हैं)

तालिबोट्टु

(मंगल सूत्र)

सर्व प्रपंच को जिसने बनाया वह परमात्मा ही हैं उसके बावजूद भी परमात्मा नहीं दिखता। सिर्फ बनायी गयी प्रकृति ही नज़र आ रही हैं। प्रकृति स्वतंत्र से दिख रही हैं फिर भी नज़र न आते हुये वह परमात्मा के आधीन में ही हैं। प्रकृति में की अणु से लेकर भूगोल

तक, सूर्यगोल से लेकर बहुत ही बडा नक्षत्र समुदायों तक अपने आधीन में रखकर चलानेवाली शक्ति ही परमात्मा हैं। प्रकृति स्त्रीतत्व है तो परमात्मा पुरुषतत्व की तरह हैं। इसतरह इन दोनों की मौजूदगी को बताने केलिये ही जगति में स्त्री पुरुष के शरीर तयार हुये। प्रकृति पुरुष से ही जगत तय्यार हो रही हैं इस सिद्धांत के प्रकार ही स्त्री पुरुषों को संतान हो रही हैं। शादि के दिन पुरुष स्त्री के गले में एक रस्सी को गांठ (ढ्वत्तद) डालरहा हैं ताकि उससे यह मालूम हो कि हमेशा प्रकृति परमात्मा के आधीन में ही हैं। **प्रकृति में तीन अक्षर हैं उसके बराबर ही रस्सी से तीन गांठ डाल कर यह बता रहे हैं कि तुम प्रकृति हो तो मैं पुरुष हूँ।** निशानि को तेलुगु ज़बान में बोट्टु (सूत्र) भी कहते हैं। आधीन के निशानि के तौर पर सोने की बोट्टु (सूत्र) को बांधना हो रहा हैं इससे यह भाव पैदा करना चाहते हैं कि उस दिन से (यानि जिस दिन मंगल सूत्र बांधा उस दिन से) स्त्री पुरुष के आधीन में रहना चाहिये। आधीन के लिये यह सूचना हैं इसलिये उसे आलिबोट्टु कहा करते थे, यह जानलें कि कालक्रम में आलि बोट्टु तालि बोट्टु में बदल गया। तालि (मंगलसूत्र) बांधने में आध्यात्मिक अंतरार्थ यह है कि प्रकृति (स्त्री) पर पुरुष की (ईश्वर की) हकूमत है।

प्रकृति पुरुषों की जानकारि को बतानेवाली तालिबोट्टु (मंगल सूत्र) है। परमात्मा के ज्ञान को अपने अंदर बसाकर रखी है होने से तालिबोट्टु को **सोने** से तय्यार करते थे जो लोहों में से बडी खीमती और पवित्र है। तालिबोट्टु गोल सोने की रेक से तय्यार करके उसके बिच के हिस्से में छोटा सा गड्ढा रखते थे। अगर एक तरफ गड्ढा करें तो दूसरे तरफ ऊंचा दिखता हैं। सांप्रदाय तरीके से तय्यार करनेवाला तालिबोट्टु (मंगल सूत्र) एक तरफ गड्ढे की तरह रहते हुये एक तरफ ऊंचे से रहता हैं। पूर्व में बडे लोग इसतरह बताते थे कि उत्तल से

रहनेवाला ऊंचेवाला हिस्सा परमात्मा (पुरुष) की निशानि है,जो हिस्सा गड्ढे की तरह हैं वह प्रकृति (स्त्री) की निशानि है। दुल्हा, दुल्हन को जब तालिबोट्टु बांधता है तो गड्ढे वाला हिस्सा बाहर दिखे जैसा, ऊंचावाला हिस्सा अंदर के तरफ रहे जैसा बांधते थे। जब स्त्री तालि पहनती हैं तो अगर कोई देखता है तो उसे गड्ढेवाला हिस्सा दिखता हैं। इसतरह दिखने में यह रहस्य छुपा हुआ हैं कि जो दिखता है वह सबकुछ प्रकृति ही हैं, तेरे सामने तुझे जो कुछ भी दिख रहा हैं वह सब प्रकृति स्वरूप ही हैं। तालिबोट्टु के पीछे नज़र न आनेवाला ऊंचा हिस्सा है। इसतरह ऊंचा हिस्सा नज़र न आने में यह रहस्य छुपा हुआ हैं कि प्रकृति के पीछे नज़र न आनेवाला ईश्वर है, अगर प्रकृति को पार करें तो ही ईश्वर के बारे में मालूम होगा। इसतरह बडों ने प्रकृति परमात्मा के विषय को तालिबोट्टु में बसाकर रखे हैं। इंदू धर्मयुक्त के साथ दैवज्ञान के प्रकार तकरीबन एक इन्च चौडेवाले सोने के सिक्के पर बीच में एक तरफ थोडा गड्ढा, एक तरफ थोडा ऊंचा रखके बनाते थे। आज के ज़माने में कुछ प्रांतो में एक सिक्के के स्थान में दो सिक्के आगये। इसतरह दो सिक्के पहनना सांप्रदाय विरुध्द हैं, धर्मरहित हो रहा हैं। कुछ लोग तो ऐसा रख रहे हैं कि थोडा चौडावाले सिक्के पर बीच में गड्ढा रखे बगैर सिक्का पूरा गड्ढा बना दे रहे हैं। और कुछ लोग ऐसा सिक्का ही पहन रहे हैं जिसके बीच में गड्ढा हो मगर ऐसा पहन रहे हैं कि गड्ढेवाला हिस्सा अंदर की तरफ हो। इसतरह पहनना भी ज्ञान विरुध्द होता है। ज्यादा सिक्कों को पहनना, ऊंचेवाला हिस्सा अंदर के तरफ रहे जैसा पहनना बे मतलब का काम हो रहा हैं। उसके वजह से इंदू सांप्रदाय दबजाकर अज्ञान बढजाता हैं। आलि बोट्टु का अर्थ जानकर पहनने से उनमें इंदुत्व दिखता है। वरना उसका नाम इंदू (ज्ञानी) होने पर भी असल में वह इंदू (ज्ञानी) नहीं है।

अक्षिंत

क्षय का मतलब नाश है। अक्षय का मतलब नाश नहीं होनेवाला है। परमात्मा क्षय नहीं हैं वह अक्षय हैं,परमात्मा का ज्ञान अक्षय है। अक्षय ज्ञान की निशानि ही चावल से तय्यार की गयी अक्षिंत हैं। अक्षिंत यानि वह चीज हैं जो नाश न होनेवाले दैवज्ञान के साथ जुडी हुयी हैं। तालिबोट्टू (मंगल सूत्र) बाँधने के बाद फौरन पूर्वकाल में वधूवरों को अक्षिंत दूसरों से उनके सर पर डलवाते थे। वे अक्षिंत इसलिये डालते थे कि अबतक तुम पेह्लि कोडुकु (दुल्हा), पेह्लि कूतुरु (दुल्हन) की तरह थे अबसे बीवी शोहर की तरह या पतिपत्नि में बदलगये, अब से तुमलोग ज्ञान मार्ग में ज्ञान को बढालेना चाहिये। पूर्वकाल में उन योगियों को या महर्षियों को शादि के दिन आह्वान करके उनके हाथों से अक्षिंत डलवाते थे जो ज्ञान निष्टा रखते हुये अपने ज्ञान शक्ति कहलानेवाली अग्नी को अपने अंदर रखते थे। दूसरे कोई भी डाला नहीं करते थे। इसतरह करने से ज्ञानियों के, योगियों के हस्तों से डालनेवाले चावल अक्षिंत कहलानेवाले ज्ञान शक्ति रखते हुये बीवी शोहर के शिरस्सों को छूकर वह ताकत उनके सरमें प्रवेश करके उनकेलिये वही उपदेश बनता हैं। क्योंकि बडे लोग यह जानते थे कि ज्ञान शक्ति या ज्ञानाग्नि को दान में पाना ही उपदेश हैं इसीलिये पूर्वकाल में वे सिर्फ ज्ञानाग्नि रखनेवाले ज्ञानियों, योगियों के हाथों ही अक्षिंत को डलवाते थे। योगि या महर्षि के सिवा किसी और को अक्षिंत नहीं दिया करते थे। लेकिन आज के ज़माने में यह मालूम न होते हुये कि अक्षिंत क्या हैं? वे किस के हाथ डलवानी चाहिये? क्यों कि हमें उनकी मतलब की प्रामुख्यता नहीं मालूम आज सब के हाथों में देकर डलवारहे हैं। वह भी हम ऐसी हालत में हैं कि कौन किसको डाल रहा हैं यह भी हमें नहीं मालूम इसीलिये जो लोग आये हैं उन सब के सर पर अक्षिंत गिर रहे हैं। इस हिसाब के प्रकार यह जानलें

कि अक्षिंत डालने का साँप्रदाय आज भी बाकी रहने पर भी उसका अर्थ सौ के सौ फीसद खत्म होगया है। कहीं पे भी हो मंदिर गोपुर पर लक्ष्मि विश्नों की शादि होने वाली संघटन तसवीरों के रुप में रहना देखे होंगे। वहाँ पर नारद तुंबुरजी वगैरा लोग सैड पर ठहर कर रहते हैं तो, एक ही एक महर्षि उनको अक्षिंत डाले जैसा तसवीर बनाकर प्रतिष्टा करके रहने पर भी उसका मतलब या अर्थ पोशीदा होगया हैं। इस बात से हम खुश हैं कि कम से कम पुरातन में तय्यार हुये देवालयों पर तो एक ही व्यक्ति डालने का सांप्रदाय तसवीरों के सूरत में बाकी हैं। ऐसा बोलकर हम लोग चुप नहीं रहना चाहिये दूसरों को बतायिये कि यह हमारा साँप्रदाय है और इस बात का खयाल रखिये कि इंदू धर्म आचरण हुये जैसा करना हर एक ज्ञानी की ज़िम्मेदारि है। सिर्फ ज्ञानाग्नि रखनेवाले योगियों से ही अक्षिंत को डलवाकर जब तक जो लोग उपदेश नहीं पाये उनसे कहेंगे कि यही उनकेलिये पहली उपदेश हैं। जो लोग पहले ही उपनयन उपदेश को पाचुके थे उनकी ज्ञान को और भी बढाने की कोशीष करेंगे।



तलंबर

आज के ज़माने में ऐसी अर्थ हीन शादि कर रहे हैं कि शादि तक बगैर ज़िम्मेदारि से बडेहुये युवती युवकों को कम से कम तुम दोनों शादि से तो प्रपंच में डूब कर प्रपंच धन को ही कमाते हुये ज़िंदगी जी लो (कहते हुये शादि कर रहे हैं)। पूर्व काल में ऐसा नहीं किया करते थे,वे धर्मयुक्त साँप्रदायों की आचरण के साथ ही शादि किया करते थे। शादि को बडी ज्ञानोपदेश की तरह समझते थे। उस दिन के बडों का संदेश यह हैं कि अक्षिंत कहलानेवाली ज्ञानकिरण

महात्माओं से अपने सरों को छूने के बाद, जिंदा रहनेवाली पूरे जिंदगी भर ज्ञान हासिल करने में ही जीतेहुये दामपत्य जिंदगी गुज़ारो। उसदिन के बडों का ज्ञान संदेश यह हैं कि अगर दामपत्य जिंदगी में बीवी को ज्ञान नहीं हैं तो शोहर उसे ज्ञान बतानी होगी, अगर शोहर को ही ज्ञान नहीं हैं तो बीवी उसको ज्ञान पहुँचाना चाहिये। यह जानलें कि तलंबर एक दूसरे के सर पर डालकर दिखाने में मक़सद या ज्ञान यह हैं कि शोहर बीवी के सरको ज्ञान पहुँचाना चाहिये, ऐसा ही बीवी शोहर के सर को ज्ञान पहुँचाना चाहिये।

हमने पहले ही मालूम करलिया कि चावल ज्ञान की चिह्न हैं। अंबर यानि आकाश हैं। तलंबर यानि आकाश से जो सर को पहुँचता हैं। ज्ञान आकाश से शब्द रुप में पहुँच रहा हैं। बाहर से जो शब्द आरहा हैं वह कानों के द्वारा सर में पहुँच रहा हैं। इसलिये ज्ञान को तलंबर कहा हैं। एक दूसरे के सर पे तलंबर को डाललेने में पूर्वजों का भाव यह हैं कि बीवी से शोहर को, शोहर से बीवी को ज्ञान फैलना चाहिये, एक के सहकार (मदद) से दूसरा उपदेश को पाकर बाद में ज्ञान को बढालेना चाहिये यह बताना ही इस कार्य में छुपाहुआ अंतरार्थ हैं। बहुत ही महत्व मतलब के साथ जुडा हुआ आचार इस ज़माने में अर्थ हीन होने के बावजूद भी हम इस बात को लेकर खुश हैं कि कम से कम वह कार्य (आचरण) तो आज बाकी हैं। सिर्फ इतने से खुश होकर चुप न रहते हुये इस बात का खयाल तुम लोग रखना चाहिये कि यह आचरण धर्मयुक्त हैं, जब यह आचरण मतलब के साथ जुडा हुआ होता हैं तब ही उससे फायिदा हैं अगर वैसा नहीं करसके तो शादि उस खिलोने की खेल के बराबर हैं जो छोटे बच्चे खेलते हैं।

अरुंधति नक्षत्र

तालि (मंगल सूत्र) बाँधने के बाद, महात्मा से अक्षिंत डलवालेने के बाद,तलंबर सरों पर डाललेने के बाद, आख़िर में और एक कार्यक्रम हैं वही अरुंधति नक्षत्र को दिखाना। यह आचरण भी शादि में मुख्य आखरी साँप्रदाय हैं। उसके बारे में थोडा तफसील के साथ बयान करलेते हैं। चाँद ज्ञान की निशानि हैं तो नक्षत्र मोक्ष की निशानि हैं। सूर्य चंद्र बचे हुये कुछ नक्षत्र हमारे लिये पूरब पश्चिम की तरह हैं। इसलिये सुबह,रातों में कुछ नक्षत्र दिखना, कुछ नज़र न आना हो रहा हैं। उत्तर,दक्षिण के तरफ रहनेवाले नक्षत्र तो हमें हमेशा दिख ही रहे हैं। ऐसा ही उत्तर के तरफ हमेशा दिखनेवाले नक्षत्रों में से बडा नक्षत्र अरुंधति नक्षत्र हैं। वह दिन रात एक ही कोण (ॱत्डण्ठ) में रहकर दिखही रहा हैं। सुबह सूरज की रोशनी के कारण वह नज़र न आने पर भी अरुंधति नक्षत्र अहर्निश उत्तर कोण में मौजूद हैं। पूर्व में रात (रात्रि) के वक्त अगर शादि हुयी तो नये दंपतों (दुल्हा दुल्हन) को उस नक्षत्र को दिखाते थे। अगर सुबह के वक्त शादि हुयी तो वह नक्षत्र नहीं दिखेगा। इसलिये उस जमाने में **नेल वेंपलि पेड** को मंगवाकर ज़मीन पर बिचाकर उस पर दुल्हा दुल्हन को ठहराकर नक्षत्र को दिखाते थे। नेल वेंपलि पेड को खुंदलकर ठहरे तो सूर्यरश्मि नज़र न आते हुये पोशीदा होकर अंधेरे जैसा दिखते हुये सुबह ही नक्षत्र दिखते हैं। उसके लिये पूर्व में नेल वेंपलि पेड को शादियों में मंगवाया करते थे। कुछ लोगों को यह संशय आसकता हैं कि ऐसा दिखाने से फायिदा क्या हैं, उसका जवाब नीचे देखते हैं।

शादि के आचरण में दुल्हा, दुल्हन यह जानलिये कि ज़मीन पर पैदाहुये हर औरत मरद सब ईश्वर के संतान ही हैं इसलिये वे दोनों भी ईश्वर के बेटा बेटी ही हैं, और वे भाषिंग को इसलिये पहने

है कि आज के दिन से हम ज़रुर ज्ञान नेत्र रखेंगे, और वे तलवार इस मक़सद से पकडलिये कि ज्ञान दृष्टी रखके माया के बंधनों को काट देंगे, माया से जंग करनेवाले सैनिक की तरह रहूँगा, और महात्माओं से अक्षिंत इसलिये डलवालिये कि अक्षिंत कहलानेवाली ज्ञान से ज्ञानाग्नि को जलालेंगे, और तलंबर इसलिये एक दूसरे के सर पर डाललिये कि महात्माओं से ली हुयी ज्ञान से जलालिया हुआ ज्ञानाग्नि बुझे बगैर बीवी शोहर के ज़रिये, शोहर बीवी के ज़रिये ज्ञानाग्नि को और भी बढालेंगे यह सब करने के बाद वे आखिर में नक्षत्र को इसलिये देख रहे हैं कि उससे हम सबको यह पता चलें कि आखिर में हमें जहाँ पर पहुँचना है वह मोक्ष यहीं हैं। इसतरह जीव ईश्वर से अलग होकर हैं वह वापिस ईश्वर को पहुँच कर जन्म राहित्य करलेने केलिये जिन मार्गों का अनुसार करनी चाहिये उन मार्गों को आचरण में भावयुक्त के साथ दिखाना ही शादि आचरण का अर्थ हैं।



मंडप

हमें यह बताने के लिये ही पाँच खंभे वाली मंडप के अंदर ही शादि किया करते थे कि जीवात्मा जब पंच भूत निर्मित देह में बसा हुआ होता हैं तब यह पूरा विधान उसे अमल करना पडेगा। तो कुछ लोग यह सवाल पूछ सकते हैं कि यहाँ तो सिर्फ चार खंबे वाली मंडप ही हैं मगर पाँच खंबे वाली मंडप कहाँ हैं? उसका जवाब यह है कि! पंचभूत यानि आकाश, हवा, अग्नि, पानि, भूमि। इनमें अग्नि, पानि, भूमि आँख को नज़र न आते हुये हैं तो हवा स्पर्शा के द्वारा मालूम हो रही हैं। लेकिन सिर्फ आकाश तो प्रत्येक से रहते हुये बाकी भूतों की तरह मालूम हुये बगैर हैं। इसलिये वे चार खंभे जो दिख रहे हैं

उनको चार डैरेक्शन्स में गडा कर उनके आधार से ऊपर डालनेवाला मंडप यानि सिर्फ मध्यभाग पूर्व में ऐसा निर्माण किया करते थे कि गोपुर की तरह नोक ऊपर रहे। जबतक भूमि पर जो नोक छूकर है वे चार ही है तो पाँचवा नोक ऐसा रहता हैं कि वह हमें ऊपर के तरफ इशारा कर रहा हो। मंडप को इस मतलब के साथ निर्माण किया करते थे कि मंडप के बीच में ऊपर रहने वाला नोक आकाश हैं, नीचे सामने के तरफ रहनेवाले सीधे सैड का नोक हवा हैं, बायें सैड का नोक अग्नि हैं, ऐसा ही पीछे जो हैं उनको पानी भूमी की तरह पहचान कर हवा आग को एक तरफ पानी भूमी को एक तरफ बीच में वाला आकाश है इसी अर्थ के साथ मंडप का निर्माण किया करते थे। ऐसा निर्माण किया गया मंडप को गोल देखनेवालों को अर्थचंद्र आकार में दिखता था। अब कोई भी ऐसा मंडप नहीं डाल रहे हैं।

तलंबर तक मंडप के नीचे ही सब कार्य होने के बाद सिर्फ एक अरुंधति नक्षत्र की दर्शन करने केलिये ही मंडप से बाहर आते थे। उसका भाव यह है कि इतने से शादि होगयी यानि मोक्ष को पालिये जैसा। जिन लोगों ने मोक्ष को पालिया उनको वापिस जनम नहीं हैं। इसलिये शादि के मंडप के नीचे से बाहर आने के बाद वधूवर वापिस मंडप के नीचे नहीं जाते थे। उतने से शादि का कार्य भावयुक्त से खत्म होगये जैसा हैं।

पूर्व में शादि इंदुओं का साँप्रदाय होकर पूरे देश में फैला हुआ रहता था। इंदू का मतलब ज्ञानि हैं। क्योंकि पूर्व में यह ज्ञान देश था इसीलिये यह इंदूदेश नाम पायी हैं। कालक्रम में जिसतरह आलिबोट्टू तालिबोट्टु में बदलगया उसी तरह अज्ञान बढकर इंदू देश हिंदू देश होगया। हम हिंदुओं की तरह बदलजाने पर भी, और कुछ लोग दूसरे मतों की तरह बदलजाने पर भी सब में थोडा बहुत इंदु

साँप्रदाय बाकी रहना देखें तो धर्म अभी भी आखरी साँस से जिंदी है कहने के लिये यही निदर्शन हैं। कम से कम अबसे तो दैवज्ञान को जाने हुये लोग होकर जो धर्म निर्बल से हैं उन्हे भाव युक्त आचरणों के साथ वापिस जागे जैसा करते हैं। धर्म कभी भी नाश नहीं होंगे। कालक्रम में सिर्फ धर्मों को ग्लानि होसकती हैं। वह वापिस पुनरुद्धार किये जायेंगे।



क्या? शादि केलिये मुहूर्त!

यह बात तो सब जानते ही हैं कि शादि के कार्यों में मुहूर्तो को तै करना, मुहूरतों में ही शादि करना चाहिये कहना। मुहूर्त क्या हैं यह बात न जानते हुये भी जिस वक्त को पुरोहितों ने फैसला किया उसको पकड कर सबलोग मुहूरत कहना हो रहा हैं। कुछ पुरोहित ऐसे भी हैं कि जिन लोगों को मुहूर्त के बारे में ज्ञान नहीं हैं उनको धोका देते हुये कहते हैं कि हमने तुम्हारेलिये बडी महनत करके मुहूर्त को ढूँढा हैं। कुछ लोग ऐसे भी हैं कि शादि करलेने वालों के ज़रुरत का फाइदा उठाते हुये ज्यादा पैसे लेकर जो मुहूर्त है ही नहीं उसका फैसला करते हैं। कुछ पुरोहित इस महीने में मुहूर्त ही नहीं हैं कह कर सच कहने के बावजूद भी, कुछ लोग ऐसे हैं कि तुम जितना पैसा पूछोगे उतना पैसा देने केलिये हम तय्यार हैं कुछ भी करके महनत उठाकर हमारे लिये मुहूरत ढूँढके रखो। कुछ लोग तो ऐसे हैं जो इसतरह धमकी देते हैं कि जो वक्त हम बताते हैं उसीके प्रकार मुहूर्त को रखो। जो मुहूर्त है ही नहीं उसको रखने केलिये कुछ पुरोहित परेशान हो रहे हैं तो, कुछ पुरोहित ऐसे भी हैं कि एक ही दिन चार वक्तो पर चार मुहूरतों को रखकर सब मुहूरतों पर हाजिर होकर

मंत्र पढकर पैसे लेते हैं। इन सबको देखें तो योचना करने वाले कोई भी मनुष्य को हो यह सवाल ज़रुर पैदा होगा कि आखिर यह मुहूरत है क्या चीज़?

सिर्फ एक इंदू (हिंदू) मत में ही पंचांग, मुहूर्त कह कर बोलने वाले हैं। थोडे पंचांगो में पहले ही मुहूर्त तै होकर रहते हैं। कुछ पंचांगो में फैसला किये हुये मुहूर्त न रहने पर भी पुरोहित थोडे नियमों के प्रकार मुहूर्त का फैसला करते हैं। आज के ज़माने में यह कहना सहज ही हैं कि ग्रहों के गतों को, उनके स्थानों को नियमों को बनाकर फलाना काल में, फलाना ग्रह,फलाना वक्त में जब रहते हैं तब ही उसे मुहूर्त कहते हैं। ग्रह और उनके स्थानों के प्रकार फैसलाकिया गया वक्त को ही मुहूर्त कहते हैं इस नियम के प्रकार पहले ही मुहूर्त को पंचाँगों में फैसला किये हुये होते हैं। बहुत से लोगों को यह बात मालूम है कि पंचांगो में मुहूर्त रहते हैं। इसके मुताबिक ऐसा कहनेवाले भी हैं कि मुहूर्त बोले तो पंचांग है पंचांग बोले तो मुहूर्त है, मुहूर्त पंचांग में अंतर्भाग हैं। मुहूर्त सिर्फ एक शादि को ही नहीं बल्कि गृह आरंभ केलिये, गृह प्रवेश केलिये, डोलारोहन केलिये, केशखंडन केलिये, शोभन (सुहाग) रात केलिये, नामकरण केलिये वगैरा वगैरा बहुत से चीज़ों केलिये हैं। सभी केलिये पंचांग में ही मुहूर्त मिल रहे हैं। वह कोई भी हो जो पंचांग को जानता हैं वह मुहूर्त का फैसला कर रहा हैं। यह सब देखने के बाद इंदूमत में साँप्रदाय के नाम से जमगया हुआ मुहूर्त के बारे में हम कुछ बताना चाहे थे। शास्त्रो में चौथा शास्त्र खगोल शास्त्र के प्रकार पंचांग पैदा हुयी हैं। मुहूर्त पाँचवी वाली ज्योतिश्य शास्त्र के प्रकार पैदा हुयी। पंचांग कर्तायें खगोल शास्त्र के अनुसार पंचांग को लिखते हैं। जो लोग मुहूर्त का फैसला करते हैं उन्हे ज्योतिश्य शास्त्र के अनुसार जाना होगा (यानि फैसला करना पडेगा)। प्रस्तुत काल में जो लोग पंचांग जानते

हैं वे सब ज्योतिश्यों की तरह घूम रहे हैं। वास्तव में ज्योतिश्य (पंडित) बिना शास्त्रबद्धवाली ज्योतिश्य को बोल रहे हैं। एक जगह ज्योतिश्य शास्त्र के प्रकार कही गयी विषय को उसी शास्त्र के प्रकार दूसरे जगह पेहले जो बताया गया उसके खिलाफ बोल रहे हैं। शास्त्र का अर्थ यह हैं कि जो एक ही तरीके की ओर इशारा करती हैं, शासनों के साथ जुडी हुयी होती हैं, कभी भी उसका खंडन नहीं किया जासकता, शाप के जैसा वह हर हाल में पूरा होकर ही रहेगी। शासन शब्द से जो पैदा हुयी है वही शास्त्र है तो वह कभी भी बदलने वाली नहीं हैं। अगर एक न एक दिन कभी भी बदलनेवाली है तो वह किसी भी हाल में शास्त्र नहीं होसकता। असली खगोल शास्त्र के प्रकार तिथियों को, नक्षत्रों को वारों को, ग्रहों के गतियों को कहसकते हैं। भविष्य को बता नहीं सकते। भविष्य बताने केलिये प्रत्येकवाली पाँचवी शास्त्र ज्योतिश्य शास्त्र मालूम होकर रहना ज़रुरी हैं। उस पंचांग में जो खगोल शास्त्र के प्रकार है उसमें ग्रहों के गतियों को देखकर जोतिश्य शास्त्र के द्वारा भविष्य को कहसकते हैं। जोतिश्यों को खगोल शास्त्र के बारे में मालूम होकर रहने की ज़रुरत नहीं हैं। खगोल शास्त्र के प्रकार लिखि गयी पंचांगों को देखकर ग्रहों के गतियों को जानकर जोतिश्य (पंडित जी) उनको जो भविष्य की ज़रुरत है उसे मालूम करसकते हैं।

हमने बयान करलिया ना! कि पंचांग के प्रकार ग्रहों के गतियाँ होती हैं। भूमि एक गोल है, वह दिन में एक दफा वह अपने गोल खुद घूमने से भूमि पर रहने वाले हम लोगों को ऐसा लग रहा हैं कि सूरज भूमि के गोल एकबार घूमके आया हैं। उसके वजह से भूमि को बारह भागो में डिवैड करके एक दिन में सूरज बारह भागों को पार किये जैसा हिसाब कर रहे हैं। ऐसा समझिये कि मिसाल के तौर पर हम एक रैल में प्रयाण (सफर) कर रहे हैं। मानलीजिये कि

रैल गाडि को बारह भोगियाँ हैं। रैल के सडक के बाजू (सैड) में एक बडा बनयान का पेड मौजूद हैं। रैल जब पेड के सैड में सफर करती हैं तो रैल में बैठकर देख रहे व्यक्ति को ऐसा दिखता हैं कि रास्ते के सैड में जो पेड हैं वह बहुत ही तेज़ी से पीछे चलागया हो। लेकिन वास्तव में पेड नहीं हिला, रैल हिल रहा हैं। फिर भी ऐसा लग रहा हैं कि पेड ही हिल रहा हैं। उसीतरह खगोल में सूरज भी एक ऐसा ग्रह है जो रास्ते के सैड में हिले बगैर बनयान का पेड जैसा है वैसा ही वह भी नहीं हिल रहा हैं। भूमि हिलरही रैल की तरह बनयान पेड को पार किये जैसा सूरज के गोल सफ़र कर रही हैं। जिसतरह रैल में बैठे हुये लोगों को पेड हिले जैसा दिखा उसीतरह भूमि पर रहनेवाले हमको सूरज ही हिले जैसा दिख रहा हैं। वास्तव में सूरज नहीं हिला। हमने बयान करलिया ना कि रैल को बारह बोगियाँ हैं! एक एक बोगि की लम्बाई को, रैल की स्पीड को, पेड के स्थान को हिसाब करके देखें तो हमें यह मालूम होजायेगा कि पूरी रैल पेड को पार करने केलिये कितना वक्त लगेगा, और सिर्फ एक बोगी पार करने केलिये कितना वक्त लगेगा मालूम होजायेगा। ऐसा ही भूमि के बारह भागों के लम्बाई को भूमि के स्पीड को हिसाब करके देखें तो यह मालूम होजायेगा कि एक एक हिस्सा सूरज को पार करने केलिये कितना समय पकडेगा। इसके प्रकार भूमि एक एक भाग सूरज को पार करने केलिये सामान्य से दो घंटे पकड रहा है। बारह भाग पार करने केलिये २४ घंटे पकड रहे हैं। क्योंकि हम भूमि पर हैं इसलिये सूरज ही सफर किये जैसा हिसाब करलिये तो यह मालूम हो रहा हैं कि सूरज भूमि के एक भाग को पार करने केलिये दो घंटों का वक्त लगता हैं। उस दो घंटों के वक्त को **लग्न** कह रहे हैं। सूरज ज़मीन के एक भाग के शुरु से लेकर आखिर तक जब सफर करता हैं तो उस वक्त को लग्न कहना वास्तव ही हैं।

उदाहरण के प्रकार जिस रैल के बारे में हमने ज़िकर किया ऐसा समझिये कि उस रैल की एक एक बोगी एक किलोमीटर लम्बी हैं। और ऐसा समझते हैं कि रैल की स्पीड घंटे को आधाकिलोमीटर हैं। एक किलोमीटर लम्बी बोगी पेड को पार करने केलिये दो घंटों का वक्त लगता हैं। एक बोगी पेड को पार करने के दो घंटो में उस बोगी से एक पोटली नीचे गिर गयी समझो। उस दो घंटो में उस समय को खास तौर पर बताते हैं जिस समय पोटली नीचे गिर गयी। जिसतरह रैल से एक पोटली गिरी हुयी समय को प्रत्येक से पहचाने थे उसी तरह सूरज को पार करने की दो घंटों की लग्न में एक कार्य हुआ समय को प्रत्येक से कह रहे हैं। उस समय को ही महूर्त कह रहे हैं। इसके मुताबिक यह मालूम हो रहा हैं कि एक लग्न में मुहूर्त रहता हैं, मुहूर्त अलग हैं, लग्न अलग है। लग्न खगोल संबंधित हैं। मुहूर्त ज्योतिश्य संबंधित हैं।

मानव के जीवित में कब कौनसा काम या कार्य होना हैं वह प्रारब्द कर्म के प्रकार पहले ही तै किया हुआ होता हैं। जिसतरह जब पोटली प्रयाण में गिर गया तो वह समय हुआ उसीतरह जीवन में जब एक कार्य हुआ तो एक मुहूर्त हो रहा हैं। मनुष्य पैदा होते समय ही इसका निर्णय होचुका है कि मानव के जीवन में कौनसा कार्य कब होना चाहिये। उसीको ज्योतिश्यशास्त्र के प्रकार जातक कह रहे हैं। किसी के भी जातक में हो सब कार्यों के लिये महूर्त पहले ही तै किया हुआ होता हैं। उसी के प्रकार ही होकर रहेगा। छटवी शास्त्र यानि ब्रह्मविद्या शास्त्र भी यही बता रही हैं कि जब मनुष्य पैदा होता हैं तब ही उसका प्रारब्द कर्म निर्णय होचुका होता हैं। उसीको जातक कहते हैं। वह कोई भी हो उसको भुगतना ही पडेगा उससे छुटकारा पाने का मौका नहीं हैं। ज्योतिश्य के ज़रिये होनेवाले काम को मालूम करसकते हैं, लेकिन उस कार्य से बच तो नहीं सकते। इसके प्रकार

यह मालूम होरहा हैं कि मनुष्य मुहूर्तों को तै नहीं करसकता। प्रारब्द कर्म पहले ही सब मुहूर्तों की फैसला करके रखी हैं।

लग्न का क्या मतलब हैं? मुहूर्त का क्या मतलब हैं? यह जानने के बाद भी, लग्न केलिये कारण ग्रह हैं, मुहूर्त के लिये कारण प्रारब्द कर्म हैं यह बात जानने के बाद भी फलाना कार्य के लिये मैं मुहूर्त तै करूँगा, उस समय में ही वे काम होना चाहिये कहना अज्ञान ही होता हैं। ब्रह्मविद्या शास्त्र भगवद्गीता में साँख्य योग ४७ श्लोक में **कर्मण्ये वाधिकारस्ते** यह श्लोक के प्रकार **पाप पुण्य को कमालेने में तुझे अधिकार हैं लेकिन उनका फलित यानि कार्य करने में तुझे किसी भी तरह का संबंध नहीं हैं कह कर भगवान का वाक्य हैं।** भगवान के बात के खिलाफ अगर कोई भी इसतरह कहना अज्ञान ही होता हैं कि मैं फलाना समय में फलाना काम करूँगा। जब मानव को कामों में स्वतंत्रता नहीं हैं तो मानव एक काम केलिये पहले ही मुहूरत निर्णय करना अज्ञान ही होता है। ज्योतिश्य शास्त्र के अनुसार काम होगा कह कर पहले ही बतासकते हैं। लेकिन हम करवायेंगे कहना बचपना है यानि अज्ञान ही हैं। ब्रह्मविद्याशास्त्र के प्रकार एक शादि कब होगी यह पहले ही कर्म निर्णय में रहता हैं। ज्योतिश्य शास्त्र के प्रकार कर्म निर्णय में होनेवाले शादि के कार्य के विवरण को मालूम कर सकते हैं। दोनों को छोडकर, कर्मा को नज़र अंदाज करते हुये हम ही कर्मा के कर्तायें है समझकर शादि के मुहूरत नहीं रखनी चाहिये। ऐसा करना अधर्म होता हैं। इसीलिये पूर्वकाल में शादि केलिये मुहूर्त नहीं रखा करते थे। बिना मुहूर्त के शादि करलेना उस ज़माने का साँप्रदाय था। कुछ जगहों में बगैर मुहूर्त के आज भी शादियाँ हो रहे हैं। इसतरह बिना मुहूर्त के शादि होने के वजह से इंदूसाँप्रदाय आज तक भी नाश हुये बगैर बाकी है कहने केलिये आधार हुआ। शादि के लिये मुहूर्तें नहीं रहना चाहिये इसी भाव के

साथ पूर्व के ज्ञानी लोग एक वाक्य को प्रचार किये। **नित्य कल्याण पच्चतोरण** यहाँ पर पच्चतोरण यानि हरा तोरण हैं उनके कहने का मतलब यह हैं कि हरे पत्ते बाँधकर भी हो हमेशा शादि करसकते हैं,कल्याण केलिये मुहूर्त नहीं रहते। उनका भाव यह हैं कि अगर कर्म अमल में आया तो अमावास्या के दिन भी शादि हो सकती हैं।

आज के काल में भी तिरुपति क्षेत्रों में, और थोडे देवस्थानों में बगैर मुहूर्त के नित्य शादियाँ हो रहे हैं। हम हमारे आध्वर्य में करवाये हुये सब शादियों को मुहूर्त निर्णय किये बगैर ही शादियाँ किये। बगैर मुहूर्त के कार्य को कर्म पर छोडदेना ज्ञान होता हैं। **इसीलिये बिना मुहूर्त वाली शादि इंदूसाँप्रदाय होती हैं।** धर्मों के स्थान में अधर्म आकर रहने से यह मालूम हो रहा हैं कि तात्कालिक से धर्मों को ग्लानि पहुँची हैं। भगवान की बोली हैं कि जो धर्म पोशीदा होगये यानि मालूम हुये बगैर छुप कर हैं वे वापिस भगवान के ज़रिये ही बताये जायेंगे फिर धर्म संस्थापन होगा, चलिये इस वाक्य के प्रकार हम उम्मीद करते हैं कि सब इंदूसाँप्रदाय हमें मालूम होंगे।



क्या? शादि में वेद मंत्र !!!

मानव के जीवन में होने वाले सब शुभकार्यो में से अति उत्तम शादि का कार्य हैं। चाहे कितना भी बडा अज्ञानी को हो दैवसूचन देनेवाली एक ही एक बडा कार्य शादि हैं। यह बहुत ही महत्व पूर्ण बात हैं कि ज़मीन पर किसी भी प्राणि के जाति में शादि नहीं हैं लेकिन सिर्फ एक मानव के जीवन में ही शादि का कार्य हैं। शादि मनुष्य दैवमार्ग में प्रवेश करने केलिये द्वार जैसी हैं । दैव सूचना के सिवा कोई और समाचार न रखनेवाली शादि का कार्य बहुत ही पवित्र हैं।

पूर्व में बहुत ही अच्छी उद्देश से ही प्रारंभ करने पर भी शादि आज माया के प्रभाव में फसगयी हैं। मानव के सर में रहनेवाली माया इनसान को शादि की पवित्रता मालूम नहीं हुये जैसा की हैं। माया के प्रभाव से आज शादि ऐसे काम में बदलगयी कि जिसका कोई मतलब ही नहीं रहा । इतना ही नहीं वेदमंत्र शादि के कार्य में अपनी जगह बनालिये। तो कुछ लोग इसतरह का शक ज़ाहिर करसकते हैं कि शादि के कार्य में वेदमंत्र रहना तो अच्छी बात होती हैं लेकिन वह माया कैसे होसकती हैं? और ऐसा भी समझ सकते हैं कि जिसने ये बाते लिखी हैं शायद उन्हे वेदों की अहमियत नहीं मालूम हैं। आप लोग पूछ सकते हैं कि हिंदुओं केलिये तो वेदमंत्र बहुत पवित्र होते हैं ना। इसतरह चाहे कौन कुछ भी समझलें वे खुद अपने अंदर इस बात का खयाल करलेना चाहिये या क्रासचेक करलेना चाहिये कि जो बातें हम बात कर रहे हैं क्या वे शास्त्रीय हैं या अशास्त्रीय? क्या वेद का ताल्लुख ब्रह्मविद्या शास्त्र से हैं या नहीं? क्या वेद से ईश्वर को पासकते हैं ये सवालात हर एक को अपने अंदर डाललेने की ज़रुरत हैं।

ब्रह्मविद्या शास्त्र भगवद्गीता साँख्य योग में ४५ श्लोक में **त्रैगुण्या विषय वेदा** इस वाक्य के प्रकार, बाद में गीता में ही विज्ञानयोग श्लोक १४ में **गुणमयी मम माया** इस वाक्य के प्रकार, बाद में विश्व रुप संदर्शन योग में ४८ श्लोक इस वाक्य के प्रकार **न वेदा ऐवम रुपश्शक्या** वाक्य के प्रकार, ५३ श्लोक के प्रकार **नाहम वेदै शक्य विदो** इस वाक्य के प्रकार अगर हम बात को खुले तौर पर बयान करलेके देखें तो यह मालूम होजायेगा कि माया क्या चीज़ हैं।

माया वह है जो ईश्वर के व्यतिरेक दिशा में हैं। माया को दूसरे मतों में **सातान** या **सैतान** नाम रख के बोल लिये हैं। दूसरे मतों में लोग कहते हैं कि ईश्वर के मार्ग में माया हमारी मुकम्मिल दुशमन

हैं जो लोग ईश्वर पर विश्वास रखते हैं उनको माया के खिलाफ पेश आना चाहिये। पीछे आये हुये मत या मजहबों में भी ईश्वर के राह पर चलनेवाले माया के खिलाफ बात कर रहे हैं तो गीता के श्लोकों से भी यही मालूम हो रहा हैं कि सृष्टिआदि से रहनेवाली इंदूमत में भी माया की कोई अहमियत ही नहीं रहा करती थी। इंदूमत में भगवद्गीता के प्रकार देखें तो **गुणमयी मम माया, त्रैगुण्या विषय वेदा** कहना देखें तो यह मालूम हो रहा हैं कि माया गुणों के रुप में हैं, गुण विषय ही वेद हैं। उसके प्रकार **मालूम हो रहा हैं कि माया=गुण=वेद।** यह साफ तौर पर मालूम हो रहा हैं कि माया हमारे सरमें गुणों के रूप में रहकर बाहर वेदों के रुप में मौजूद हैं। इसके प्रकार यह मालूम हो रहा हैं कि माया कहें या वेद कहें एक ही बात हैं, वेदों में माया के सिवा ईश्वर नहीं हैं। बहुत से लोग हमसे इसतरह पूछ सकते हैं कि यह आप क्या कह रहे है? आप उन वेदों को माया कह रहे हैं जिसे संस्कृत भाषा सीखेहुये बडे पंडित, पूर्व के ऋषियाँ वगैरा सब बहुत महत्वपूर्ण कहा है, हर शुभ कार्य में वेदों का पठन किया जाता हैं, आज विदेशों में भी वेद की पूजा की जारही हैं, सब बडे लोग कह रहे हैं कि पूरा हिंदूसंस्कृति वेदों से ही जुडी हुयी हैं, उसदिन और आज आध्यात्मिक पीठ को अधिष्टान किये हुये शंकराचारि, रामानुजराचारि वगैरा सब आचार्य वेदों की पठन करते हुये,सब से वेदों की पठन करवा रहे हैं, और पंडित एक कंठ के साथ कहते हैं कि वेद हिंदुमत केलिये शिरोमणि जैसे हैं, और सब आस्तिक लोग वेद पर ही चलते हैं, पुराण इतिहास भी वेदों को बडी इज्ज़त के मुखाम (पोजिशन) पर रख्खे हैं, और कहते हैं कि चतुर्मुख ब्रह्म ने वेदों की रचना की हैं इसतरह बहुत से हिंदू लोगों के हृदयों में बडी महत्व स्थान को बनाली हुयी वेदों को आप माया कह रहे हैं? इस सवाल पर हमारा जवाब यह हैं कि! इनसान कह रहे हैं कि वेद

महत्व हैं, लेकिन भगवान कह रहा हैं कि वेद माया हैं, उसी बात को मैं यहाँ दौरा रहा हूँ लेकिन मैं ने खुद से नही कहा। सब के मन में वेद महत्व स्थान को बनाली हैं। इसलिये सबको ईश्वर मालूम नहीं हुआ। खुद भगवान ही गीता में वेदों को माया कहा हैं। इतना ही नहीं बल्कि विश्व रुप संदर्शन योग में ४८ श्लोक में, ५३ श्लोक में कहा कि वेदों के ज़रिये मैं मालूम नहीं हूँगा, उनसे मुझे मालूम करना ना मुमकिन हैं। यह कहना मुख्य नहीं हैं कि त्रिषियों ने कहा, संस्कृत पंडितों ने कहा, पीठाधिपतियों ने कहा। ईश्वर ने जो कहा वही मुख्य हैं। और ईश्वर यह भी कह रहा हैं कि मनुष्य के सर में रहनेवाली माया बाहर वेदों के रुप में हैं,वह सबको भ्रम में रखी हैं, **माया दुरत्यया** माया को पार करना ना मुमकिन हैं इसीलिये सब मुझे यकीन किये बगैर उसे यकीन कर रहे हैं। कोई भी मूर्खत्व से बहस किये बगैर अगर सत्य को मालूम करना चाहा तो ईश्वर की कही हुयी बात को सुननी ही पडेगी।

अगर माया से दूर ईश्वर के पास कोई रहना चाहा तो माया के कामों को छोडकर ईश्वर के काम करनी चाहिये। तो फिर ईश्वर के काम क्या हैं यह मालूम होने केलिये पहले यह जान्च कर देखलेना पडेगा कि माया के काम कौनसे हैं। अगर वैसे विवरण करके देखलिये तो ईश्वर की ज्ञान यानि शादि के कार्यों में माया वेद पठनों के रुपमें रहकर ईश्वर के ज्ञान को ही ढाँक ही हैं। इस बात की योचना करना ही पडेगा कि शादि जो दैवज्ञान रुप है उसमें माया रुप के वेद मंत्र रहे जा क्या? अगर इसतरह योचना करें तो मालूम यह होरहा हैं कि शादि में दैवज्ञान संबंधित मंत्र होसकते हैं मगर माया महत्य रखनेवाले वेदमंत्र नहीं होसकते। पूर्व में शादि में शादि की अहमियत जाने हुये ज्ञानियाँ दैवसंबंध मंत्र को ही पढा करते थे। वेदों से संबंध रखनेवाले मंत्र बिलकुल पढा नहीं करते थे। कालक्रम

में धर्मो को ग्लानि पहुँच कर दैवमंत्रों के स्थान में माया मंत्र आकर दाखिल हुये। आज के ज़माने में कौनसे भी शादि को देखलें वेदमंत्र ही होते हैं। फिर भी आज के ज़माने में भी हमारे आध्वर्य में होनेवाले शादियों में वेदमंत्र नहीं रहते। हम जो शादियाँ करवाते हैं उनको हमने ऐसा डिजैन किया कि वे इंदूसाँप्रदाय बद्ध के साथ, ईश्वर के संबंधित मंत्र के साथ,मतलब से जुडे हुये आचरणों के साथ रहें। दैवज्ञान संबंध मंत्रों को ही इंतेजाम किया ताकि लोगों को मालूम हो कि इंदू की शादि इसतरह ज्ञान संबंध से रहती हैं।

हम यह बता रहे हैं कि कम से कम अब तो आँखें खोलकर हम जो कह रहे हैं वह सब कुछ ईश्वर का पक्ष हैं, जो लोग माया के पक्ष में है वे भी माया को पैदा किया हुआ ईश्वर को अहमियत दिये जैसा शादि में वेद मंत्र छोडकर दैव मंत्रों का पठन करना अमल करना चाहिये। ऐसा करने से इंदूसांप्रदाय के परिरक्षण में हम पार्टनर्स होंगे। पैदा हुये वक्त से जिस माया मार्ग में हैं उसको छोडकर आज जो दैव मार्ग मालूम हुआ उस पर चलते हैं।

श्रीमति - श्रीमत

इंदू सांप्रदायों में शादि का कार्य बडी आध्यात्मिक संदेश के साथ जुडि हुयी होकर परमात्मा के खरीब पहुँचानेवाली होकर हैं। शादि के कार्य में तलंबर के प्रकार जब चलते हैं तब असली बीवी शोहर की तरह हिसाब किये जायेंगे। तलंबर के प्रकार चलनेवाले शोहर के नाम के सामने श्री, बीवी के नाम के सामने श्रीमति लिखना इंदू धर्म सांप्रदाय हैं। और यह भी मालूम हो रहा हैं कि ज्ञान संपन्न बीवी शोहर पवित्र ज्ञान के और परमात्मा के चिह्न हैं। **यह जानलें कि**

श्री शब्द परमात्मा की निशानि है तो, श्रीमति शब्द परमात्मा की ज्ञान की निशानि हैं। आर्डर में बीवी शोहर कह कर बुलाने से यह मालूम हो रहा हैं कि पहले परमात्मा के ज्ञान के द्वारा ही बाद में परमात्मा को मालूम करसकते हैं। ज्ञान शब्दरुप हैं इसीलिये शब्द को प्रकृति रुप ही कहसकते हैं। शब्द प्रकृति होने से ज्ञान को प्रकृति की निशान स्त्री से कम्पार करके, बीवी को दैवज्ञान की मतलब देनेवाली श्रीमति कह कर बडों ने कहा हैं। शादि हुयी औरत को श्रीमति कहना आज भी आचार है। सिर्फ परमात्मा की ज्ञान रखनेवाली स्त्री को ही श्रीमति कह कर पूर्व में बुलाते थे तो आज ज़रा भी ज्ञान न रखनेवाली स्त्री को भी श्रीमति कह रहे हैं। इंदू धर्म के प्रकार जिन औरतों को दैवज्ञान नही है वे औरतें ही हैं मगर श्री मतियाँ नहीं हैं। ऐसा ही जो शोहर ब्रह्मज्ञान नहीं रखता वह सिर्फ मरद ही है मगर श्री शब्द की योग्यता वह नहीं रखता। कुल्लि तौर पर कहें तो बीवी शोहर प्रकृति पुरुष नहीं होते लेकिन वे लोग सिर्फ उनकी पहचान की तौर पर मौजूद हैं।

मति यानि याद या ज्ञान कहसकते हैं। श्रीमति यानि दैवज्ञान रखनेवाली है। भगवद्गीता में आत्मसंयम योग में अर्जुन ने पूछा कि दैवमार्ग में योग करनेवाले अगर मरगये तो बाद में उनका जनम किसतरह रहता हैं? तो जब श्रीकृष्ण ने कहा कि श्रीमतों के घरो में पैदा होगा **श्रीमताँगेहे योगभ्रष्टोभिजायते ।** शुभकर दैवज्ञान रखनेवालों के घरों में पैदा होंगे। इसतरह कहने में विशेषता हैं। इस विषय को लेकर पूर्व से अबतक एक आचरण है पूर्व में सांप्रदाय के प्रकार तलंबरों का अर्थ जानकर बीवी शोहर एक के द्वारा दूसरा ज्ञान जानकर पेश आते थे। वैसे लोगों को संतान की प्राप्ति होकर जब गर्भ ठहरता हैं तब साँतवे महीने से नौ वीं महीने तक बीच का जो वक्त हैं उस वक्त में श्रीमत के नाम से एक कार्य को करते थे। कुछ मुत्तेदुओं

(सुहागनों) के समक्ष में करनेवाली इस कार्य को **पूर्व में श्री मत का नाम रहने पर भी, काल गर्भ में रुपान्तर होकर आज वो श्रीमंत (गोद भराई) नाम में बदलगयी।** जब गर्भ धारण करते हैं तब ही श्रीमंत करने में मतलब यह हैं कि! गर्भ धारण किये हुये स्त्री को मुत्तैदुवें (पाँच सुहागन) इसतरह आशिर्वाद देते थे कि तुम श्रीमति हो,तुम दैवज्ञान रखती हो, तेरे गर्भ से पैदा होनेवाला बच्चा भी ज्ञानि होना चाहिये। पिछले जनम में कोशीश करते हुये मोक्ष पाये बगैर ही जो योगि मरगया होगा वही तेरे गर्भ में गीता में जैसे ईश्वर ने कहा वैसे जनम लेगा इसतरह दुआ देते हुये करनेवाले काम को श्रीमत कह कर बुलाते थे। पूर्व में सिर्फ उन स्त्रीयों को ही यह कार्य किया करते थे जो दैवज्ञान जानते थे। अज्ञानों को नहीं किया करते थे। लेकिन आज के ज़माने में इनको करना है (इनको नहीं करना हैं) इसतरह के नियम के बगैर ही करना हो रहा हैं। रसम तो है मगर बिना मतलब का इसीलिये उस कार्य में का ज्ञान संदेश किसी को मालूम नहीं हुआ। एक फल होने केलिये एक पुश्प होना चाहिये। पुश्प से ही फल तयार होसकता है। एक बालिका बडी होकर और एक बच्चे को जनम देने की हालत में जब आति है तो उस हालत को पहुँचने को हम **पुश्पवति** हुयी हैं कह रहे हैं। पुश्पवति हुयी मतलब ऐसी हालत आगयी कि वह लडकी सृष्टी के खाबिल हैं। इसका मतलब प्रकृति से समान है। पुरुष बीज से प्रकृति स्वरुप स्त्री दूसरे को (जगति को) जनम देनेवाली होकर हैं। यह जानलें कि परमात्मा प्रकृति की प्रतिरुप (सामेता) ही स्त्री पुरुष हैं। एक बालिका युक्त उमर आकर पहली ऋतुस्राव से प्रकृति स्वरुप में बदल रही हैं। पुश्पवति में बदलगयी हुयी स्त्री को **पेरंट (मेचूर सेरेमनि)** नाम से कार्य करना भी इंदू सांप्रदायों में हैं ताकि उससे सबको यह मालूम हो कि प्रकृति ही सृष्टी के लिये आधार होकर हैं। पेरंट (मेचूर सेसेमनि)

वह कार्य हैं जिससे यह ज़ाहिर करते हैं कि सृष्टि स्वरुपिणि प्रकृति हैं। पेरंट सब स्त्रीयों को करसकते हैं, ऐसा ही शादि भी सब स्त्रीयों को करसकते हैं,लेकिन श्रीमत (श्रीमंत) सबको नहीं करना चाहिये। पेरंट, शादि, श्रीमंत लैन से स्त्री के जीवित में होने वाले ही है फिर भी उनमें बहुत ही ज्ञान को बसाकर बडों ने सांप्रदायों के रुपों में हमारे समाज में रखे हैं।

पेरंट से पुश्पवति हुयी स्त्री शादि से श्रीमति में बदलना हैं। पेरंट (मेचूर सेरेमनि), शादि होने पर भी यह जानलें कि जिनको ज्ञान नहीं मालूम वे बीवीशोहर की तरह हिसाब नहीं किये जाते, वे प्रकृति परमात्मा के निशान नहीं हैं। यह जान लें कि उनका नाजायेज रिश्ता ही होता हैं। जो काम शादि के दिन करके दिखाये थे उन कार्यों को अहमियत न देनेवालों को, क्योंकि उन्होने शादि के दिन जो काम अमल किये उनको न निभाने की वजह से उस अर्थ के प्रकार यह कहसकते हैं कि वे सांप्रदाय बद्ध बीवी शोहर या पति पत्नि नही है। यह जानलें कि उनका रिश्ता नाजायेज रिश्ता हैं,क्योंकि उनमें ज्ञान नहीं हैं उनके संतान भी अज्ञान होंगे। बडों ने चाहा कि दैवज्ञान संपन्न देश की तरह नाम पाकर इंदू (ज्ञानियों का) देश नाम पायी हुई इस ज़मीन पर, ज्ञानियाँ ही पैदा होना चाहिये इसीलिये उन्होने पेरन्ट, शादि, श्रीमंत कार्यों में ज्ञान को भरकर अमल करवाये। बडों का उद्देश्य यह है कि उन कार्यों में ही ज्ञान को मालूम करने से बीवी शोहर प्रकृति पुरुषों से समान चिह्न होकर उनको पैदा होने वाले संतान भी ज्ञान संतान होगी।

सिर्फ आचार(रस्में) रहकर मतलब (अर्थ) मिट्टी में मिलगये हुये इस समाज को अर्थवंत करना है तो आचारों में अर्थ को समा कर भाव के साथ करना चाहिये। जिन लोगों को नहीं मालूम उनको

उन कामों में का भाव समझाकर हम भी बडों के भाव के प्रकार ही जब अमल करते हैं तो इंदू धर्म वापिस सजीव होसकते हैं। उस ईश्वर को मालूम करने का मार्ग या रास्ता बनजायेगा जो तमाम प्रपंच केलिये अधिपति या मालिक हैं।

मुंडा मोयडमु (मुंडा मूयडमु)

इस ज़माने में तेलुगु ज़बान में **विधवा** को **मुंडा** कह रहे हैं लेकिन आध्यात्मिक परिभाषा में **मन** को **मुंडा** कहा गया हैं उसकी तफसील हम आगे देखते हैं। हमने पहले भी बताया हैं आध्यत्मिक ज्ञान सबकुछ छुपी हुयी रहती हैं। शब्दों का असली अर्थ ईश्वर ने एक कहा तो इनसान उनकी अखल कमी की वजह से उन शब्दों का असली मतलब को नहीं समझपाकर गलत समझलेने से धर्म ही अधर्म बनजा रहा हैं इसीलिये इस ग्रंथ में समझाये हुये आध्यात्मिक शब्दों का सही मतलब समझिये और अपने जिसम के अंदर के सिस्टम को जानने की कोशीश कीजिये मगर भाषा मत देखिये आप को ईश्वर ने खुद सोचने की अखल दी है उस अखल का इस्तेमाल करके कौनसा धर्म है और कौनसा अधर्म है खुद फैसला कीजिये। अब हम असल बात पर आते हैं शादि होकर चंद दिन शोहर से संसार करने के बाद जब शोहर मरजाता हैं तो, जब तक बीवी की तरह रही हुयी स्त्री,बीवी नाम को खोकर **विधवा (मुंडमोपि)** नाम रखना हो रहा हैं। पूर्व में जब हम इंदू की तरह रहते थे तब बीवी से विधवा (मुंडमोपि) बनना भी सांप्रदाय की तरह रहता था। आज इंदू मत हिंदू मत में बदलकर उस ज़माने की सांप्रदायों के मतलब से अन्जान हैं। विधवा (मुंडमोपि) की तरह बदलने का आचरण आज भी रहने पर भी, पिछले ज़माने का भाव या मतलब आज नहीं हैं। उस ज़माने का अर्थ

आज अपार्थ (गलत मतलब) में बदलगया। ऐसी संदर्भ में उस ज़माने के हमारे इंदू सांप्रदायों में यह मालूम करते हैं कि मुंडमोयडमु का क्या मतलब हैं (यानि औरत को विधवा क्यों कह रहे हैं)। हमारे रचनाओं में **गालियों में ज्ञान - आशिर्वादों में अज्ञान** इस नाम के ग्रंथ में मुंडमोपि (विधवा) शब्द के बारे में थोडा बताना हुआ। वहाँ मुंडा को **चंचल मन** कहना हुआ। और यह भी बयान करलिये कि वास्तव में **मुंडमूसि** का शब्द बाद में कालगमन में **मुंडमोसि** शब्द में बदलगया हैं। **मुंडा** का मतलब **वेश्या** है,**मुंडा कोडुकु** का मतलब **वेश्या का बेटा** है। मुंड मूसि शब्द में **मूसि** का अर्थ **बंद करना** या उसे न रहे जैसा करना । मुंड मूसि मतलब वेश्यापन को खत्म करना। यहाँ हमारे शरीर में **मन** मुंडा (वेश्या) जैसी हैं। मन विषय वेश्यापन को रखती हैं, इसीलिये उसे वेश्या कहा हैं। मुंडा मूसि (यानि वेश्यापन को बंध करना) इसका आध्यात्मिक मतलब यह हैं कि विषयों पर चंचल मन को रहे बगैर करना। मुंड मूसि का शब्द कालक्रम में **मुंडमोसि** शब्द में बदलगया।

भगवद्गीता में भगवान ने जो कहा उसके प्रकार मनुष्य ईश्वर के पास पहुँचने केलिये सिर्फ दो ही दो मार्ग हैं। वह एक कर्म योग, दो ब्रह्मयोग। कर्म योग उसे कहते है जिस में मन अपना काम वह करते रहने पर भी, सब विषयों से संबंध रखते हुये काम करते हुये अमलकरना ही (कर्मयोग है)। ब्रह्मयोग वह है जिसमें मन को ज़रा भी काम न किये जैसा करते हैं, एक विषय से भी संबंध न रखते हुये अमल करनेवाली। ये दो ईश्वर तक पहुँचाने के मार्ग ही हैं फिर भी पूर्व में बडे लोग कहते थे कि जब शोहर रहता है तो बीवी सब संबंध रखते हुये कर्मयोग को अमल करना चाहिये, शोहर मरजाने के बाद जब वह अकेलि होती है तब किसी भी तरह का संबंध न रखते हुये मन को रोक कर ब्रह्मयोग को अमल करना चाहिये। जिस औरत का

शोहर नहीं हैं वह औरत ब्रह्म योग को अमल करना चाहिये,बाहर की संबंध को छोडलेना चाहिये कह कर बतानेवाली सांप्रदाय ही मुंडमूसि (मुंडमोसि) का कार्य है। पहले मुंडमूसि का शब्द कुछ वक्त के बाद मुंडमोसि में बदलगया। बाद में कुछ वक्त के बाद मुंडमोसि का शब्द मुंडमोपि के शब्द में बदलगया। प्रस्तुत काल में जिस औरत का शोहर नहीं हैं उसे मुंडमोपि कह रहे हैं। इसतरह शब्द बदलजाने से उनके पूर्वापर (असलि मतलब) को बताने वाले न रहने की वजह से यह किसी को मालूम नहीं पडा कि मुंडमूसि (मुंडमोसि) का कार्य ज्ञान से जुडा हुआ सांप्रदाय हैं। मनुष्यों को मतलब मालूम न होने पर भी,शब्दों का रुप कालगमन में बदलजाने पर भी,मनुष्यों के बीच आचरण के सूरत में कुछ इंदू सांप्रदाय सजीव से ही हैं। छटी शास्त्र ब्रह्मविद्या शास्त्र के मुताबिक बडों ने यह कहा कि ईश्वर को पहुँचने के दो मार्गों में से कर्मयोग, ब्रह्मयोगों में पूरा दामपत्य जीवन कर्मयोग से ताल्लुख रखने वाली की तरह गुज़ारे, दांपत्य जीवन के बाद ब्रह्मयोग संबंदित की तरह गुज़ारने के लिये योग्य हैं। मुंडमोसि कार्य के निशान के तौर पर ब्रह्मयोग को रखा हैं ताकि यह बताने के लिये कि ब्रह्मयोग उस बीवी केलिये योग्य है जिसका शोहर मरा हुआ हो, और वह शोहर केलिये योग्य है जिसकी बीवी मरी हो।

मन को बंद करने के (मुंडमूसिन) बाद वह मरद या औरत को एक प्रत्येक रुप से दिखे जैसा करते है ताकि उससे लोगों को मालूम होजाये कि उन्होने मन पर जीत हासिल की हैं। इसतरह जिन्होने मन पर जीत हासिल की उनको अलग प्रकार से दिखाने के पीछे बडों का उद्देश्य यह रहता था कि साथ के मनुष्यों में से इसतरह अलग दिखने से उनको एक प्रत्येक अहमियत मिलती हैं। उनसे ब्रह्मयोग के बारे में मनुष्यों को मालूम होगा। पूर्व में मुंडमोपियों (विधवा यानि जिन्होने मन पर जीत हासिल की हो) को देखें तो

शुभप्रद समझते थे। बाह्यविषयों को त्याग किये हुये ब्रह्मयोगियाँ समझकर लोग उनसे इज्ज़त से बात करते थे। लेकिन आज के ज़माने में पूर्व काल के भाव बिलकुल भी नहीं हैं। अगर कोई मुंडमोपि (मुंडमूसि या विधवा) को देखे तो सब लोग अपशकुन, अशुभ समझ रहे हैं। मंगल शब्द का मतलब शुभ हैं। मंगलवाले यानि शुभ को अपने साथ रखनेवाले। पूर्व में मंगलवालों को शुभ शकुन की तरह, शुभ सूचक जैसा समझते थे। आज मंगलवाले, मुंडमोसिवालों को दोनों को अपशकुन, अशुभ की तरह हिसाब करले रहे हैं। आज अज्ञान बढजाने से, आत्मज्ञान बिलकुल भी मालूम न होने से, दैवविवरण बताने वाले सांप्रदाय बिना मतलब के आचरण होने की वजह से जिन्होने विधवा बना (यानि मन पर जीत हासिल किये) उनको लोग अशुभ समझ रहे हैं। पूर्व में जब शुभ कार्य होते थे तब उनलोगों से ही आशिर्वाद लेते थे कि जो ब्रह्मयोगियाँ है या ब्रह्मयोगि की तरह पहचान पाये हुये मुंडमोपियों (विधवा) से ही आशीर्वाद लिया करते थे। शादि वगैरा शुभकार्यों में उन्हे पहले लैन में ही स्थान दिया करते थे। आज वह सब बदलगया। मुंडमोपि (विधवा) हुयी औरतों को शुभकार्यों से दूर रख रहे हैं। जो लोग मुंडमोपि हुये वे भी ब्रह्म योग के बारे में कुछ न जानते हुये अज्ञानी होकर, वास्तव में अशुभ होगये।

वह शोहर जिसकी बीवी गुजर गयी, वह बीवी जिसका शोहर मरगया दोनों भी मुंडमूसी या मुंडमोसि ही हैं यानि मन पर जीत हासिल किये हुये लोग ही है उसके बावजूद भी पुरुष को वेधवा, स्त्री को विधवा कहना हो रहा हैं। पुरुष मुंडमोसि होने के बाद (यानि उसकी बीवी गुजर जाने के बाद) बाहर से उस पुरुष को देखे तो ऐसा कुछ नही लगता कि उसकी बीवी मर गयी हो यानि पुरुष को ऐसी निशानि कुछ नहीं रहने पर भी, स्त्री को बाहर दिखे जैसा, यानि सबको बाहर साफ तौर पर मालूम हो रहा है कि यह औरत

विधवा हैं। शोहर के मरजाने के बाद तीन दिन को हो, पाँच दिन को हो, ग्यारह दिनों को हो मुंडमोसि (विधवा बनाने) का कार्य कर रहे हैं। मुंडमोसि के दिन स्त्री पर से वे चीजें निकाल दे रहे हैं जो अलंकार है और सौभाग्य हैं। यानि सर पर के फूल, पिशानि पर का ठीका, हाथ के बंगडियाँ जो स्त्री के लिये अलंकार हैं उन्हे निकाल दे रहे हैं। जो बचपन से धारण करते हुये आये हैं उनको अलंकार कह रहे हैं, विवाह होकर जब शोहर आता हैं तब से धारण की जा रही तालि (मंगल सूत्र, पैरो में पहनने वाले छल्ले को सौभाग्य कह रहे हैं। सौभाग्य की निशानि मंगल सूत्र, छल्ले को निकालना सांप्रदाय हैं ताकि उससे यह मालूम हो कि उसका शोहर मरगया हैं। विधवा हुयी स्त्री को फूल, टीका (तिलक), बंगडियाँ रहसकते हैं। लेकिन सौभाग्य के निशानि मंगल सूत्र, छल्ले नहीं रहना चाहिये। पूर्व के आचार के प्रकार आज भी कुछ औरतें शोहर मरजाने के बाद बगैर मंगल सूत्र, छल्लों के नज़र आरहे हैं।

हमने यह जानलिया कि षटशास्त्रों में से पाँचवीं शास्त्र ज्योतिश्य शास्त्र हैं, छटी शास्त्र ब्रह्मविद्या शास्त्र हैं। ज्योतिश्य शास्त्र के प्रकार ग्रह दो हिस्सों में हैं। एक गुरु पार्टी, दूसरा शनि पार्टी। ये दो समूहों में भी सौभाग्य जीवित पर प्रभाव दिखानेवाले ग्रह एक कुज ग्रह है तो, दूसरा शुक्र ग्रह हैं। ये दो एक दूसरे के साथ सख्त शत्रृत्व रखनेवाले ग्रह हैं। कुज ग्रह यव्वन से संबंदित हैं,शुक्र ग्रह यव्वन के सुख से संबंध रखनेवाली हैं। उन ग्रहों के स्वयं रंगों के साडियों को स्त्रीयें धारण करते थे ताकि उससे यह मालूम होजाये कि जो लोग मुंडमोसि (विधवा) हुये वे न यव्वन से संबंदित रखते हैं न यव्वन के सुख से। जातक के प्रकार गुरुलग्नों में जो लोग पैदा हुये वे मुंडमोपि होने के बाद लाल कपडे पहनते थे जो कुज ग्रह का रंग है। जो लोग शनि लग्नों में पैदा हुये वे सुफेद कपडे पहना करते थे जो शुक्र का रंग हैं।

पूर्व में सब विधवायें कुछ लोग लाल कपडों में, कुछ लोग सुफेद कपडो में दिखते थे। जैसे जैसे वक्त गुजरता गया वैसे वैसे सच दब जाकर ब्राह्मण स्त्रीयें लाल साडियाँ, बाकी कुल के स्त्रीयाँ सुफेद साडियाँ पहनना शुरु किये ।इसतरह कुछ वक्त गुजरने के बाद लाल साडि पहननेवाले ब्राह्मण स्त्रियाँ, सुफेद साडि पहनने वाले शूद्र पोशीदा हो जारहे हैं। इसतरह थोडे सांप्रदाय बदलकर वक्त के साथ साथ सब खत्म हो रहा हैं। इन सांप्रदायों का विवरण बतानेवाले बडे लोग न रहने की वजह से, बिना मतलब के आचरण होने की वजह से,उनका आचरण करने में बहुत से लोग उतनी दिलचस्पि नहीं दिखा रहे हैं। और भी थोडे वक्त के बाद ऐसी हालत में पहुंच जायेंगे कि विधवाओं के बारे में साडियों के विषय को पूरे तरीके से भूलजायेंगे। अबतक इतना बदलाव आने पर भी मंगल सूत्र, छल्ले निकालने में कोई बदलाव नहीं आया। जो लोग विधवा बनें थे वे उनको निकाल देने की वजह से यह कहसकते हैं कि सांप्रदाय और भी कुछ बाकी हैं।

कम से कम अब तो यह जानलें कि ये इंदूसांप्रदाय हैं,और यह भी जानना चाहिये कि जो लोग मुंडा (विधवा) यानि जो लोग मन पर काबू पालिया वे शुभवाले है मगर अशुभवाले नहीं हैं। उनको इसतरह समझकर इज्ज़त देनी चाहिये कि वे मंगलप्रद हैं। जिन लोगों को नहीं मालूम उनको इसतरह के साडियाँ ही पहनाना चाहिये कह कर बताके उनका मतलब तफसील के साथ समझाना चाहिये। जब तुमलोग इसतरह करेंगें तो तुम को हमारे अंदर रहनेवाले मन के बारे में मालूम होजायेगा, उसके संबंदित ब्रह्मयोग के बारे में भी मालूम होजायेगा। कुल्लि तौर पर यह मालूम होजायेगा कि मुंडमूसि (मुंडमोसि) सांप्रदायबद्ध का काम हैं।

जो लोग सांप्रदाय के प्रकार मुंडमोपि (विधवा) हुये यानि मन पर काबू पालिये उन लोगों को पहले ही यह मालूम होकर रहना चाहिये कि उन्होने किस जातक में पैदा हुये क्यों कि उस के ज़रिये वे लोग इसका फैसला कर सकते हैं कि उन्हे किस रंग की साडि को पहननी चाहिये। अगर इसतरह जातक जानना है तो जब पैदा हुये थे उस वक्त उनके बडे लोग उस वक्त या काल को लिख कर रखलेना चाहिये जिस वक्त शिशु ने पुकारा हो या शिशु हिला हो। मुख्य बात यह है कि! उस वक्त को बिलकुल याद रखलेना नहीं चाहिये जिस वक्त शिशु पैदा हुआ था। शिशु हिले हुये या पुकारे हुये वक्त को ही लिखकर रखलेके बाद में पुरोहितों को दिखाये तो, यह बात मालूम होजायेगा कि जो शिशु पैदा हुआ वो शुक्रग्रह संबंदित हैं या कुज ग्रह संबंदित। यह जानलें कि शुक्रग्रह जातकों को सुफेद रंग, कुजग्रह जातकों को लाल रंग योग्य हैं। ब्रह्मविद्या यानि दैवज्ञान से जो खरीब हैं वह ज्योतिश्य हैं इसलिये यह जानलें कि चंद सांप्रदाय ज्योतिश्य शास्त्र से लिंकअप होकर हैं।



नमस्कार

दैवत्व को मानवों में मिक्स करके, दैवज्ञान को कभी भी न भूले जैसा मनुष्यों में रखे हुये कई आचरणों में से नमस्कार करना भी एक अच्छा सांप्रदाय है। उस ज़माने में जब कोई दूसरे मत नहीं रहते थे, जब सिर्फ एक इंदू मत ही रहता था तब जो बडे लोग दैवज्ञान को रखते थे उन्होने जो नमस्कार का सांप्रदाय रखा वह सांप्रदाय इंदूमत अनेक मतों में चीर जाने पर भी सब मतों में थोडा बहुत बाकी हैं। सब मतों में नमस्कार का सांप्रदाय रहने के बावजूद भी उसमें न पूर्व ज़माने का मतलब है ना हि भाव हैं। एक एक मत में

एक एक भाव बसजाकर आज ऐसी हालत आगयी कि यह तक मालूम नहीं हो रहा हैं कि कौनसा सही भाव हैं। एक एक मत के लोग एक एक रीति में मतलब बोललेते हुये दूसरे मत के लोगों को गलत पकडना आदतसी होगयी हैं। ऐसी सूरत में यह जानने की आवश्यकता ज़रुर हैं कि किसका शास्त्रबद्ध का मतलब हैं, किसका नमस्कार दैव संबंध हैं, किसका नमस्कार प्रपंच संबंध है? हमारी बहस यह है कि हर एक काम भी हेतुबद्ध मतलब के साथ, शास्त्र बद्ध आचरण के साथ रहता है तो ही मनुष्य किये हुये काम की सार्थकता मिलती हैं। इसलिये सब से पहले हमें ये देखना होगा कि इंदू (ज्ञान) सांप्रदाय क्या हैं?

यह बात सत्य हैं कि पूरे प्रपंच केलिये ईश्वर एक ही हैं। चाहे कौन किसी भी मत में रहने पर भी उस मत या मज़हब का सारंश तो सिर्फ एक ही एक होता हैं वह है ईश्वर के बारे में बताना। इसीलिये हम समझते हैं कि हर मत में के ग्रंथों को, उन मतों के बडों की इज्ज़त करना अच्छा तरीका ही हैं। ऐसी भाव से ही इस्लाम मज़हब के बडों से एक बार हम मिलना हुआ था। हैदराबाद नगर में इस्लाम मत के हदीस पंडितों से, उन बडे लोगों से मिलना हुआ कि पवित्र खुरान को अपने अंदर पूरे तरीके से हजम करलिये, वह संघटना हमारेलिये बहुत ही खुशदायक थी। ऐसे दैवज्ञान संपन्न, जो ईश्वर के प्यारे बच्चे हैं उनसे मिलते वक्त हमने नमस्कार कहा। वहाँ से वापिस आते समय भी नमस्कार कहा। जब पहले नमस्कार कहा तो उन्होने कुछ नहीं कहा। लेकिन जब वापिस आरहे थे तब पहले कही हुयी नमस्कार का थोडा ऐतराज बताये। उनके बातों से हमें समझमें आगया कि उनको अल्लाह (ईश्वर) पर कितना मज़बूत ईमान (विश्वास) हैं। उन्होने हमसे जो बातें की वे इसतरह हैं।

इस्लाम के बुज़रुग (आलिम) :- (उन्होने हमसे कहा कि) हिंदूमत में दूसरे लोगों से आप हमें बहुत पसंद आये। तौहीद (ऐकेश्वरोपासन) के बारे में जैसे आपने कहा वैसे किसीने भी नहीं कहा। आपने तौहीद ज्ञान के बारे में इतना सब कुछ कहा उसके बावजूद भी आप हमारे जैसे इनसानों को इसतरह नमस्कार कहना अच्छा नहीं है। हम सब सिर्फ एक ईश्वर को ही नमस्कार करनी चाहिये। सिर्फ वह एक ही नमस्कार का लायक हैं। मनुष्य मनुष्य को हो, किसी के लिये भी हो नमस्कार कहना ईश्वर को कमतर (बेइज्ज़त) किये जैसा होगा। सबका बडा, सबको पैदाकिया हुआ ईश्वर को छोडकर साधारण मनुष्य को नमस्कार करना हमारे हिसाब में गलत समझते हैं। मनुष्य करनेवाला नमस्कार का लायक सिर्फ एक ईश्वर ही हैं। इसलिये उसके सिवा दूसरों को नमस्कार करना ठीक तरीका नहीं है।

हमारी बात :- हम भी इस बात को खुबूल करते हैं कि नमस्कार का लायक सिर्फ ईश्वर ही है। दूसरों को नमस्कार क्यों कर रहे हैं यह बात मैं बाद में बताऊँगा। उससे पहले मैं आप से यह पूछता हूँ कि! आप दूसरों को **सलाम लेकुम** कहते हुये हाथ को सर के तरफ दिखाते हुये कहते हैं सामने वाला शक्स भी **वलेकुम सलाम** कहता हैं। क्या इसतरह सलाम करना दूसरों केलिये नमस्कार नहीं हुआ? ईश्वर के सिवा मनुष्यों को नमस्कार नहीं करना चाहिये इस हदिस (नीति) के प्रकार सलाम दूसरों को कहना गलत नहीं हैं क्या?

इस्लाम के बुज़रुग :- सलाम करने के विधान में कोई गलति नहीं हैं। वह दूसरों को नमस्कार किये जैसा नहीं है। सलाम करने के तरीके को तो हज़रत मुहम्मद प्रवक्ता ही बताये थे। सलाम लेकुम यानि तुम्हे शुभ हासिल हो। सामने वाला व्यक्ति सलाम किये हुये व्यक्ति को वलेकुम सलाम कहना प्रति सलाम (यानि सलाम का जवाब) किये

जैसा होगा। वलेकुम सलाम कहने में भी यही मतलब बसा हुआ हैं कि तुम्हे भी शुभ हो इतना ही लेकिन वह एक दूसरे को नमस्कार किये जैसा नहीं हैं। हमारे मज़हब में यह बतानेकेलिये ही सलाम का रस्म है कि एक दूसरे को शुभ प्राप्त हो । लेकिन सलाम कहना नमस्कार का विधान नहीं हैं।

हमारी बात :- इंदू विधान में पूर्वकाल में ही बडे लोग जो ज्ञान रखते थे उन्होने ही नमस्कार को प्रवेश किया। उस दिन बडोने जो कहा उसके प्रकार दो हाथों को उठाकर नमस्कार करें तो नमस्कार किये जैसा होगा। इसतरह कहने में सत्य हैं कि नमस्कार पूज्यभाव का हैं और गौरव सूचक हैं। जिसतरह आपने कही हुयी सलाम में शुभकर हैं इंदूविधान के नमस्कार में भी पूज्यभाव है कहसकते हैं। यह कहसकते हैं कि सिवाये ईश्वर के दूसरों पर पूज्य भाव दिखाना अच्छा काम नहीं हैं। फिर भी यहाँ पर थोडा हमें सोचने की ज़रुरत हैं। इस बात पर योचना करने की ज़रुरत हैं कि पूर्व काल में दैवज्ञान में अग्रगण्य रहनेवाले लोग, ईश्वर कौन हैं, और उसकी अहमियत क्या हैं यह अच्छी तरह जानने वाले, पवित्र पूज्यभाव वाले नमस्कार को मनुष्यों के बीच क्यों रखें हैं। उस ज़माने में उनका क्या भाव हैं, ज्ञानरीत्य उनका उद्देश्य क्या हैं अब हम तफसील से देखें तो वह इसतरह हैं कि!

यह प्रपंच तयार करने के बाद पहले किसी तरह के भी मत नही थे। वह जमाना जिस में मत कहने का नाम तक नहीं रहता था उस ज़माने में ही दैवज्ञान को रखने वाले बडे लोग मतलब के साथ जुडे हुये कुछ आचरणों को मनुष्यों में रखे हैं ताकि दूसरे भी उन आचरण से दैवज्ञान को मालूम करसके। उसतरह के आचरणों में से नमस्कार भी एक आचरण हैं। उसदिन विश्वव्याप्त मनुष्यों में दूसरा

मत कुछ भी नहीं था। जो कुछ है वह सिर्फ इंदुत्व (ज्ञान ही) है इंदुत्व मनुष्यों की आचरणों में से मुख्य भाग थी। इसलिये प्रपंच व्याप्त में नमस्कार विधान अमल में रहता था। जिसतरह आदिवार छुट्टी के दिन जैसा जब भी और अब भी तमाम प्रपंच में हैं उसीतरह नमस्कार तमाम प्रपंच में रहता था। आज भी आदिवार छुट्टी के दिन जैसा प्रपंच के सब देशों में रहने पर भी प्रत्येक से उस दिन को ही छुट्टी की तरह क्यों रखे हैं यह बात किसी को नहीं मालूम,उसीतरह आज भी नमस्कार पूरे प्रपंच में अमल में रहने के बावजूद भी पूर्व काल में नमस्कार किस उद्देश से रखे हैं यह किसी को नहीं मालूम। ज्ञान से जुडिहुयी मतलब के साथ, दैवत्व भाव के साथ दो हाथों से करनेवाली नमस्कार कुछ देशों में सिर्फ एक हाथ तक ही परिमित होगया हैं।

खास कर गौर करने वाली बात यह हैं कि! विश्वव्याप्त नमस्कार की सांप्रदाय में आचरण में कमी होकर एक हाथ वाली नमस्कार में बदलगयी फिर भी वह एक हाथ को सब सर के तरफ दिखाना तो वैसे का वैसा ही रहगया। इंदू सांप्रदाय के प्रकार दोनों हाथों के हस्तों को मिलाकर सर के तरफ दिखाना ठीक तरीके का नमस्कार का सांप्रदाय हैं। इसतरह की संपूर्ण नमस्कार प्रस्तुत काल में भूमि पर चाहे कितने भी मत क्यों न पैदा हो सब मतों में भी थोडे से थोडे हद तक तो बाकी हैं। सब मतों के नमस्कारों में सर को ही प्राधन्यता रहना, कुछ मतों में नमस्कार सिर्फ एक हाथ को ही परिमित होना देखें तो यह मालूम हो रहा हैं कि नमस्कार अभी भी पूरे तरीके से नाश हुये बगैर मौजूद हैं। बहरहाल, पूर्व में इंदुओं ने जो सांप्रदाय रखे हैं उनमें से नमस्कार का अर्थ खराब होजाकर सब देशों में आज भी मौजूद हैं। एक एक मत में एक एक तरह का अर्थ रहने पर भी उसे पूर्व तरीके के बराबर नमस्कार ही कह सकते हैं। इससे पहले इंदुओं ने नमस्कार में क्या मतलब को बसाकर रखा

होग? नमस्कार दोनों हाथों के हस्तों से ही क्यों किया करते थे। हस्तों के उन्गियों के नोकों (आखरि हिस्से) को ही सर के तरफ क्यों रखा करते थे? इसतरह के सवालों के जवाबात को मालूम करेंगे तो नमस्कार का सांप्रदाय पूरे तरीके से समझमें आजायेगा।

आज जो भी मत है उन सब मतों केलिये, पूर्व में जो एक ही इंदू मत था उसकेलिये ईश्वर एक ही है। पूरे प्रपंच को पैदा किया हुआ सृष्टिकर्ता एक ईश्वर ही हैं। ईश्वर को वास्तव में नाम नहीं हैं, आकार नहीं हैं, खास करके एक स्थल नहीं हैं। वह ईश्वर जिसका एक नाम हो, एक आकार हो, एक स्थल हो नहीं है वह विश्वव्याप्त हर अणु अणु में फैला हुआ हैं। परमात्मा, पुरुषोत्तम, खुदा, सृष्टिकर्ता, परंधाम कहलाने वाले निशानियों से बुलवाया जारहा है जो असल में नाम नहीं हैं। ऐसा ईश्वर पूरे प्रकृति में फैल कर रहना ही नहीं जीवरासियों के शरीर के अंदर भी हर अणु में फैला हुआ हैं। परमात्मा आत्मा की सूरत में शरीर में चैतन्य को पैदा करके शरीरों को हिलाकर काम करवा रही हैं। आत्मा जो परमात्मा का हिस्सा हैं वह हर जीवरासि के शरीरों में सर के अंदर केंद्रीकृत होकर पूरे शरीर में फैलकर हैं। जब अपने से कोई बडे दिखते हैं तो नमस्कार कहते थे ताकि उससे यह विषय सबको मालूम होजाये कि ईश्वर आत्मा की रुप में मनुष्यों को मालूम होने वाले चैतन्य होकर सर में ही हैं, ईश्वर सरमें ही हैं कहनेवाली बात को कोई भी नहीं भूलना चाहिये समझकर वे लोग नमस्कार करते थे। जब सामने वाले को नमस्कार रखते हैं तो सामने वाले के सर के अंदर की आत्मा को याद किये जैसा दोनों हाथों को मिलाकर सर के तरफ नमस्कार रखते थे। दायाँ बायाँ दोनों हाथों की हस्तों को मिलाने में आध्यात्मिक मतलब बसा हुआ हैं। शरीर जो दायें बायें भागों में हैं उसमें एक ही आत्मा दोनों तरफ फैली हुयी हैं यह बताने के लिये ही दोनों हाथों को

एक करके दिखा रहे हैं। पूरे शरीर में फैलाहुआ आत्मा के लिये सर केंद्र होने के कारण सर के तरफ ही हाथों के कोनों को (यानि आखरी भाग को) दिखाना हो रहा हैं। पूर्व में बडों ने जो नमस्कार का निर्माण किया उसमें ईश्वर के प्रति पूज्य भाव बसकर रहता था। एक व्यक्ति शरीर में के ईश्वर को नमस्कार के रुप में सामने वाले व्यक्ति को ज़ाहिर किया तो, सामनेवाला भी उसीतरह दो हाथों से नमस्कार किया करता था। जब इसतरह करते थे तो उनमें इसतरह का भाव रहता था कि तुझ में, मुझ में एक ही अंश वाला ईश्वर मौजूद हैं, जैसे वो तुम्हारे अंदर हैं वैसा ही वो मेरे अंदर भी हैं यह बताने केलिये ही प्रति नमस्कार किया करते थे। बहुत ही उन्नतवाले दैव भाव के साथ उस दिन नमस्कार, प्रति नमस्कार हुआ करते थे। इतना ही नहीं इंदूसांप्रदायों में नमस्कार के विषय में और एक घट्ट (अंश) भी हैं। वह यह है कि! कुछ लोग समझते हैं कि मनुष्य के शरीर में पैर नीच हैं, पैरों को पहननेवाले चप्पल भी नीच है। चप्पल पहने हुये पैर हो, नहीं पहने हुये पैर हो दूसरे व्यक्तियों को अगर गलती से लगजाते हैं तो सामने वाले को वह चीज़ लगने पर भी, लोग ऐसा समझते थे कि उसके साथ में उसे चिपक कर जो ईश्वर हैं उसी को लगा हैं। क्यों की उन्होने उसतरह समझा पैर या चप्पल लगते ही फौरन खुद से गलती हुयी समझकर जिस व्यक्ति को लगा उसे हाथ से छूकर सर के तरफ हाथ बढाकर नमस्कार करते थे। सामनेवाले किसी भी तरह का व्यक्ति क्यों न हो पैर लगते ही फौरन नमस्कार करने की आचरण को पूर्व में बडों ने ही रखा हैं। इसतरह करने से अपने शरीर में ही नहीं बल्कि सामने वाले के शरीर में भी ईश्वर मौजूद हैं, उस ईश्वर के प्रति मैं बडा भक्ति भाव रखता हूँ यह बताने के लिये पूर्व में नमस्कार किया करते थे। पूर्व का आचरण आज वहाँ वहाँ मौजूद हैं। अगर बस में हो, रैलों में हो सामने वालों को अगर

गलति से पैर लग गया तो हाथ से उस व्यक्ति को छूकर नमस्कार करना वहाँ वहाँ हम देख ही रहे हैं। पूर्व के बडे लोग बहुत ही ज्ञान के साथ दैवभक्ति बसकर रहे जैसा तयार किया हुआ सांप्रदाय ही नमस्कार हैं।

ईश्वर के प्रति विनय विधेयता से रहें, दैवज्ञान सबको मालूम होजाये, चाहे कोई किसको भी नमस्कार करलें वह ईश्वर को ही पंहुचे जैसा अर्थ को बसाकर बडों ने रख्खा हुआ नेक काम ही नमस्कार हैं। इतने बडे भाव के साथ बसाहुआ नमस्कार को आज कोई भी ईश्वर केलिये हम कर रहे है कह कर नहीं समझरहे हैं बल्कि मनुष्यों के लिये नमस्कार किया जा रहा है कह कर समझना बडी भूल (गलति) हैं। नमस्कार का लायक सिर्फ एक ईश्वर ही हैं उसके सिवा दूसरे कोई नहीं, नहीं होसकता, पूर्व काल के ज्ञान सांप्रदायों का अर्थ मालूम नहीं होने से आचरणों को देख कर जिसकी जैसी मरज़ी हैं वैसा नहीं समझलेना चाहिये। फिलहाल मैं ने जो नमस्कार रखा है वह आप को नहीं बल्कि आपके अंदर के अल्ला को (ईश्वर को)। अल्लाह को पूज्य भाव के साथ नमस्कार करना गलत कैसे होसकता हैं? सलाम प्रति सलाम करने में तो सिर्फ तुम्हे शुभ हासिल हो कह कर आशिर्वाद दिये जैसा हुआ है मगर उसमें दैव भाव हो,दूसरों को अल्ला के बारे में बताने का तरीका हो नहीं हैं ना! आप खुद बतायिये कि अल्ला सब में भी फैला हुआ है इस मतलब के साथ नमस्कार कहना तो अच्छी बात है ना!

इंदुओं के ज्ञान में ईश्वर केलिये बनाया गया नमस्कार आज भी हैं। जैसे जैसे वक्त गुज़रता गया, जैसे जैसे मत तयार होते गये वह अनेक रुप में बदलगया। इंदू लोग हिंदुओं की तरह, मुस्लिमों की तरह, ईसायियों की तरह बदलजाने से उस ज़माने के इंदुओं में जो

मतलब (भाव) रहता था वो नहीं रहा। हिंदुओं में वहाँ वहाँ दो हाथों का नमस्कार बाकी रहने के बावजूद उस जमाने के इंदुओं का भाव इनमें नहीं हैं। इसलिये हिंदुओं में भी अधर्मयुक्त एक हाथ (सिन्गिल हान्ड) के नमस्कार वहाँ वहाँ दिखायी दे रहे हैं। जो इंदू आदि में थे वे कालक्रम में हिंदुओं की तरह, मुसलमानों की तरह, ईसायियों की तरह बदलजाकर उनमें नमस्कार का भी रुप और अर्थ बदलगया। आन्ग्ल (पाश्चात्य) देशों में सेल्यूट की तरह, अरब देशों में सलाम की तरह, भारत देश में नमस्ते की तरह बदलगयी। हिंदू, ईसायी, इस्लाम सब लोग इंदूमत के भागस्वामियाँ ही हैं इसलिये नमस्कार को चाहे कोई किसतरह भी अमल करलें वह सिर्फ ईश्वर केलिये ही होना चाहिये। अब बतायिये मैं ने जो नमस्कार आप को रख्खा हैं क्या उसमें कोई गलती हैं?

इस्लाम के बुज़रुग :- अगर नमस्कार इसतरह ईश्वर पर भक्ति के साथ इज्ज़त के साथ रखने का है तो कोई गलती नहीं हैं। आपके बातों में नमस्कार सिर्फ ईश्वर को ही हैं कहना हमें इस बात से बडी खुशी हुयी मगर जैसे आपने कहा वैसे तो सब लोग नहीं कर रहे हैं, अगर कोई आफिसर दिखता हैं तो उसे (प्रमोशन की चाहत से), अपनी ज़रुरत के लिये काम आनेवाले व्यक्ति को हो, उनके स्वार्थ के लिये नमस्कार रख रहे हैं ना! उसके लिये आप क्या कहेंगे।

हमारि बात :- मैं ने तो पहले ही कहा था ना कि नमस्कार का अर्थ सब खिसम से खराब होकर, उसका असली मतलब न मालूम होने के कारण उसमें भी स्वार्थ बस गया हैं। इसलिये चाहे कोई भी मत वाला क्यों न हो ईश्वर के ओर विधेयता भक्ति जब रखता हैं तब ही असली इंदू बनसकता हैं। अगर ऐसा नही हुआ तो बडी महत्व अखल से मानव को दैवज्ञान मालूम होने के लिये बडों ने जो आचरण रखे हैं वह सब बेकार होजायेंगे। नमस्कार जो इंदू सांप्रदाय है उस

(नमस्कार) आचरण का मतलब ही नहीं रहेगा। हम यह कह रहे हैं कि इंदू का मतलब ज्ञानी हैं, वे एक मत या मज़हब से ताल्लुख नहीं रखते, हम पहले से यहीं कहते आ रहे हैं कि दैवमार्ग में रहनेवाला हर एक व्यक्ति भी इंदू ही है। इसलिये आप भी ईश्वर के बच्चे ही है इसलिये दैवज्ञान के बारे में दूसरों को बोधा कीजिये (सिखायिये)। इंदू सांप्रदाय के प्रकार मतलब के साथ दूसरों को नमस्कार कीजिये, अगर दूसरों को पैर लगा तो भी ईश्वर को लगे जैसा ही समझ कर नमस्कार कीजिये। ऐसा करने की वजह से माया मार्ग को छोडकर दैवमार्ग पर चले जैसा होगा। कालक्रम में मिटगया हुआ नमस्कार का सांप्रदाय कहलाने वाला धर्म को रक्षा किये जैसा होगा।

लाभ सांप्रदाय

हर मनुष्य को, हर जीवराशि को अरिषट् वर्ग नाम पाये हुये गुण छः होते हैं। अरिषट वर्ग इसलिये कहा गया क्यों कि गुण जीव केलिये शत्रृ जैसे हैं। छः को एक समूह की तरह बोलने की वजह से उसे वर्ग भी कहा गया। जब यह कहा गया कि शत्रृगुण छः एक समूह है तो ज़रुर और एक समूह भी रहना चाहिये। जब ऐसा रहता है तब ही उसे वर्ग कहसकते हैं। एक गुण समूह पाप का कारण बना तो, और एक गुण समूह पुण्य का कारण बना। पुण्य केलिये जो गुण कारण हैं उनकेलिये किसी ने भी कहीं भी नहीं कहा। लेकिन पाप को कमाने वाले गुण यानि शत्रृवर्ग के बारे में बहुत कुछ बोललेना हुआ था। बहुत से लोगों को अरिषटवर्ग के नाम मालूम हैं लेकिन मित्रृवर्ग के नाम किसी को भी नहीं मालूम। जहाँ पर अपाय होता हैं वहीं पर वार्निंग का बोर्ड रहता हैं। जहाँ पर अपाय नहीं रहता वहाँ बोर्ड की ज़रुरत नहीं हैं। ऐसा ही जिन गुणों की वजह से अपाय है उनके बारे

में बताने केलिये बोर्ड जैसे पद्दतियों को हमारे बडों ने निर्णय करके रखा हैं। अच्छे गुणों के बारे में कहीं भी नहीं कहा। अच्छे गुणों के बारे में कहीं भी नहीं कहा। बुरे गुणों के बारे में बतानेवाले पद्दतियों में एक पद्दती को जो हम लोग जानते हैं उसके बारे में बयान करलेते हैं।

शत्रृगुणों के बारे में सांप्रदाय पद्दती में जो आचरण रखा गया उसके बारे में तो पूर्व में सब जानते थे। जब कोई धान (अनाज) को तोल (तराज) ते थे तब,जब भी कुछ संख्या की गिनती करते थे तब, एक, दो, तीन, चार, पाँच, छः, सात कह कर कहनेवाली संख्या हो तो उस तरीके से कभी भी गिनती नहीं किया करते थे। सांप्रदाय पद्दती से हिसाब किया करते थे। पहले एक कह कर शुरु नहीं करते थे बल्कि लाभ कह कर शुरु किया करते थे। लाभ कहने के बाद दो, तीन कह कर छः तक गिनती करके बाद में सात न कहते हुये छः और एक कहा करते थे। (यानि ६+१=७ को डैरेक्ट सात बोलने के बजाये छः और एक कहते थे) बाद में आठ कह कर गिनती (हिसाब करना) हो रहा हैं। इस पद्दती के प्रकार गिनती करना पूर्व में ही नहीं बल्कि इन दिनों में भी हो रहा हैं। आज मापने वाले कुछ लोग पूर्व के पद्दती के प्रकार हिसाब कर रहे है मगर उसमें वो भाव नहीं रहा जो पूर्व में इस गिनती में रखा गया।

मनुष्यों में के छ : (६) शत्रृ गुणों में पहली वाली आशा गुण है। आशा कभी भी लाभ को ही चाहती हैं। सबसे बडी, सबसे ज्यादा मनुष्य को सतानेवाली गुण आशा की गुण ही हैं। इसलिये ही सब को मालूम हुये जैसा जब गिनती करते हैं तो तब संख्या में पहली वाली काम (आशा) गुण को लाभ कह कर पूर्व में **एक** के बदले में **लाभ** कहा करते थे। छः के बाद सात कहे बगैर छः और एक इसलिये कहा करते थे कि काम गुण (आशा) से शुरु होकर असूय से अंत

होने वाली गुणों की समूह को प्रत्येक से पहचाने, उससे यह मालूम होजाये कि बुरे गुण छः ही हैं। पहले लाभ कहकर लैन से (आर्डर में) छः के पास ही रोक कर दो बार छः को इसलिये पुकारते थे कि यह मालूम होने के लिये कि शत्रु समूह में के गुणों की संख्या इतनी ही हैं और उसमें की पहली गुण का अलग नाम (दूसरा नाम) लाभ है। लैन से छः बोलने के बाद भी (सात कहने के बदले में अलग तरीके से) **छः और एक** (६+१) कह कर बोलने से छः को दो बार उच्छारण किये जैसा हुआ। ऐसा कहने से पहली वाली आशा के बारे में आखरी वाली असूय के बारे में याद करवाये जैसा होता था। मनुष्य को सब गुणों से भी ज्यादा तकलीफ देने वाले गुण सिर्फ दो ही दो हैं। वह एक पहली वाली आशा गुण हैं बाद में छटवीं वाली असूय गुण। ये दो गुणों के बारे में सबको मालूम होना बहुत ही ज़रुरी हैं। इसलिये संख्या को गिनती करते समय **लाभ** से शुरु करके **छः** के बाद सात कहने के बदले में **छः और एक** कहना हैं। पूर्व में बडों ने जो सांप्रदाय रखे थे उनमें आध्यात्मिकता साफ ज़ाहिर रहता था। लेकिन आज आचरण रहने के बावजूद भी उनके मतलब न मालूम होने से सांप्रदायों की कोई वाल्यू (अहमियत) ही नहीं रही। हम तो यह चाहते हैं कि कम से कम अबसे तो हम पूर्व के सांप्रदाय के प्रकार बुरे गुण को मालूम हुये जैसा गिनती करते वक्त पहले लाभ कह कर दूसरों को यह बतायें कि यह हमारे अंदर की पहली गुण हैं।



पहनावा

(पहन - सहन का ढंग)

इंदू मत से जो चीरगये हिंदू, क्रिस्टियन, इस्लाम वगैरा मत हैं। तकरीबन सात करोड सालों के पूर्व से इंदूमत रहता था। आज भी

इंदू मत रहने पर भी बदले गये हुये नामों से मौजूद हैं। इंदूमत से चीरगये हुये सब मतों में भी इंदुत्व मौजूद हैं। लेकिन वे लोग जिनको मत की दीवानगी पकडली उन्होने अलग अलग नाम रखले कर हम फलाना फलाना मत या मज़हब वालें हैं कह कर बहस करलिये लेकिन वे लोग यह जान नहीं पारहे हैं कि अपने मत में दैवज्ञान है इसलिये हमारा इंदूमत हैं। आखिर में हिंदू भी यह नहीं जान पा रहे हैं कि पहले वे इंदू (ज्ञानियाँ) थे। आज ज़मीन पर जितने भी मत है उन सबके लिये मूल स्थान इंदू मत ही हैं। नया नाम रखलेने से वे अलग नहीं होजाते। दैवज्ञान की बोधा करने वाली हर मत भी इंदूमत ही हैं। इंदू का मतलब दैव ज्ञान हैं। इस हिसाब से सब मत बगैर फरख के इंदू मत में के हिस्से ही हैं कहसकते हैं। तमाम प्रपंच के लिये ईश्वर एक ही हैं। ऐसा ही तमाम प्रपंच केलिये इंदूमत एक ही हैं। विश्व में एक ईश्वर (अह्ला या येहोवा) ही हैं उस एक ईश्वर को ही सब मत के लोग कई खिसम से बुलाले रहे हैं। ऐसा ही इस भ्रम में हैं कि अपना मत अलग मत हैं। आखिर में सब का गम्य एक ही ईश्वर हैं। सात करोड सालों से इंदू मत अनेक मतों में रुपांतर होते हुये फिलहाल २००० साल के पूर्व से ईसायि मत की तरह, १४०० साल के पूर्व से इस्लाम मत की तरह, और भी कई मतों के रुप में आज मौजूद हैं। इसतरह बदलते जाने से थोडा बहुत बचा हुआ इंदूमत थोडा अपना नाम को खोकर हिंदूमत की तरह बदलगयी। बहरहाल सब मत के सारॉंशो में इंदुत्व निगूढ़ से रहने के बावजूद भी उसे न पहचान सकने वाले मनुष्य यह समझ रहे हैं कि हम हिंदू हैं हमारा मत अलग हैं,हमारा ईश्वर अलग है (हिंदुओं की हालत यह हैं तो) मुसल्मान ऐसा समझ रहे हैं कि हम इस्लाम मज़हब के लोग हैं, हमारा ईश्वर (अह्ला) अलग हैं। और कुछ लोग हम ईसायि हैं हमारा मत अलग हैं हमारा ईश्वर अलग है कह कर बोलले रहे हैं। इतना ही

नहीं यह मालूम होने केलिये कि हम अलग हैं, हम फलाना मत के लोग हैं यह बात दूसरों को मालूम होने के लिये, उनके अपने जीवन शैलि में परिवर्तन करलिये इतना ही नहीं पहन -सहन और अलंकार में भी परिवर्तन करलिये।

यह बात तो सब जानते ही हैं हिंदुओं को, ईसायियों को, मुसल्मानों को देखते ही पहचान सकते हैं उनके अलंकारों से यह मालूम होजाता हैं कि यह व्यक्ति फलाना मत का हैं। और वह भी इस बात से सहमत है कि हाँ हमारे ये अलंकार हमारी पहचान के लिये ही हैं। पूर्व में सब मतों केलिये आधार यानि इंदूमत में भी कुछ पहनने के, लगालेने के अलंकार रहते थे। इंदूमत में जो भी आचरण रहता हैं वह दैवज्ञान संबंध होकर रहता हैं, इसलिये उन सबका अर्थ या मतलब ज़रुर कुछ न कुछ रहता था। अर्थ वाले आचरण रखनेवाली इंदूमत थोडा बदलकर हिंदूमत की तरह बदलजाने पर भी पुराने आचरण कुछ वक्त तक रहा करते थे। बाद में सब बदल गये। मनुष्य भी इंदुओं से पूरे हिंदू बनगये। अब हम वे पहन-सहन अलंकरण के विषयों के बारे में बयान करलेते हैं जिनका अर्थ पूर्व में इंदूसांप्रदायों में रहता था।



सर पर बाल बांधना (तलमुडि)

पूर्व में स्त्री पुरुष सब लोग सर पर बाल बढ़ाया करते थे। बढ़ाये हुये बालों को सर के बीच के हिस्से में गांठ डालते थे। मन के खयालों का स्थान **सर** हैं (खयाल को तेलुगु ज़बान में **तलंपु** कहते हैं।)। सर में बेहिसाब खयालों के विकार हैं। इसलिये खयालों को सर के बालों की संख्या समझकर उनको गांठ बांधना हुआ था। सर के

बीचवाले भाग में ब्रह्मनाडि हैं। सर पर इसके स्थान को **पुनक** कहते हैं। हमारे अंदर के खयालों को उनके मरज़ी के मुताबिक इधर उधर भागे बगैर बाँधने से मन की स्थिरता हासिल होकर आत्मा के बारे में मालूम होजायेगा। जब तक ये खयाल उक्साते रहते हैं तब तक शरीर में रहनेवाली आत्मा के बारे में मालूम नहीं होसकता। बालों को इस मतलब के साथ बांधते थे कि कई खयालों को बालों की संख्या से कम्पार करके खयालों को उक्से बगैर या बढ़ने से रोकते हुये करना चाहिये। (जब इसतरह बाँधे हुये बालों को देखते ही यह याद आजायेगा कि मन को रोककर आध्यत्मिक चिंतन करनी चाहिये) खयालें रुकजाने से सर के बीच में की आत्मा मालूम होजायेगी, इसलिये बालों को भी सर के बीच के हिस्से में ही गांठ डाला करते थे। पूर्व में स्त्री पुरुष सब सर पर बालों को इकट्ठा करके ढेर **(ढेर** को तेलुगु जबान में **कुप्पा** कहते हैं) की तरह बांधते थे। बालों की कुप्पा शब्द कालक्रम में थोडा बदलकर **कोप्पु** होगया। ज्ञानार्थवाली कोप्पु (ढेर) पूर्व में स्त्री पुरुषों को रहता था। पूर्व में लोग समझते थे कि सर का बीचवाला हिस्सा आत्म स्थान हैं, इसीलिये उस स्थान को पूज्य भाव के साथ खुशबुदार सुफेद जास्मिन लगाते थे। पूर्व में स्त्री पुरुष सब लोग अपने अपने ढेरों पर फूल रखते थे। यह बात सुनकर आप लोगों को विचित्र लग रहा होगाना कि पूर्व में पुरुष भी फूल लगाते थे। ज्ञानचिह्न चंद्रबिंब सुफेद रहती हैं। ऐसा ही सुफेद जास्मिन भी ज्ञानार्थ देनेवाली ही हैं। सुफेद रंग स्वच्चता की निशानि हैं पूज्य भाव के साथ उस सुफेद रंग के जस्मिन को ही इसलिये पहनते थे कि हमारे सर में भी इसी तरह की स्वच्च ज्ञान बसजाना चाहिये। इसतरह पूर्व में इंदू बहुत ही महत्व भाव के साथ जुडी हुयी तलमुडि **(सर के बालों को बाँधना यानि मन के खयालों को रोकना)** को सर के बीच में रखलेते थे।

आज के ज़माने में पुरुषों के सर पर कोप्पु (ढेर) गायब होगया हैं। स्त्रीयों में भी क्राफ्स, चोटियाँ आकर बालों को बांधने वाले ही नज़र नहीं आ रहे हैं। अगर कहीं पे भी कोई भी ढेर बाँधनेवाले हैं तो वो ढेर सर पर रहे बगैर सर के पीछे रहता हैं। औरतें सब फूलको पहनना आज भी है लेकिन वे ईश्वर केलिये नहीं । जो फूल वो लगाते हैं वे सिर्फ अलंकार केलिये या आकर्षण के लिये ही लगा रहे हैं। पूर्व में बहुत ही ज्ञान के साथ जुडा हुआ आचरण सांप्रदाय आज बेमतलब होगया। यह तक कोई खयाल नहीं कर रहा हैं कि सर पर बाल बांध कर फूल लगाना भी ज्ञान सांप्रदाय ही हैं। आज से सौ साल पहले भी मरदों को सर पर ढेर रहते थे। पंजाब राष्ट्र में आज भी सिक्क मत के लोग सर पर ही बालों को बांधकर रखना देखें तो यह मालूम हो रहा हैं कि पूर्व का सांप्रदाय सिर्फ वहाँ ही बाकी हैं। वहाँ भी मरदों को फूल लगाने का सांप्रदाय नहीं हैं।

कम से कम अब तो भी ज्ञान मालूम करके सांप्रदाय के प्रकार पुरुष सर पर बालों का ढेर बांधकर फूल रखले सकते हैं। लेकिन बाकी लोगों को सांप्रदाय की अहमियत (वाल्यु) नहीं मालूम इसलिये फूल लगाने वाले को देख कर नपुंसक समझने का प्रमाद हैं। इसलिये पहले इंदूसांप्रदायों के बारे में लोगों को बताने की जिम्मदारी ज़रुर हम पर हैं। जब सबको मालूम होजाता हैं ते आचरण का भी कुछ अर्थ बनसकता हैं। वरना अपार्थ (गलत समझ) करलेने का मौका हैं। हम चाहते हैं कि कम से कम स्त्रीयाँ तो भी इंदू सांप्रदायों में सर पर गांठ बांधने को मुख्य काम की तरह रखलेना चाहिये। अगर ऐसा नहीं किये तो गांठ (सर पर बाल बांधने) का सांप्रदाय हमारे पीढी से ही खत्म होजासकती हैं।



सर के बाल मुंडवालेना

पूर्व में नायि ब्राह्मण कहलानेवाले (मंगल वाले) मंदिर के पास मंगल वायिद्य बजाने केलिये रहा करते थे। ऐसा ही अगर कोई भक्त को सर मुंडवाने की मन्नत है तो वह मन्नत पूरी करने केलिये सर के बालों को निकाल कर टक्ला करते थे। मंगल की चाखू को बाल निकालने केलिये ही इस्तेमाल किया करते थे। ईश्वर की सेवा केलिये ब्राह्मण, नायि ब्राह्मण देवालयों के पास दिखते थे। गर्भगुडि के अंदर का काम ब्राह्मणों को रहता था तो गर्भगुडि के बाहर का काम नायि ब्राह्मणों को रहता था। ब्राह्मण, नायि ब्राह्मण दोनों एक ही बाप को पैदा हुये लोग हैं फिर भी माँयें अलग अलग हैं। इसलिये मंदिर में के काम, शादि के काम, मरेहुये लोगों की कर्मकाण्ड के काम को दोनों बाटलेके करते थे। बहुत से भाषाओं में नायि शब्द का मतलब कुत्ता हैं। होषियार ब्राह्मण अपनी सौतेली माँ के बेटों को कुत्ते ब्राह्मण कह कर नाम रखे थे। लेकिन नायि ब्राह्मण यह नहीं समझ पाये कि अपने भाइयाँ ही अपन को कम करने केलिये इसतरह का नाम हमको रखे हैं इसीलिये आज भी हम देखते हैं कि मंगलवाले अपने आप को नायि ब्राह्मण बोललेते हैं। मंगल शब्द का मतलब शुभ हैं, मंगल वाले का अर्थ शुभकर वाले हैं। लेकिन मंगल का यह आध्यात्मिक मतलब मालूम न होने से वे समझरहे हैं कि मंगलवाले कम दर्जे का नाम हैं और नायि ब्राह्मण हैफे दर्जे का नाम हैं समझकर नायि ब्राह्मण का बोर्ड लगालेना देखें तो विचित्र लग रहा हैं ना। पूर्व में श्रीरंग के देवालय को एक ज्ञानि जाकर, वहाँ ज्ञान के प्रकार अपने उद्देश्य को प्रतिमा के सामने दिखाना चाहा। उसका उद्दश्य यह हैं कि मैं अपने सर में के खयालों को खत्म करलियाँ हूँ इस भाव को मैं आचरण के रुपमें सर के बालों को निकाल कर दिखाना चाहता हूँ क्यों की सर के बाल सर के अंदर के खयालों संख्या की निशानि हैं इसलिये सर

के बाल पूरे मुंडवाकर टकलू को प्रतिमा (ईश्वर) के सामने दिखाना चाहता हूँ। क्योंकि वह एक शुभकर, मंगलकर काम हैं इसलिये पवित्र ब्रह्मणों के ज़रिये उस काम को करवालेना चाहिये समझकर मंदिर केबाहर के कामों को बाटलिये हुये ब्राह्मणों को देखकर अपने उद्देश्य को बताया। देवालय के पास ईश्वर की सेवा करनेवाले बाहर के ब्राह्मण उस काम को खुबूल करके एक तेज चाखु से सर पर रहने वाले तमाम बालों को निकाल दिया। पहले इसतरह देवालयों में शुरुहुये बाल निकालने का काम आज बाज़ारों में शाप्स (थङ्कतळथ) में बदलगया। ईश्वर के सेवा में शुरु हुआ काम आज उनकी जिंदगी का आधार बना। योगसंपन्नवाला ज्ञानी अपने ज्ञान को सांप्रदाय पद्दती से, आचरण के पद्दती में बताने केलिये सर पर के बालों को निकालदिये। आत्मज्ञान को बतानेवाली उस शुभकर काम को करने से सरके बाल को निकाले हुये ब्राह्मण मंगल (शुभ) किये हैं इसलिये उन्हे मंगल वाले कह कर प्रत्येक नाम दिया गया तो आज वह नाम रहने पर भी उसे बुरा नाम समझ रहे हैं, नायि (कुत्ता) ब्राह्मण को बडा नाम समझरहे हैं।

उसदिन उसतरह सर को मुंडवाकर दिखाने का सांप्रदाय आज भी तिरुपति में नित्य हो रहा हैं। लेकिन उस ज़माने का मतलब आज बिलकुल भी नहीं हैं। आज इनसान ऐसा समझ रहा हैं कि अपने बालों से ईश्वर को बडी ज़रुरत है, इसीलिये कमज़ोर दिमाग (यानि अज्ञान) से इसतरह के मन्नतें माँग रहा हैं कि अगर तू ने मेरी इच्छा पूरी की तो उसके बदलेमें मैं अपने सरके बालों को तुम्हे समर्पण करूँगा। (लेकिन कम से कम उसके दिमाग में यह खयाल तक भी इनसान में नहीं आरहा हैं कि बिना पूछे ही ईश्वर ने हमें ज़िंदगी दी है महत्व वाली जिसम को हमें जायदाद के रुप में दिया है आखिर सर के बाल भी ईश्वर ने ही दिया है उसने दी हुयी बालों को उसीको

देना अज्ञान नहीं है क्या?क्या ईश्वर को हमारे ज़रुरतों के बारे में नहीं मालूम)। आज ज्ञान सांप्रदाय तलमुडि (यानि सर पर बालों को ढेर की तरह बांधने) का कोई भी मतलब नहीं रहा ऐसा ही मैं अपने अंदर के खयालों को खत्म करलियाँ हूँ कह कर बताने वाली सांप्रदाय यानि बिना बाल वाले अपने सर को ईश्वर के सामने दिखाने का मतलब भी किसी को नहीं मालूम। मंदिर के पास सर मुंडवाने केलिये पूर्व में जो आचार रहता था उसीतरह सर के बाल बढाकर मंगलवालों के हाथों कटवाना आज भी मौजूद हैं फिर भी, आज बाल बढ़ाने में कोई मतलब नहीं रहा, मुंडवालेने में भी कोई मतलब नहीं रहा। लेकिन एक खुशी की बात हैं कि आज भी मंदिरों के पास सर के बालों का समर्पण रहना देखें तो उससे यह साबित होता हैं कि पूर्व में इसतरह का रसम (आचार) रहता था। बाल मुंडवाने का कार्य बडी ज्ञानार्थ रखनेवाली सांप्रदाय हैं फिर भी वह सांप्रदाय अर्थरहित होना ही नहीं बल्कि उसे अमल किये हुये ब्राह्मण आखिर में शुभकर वाला **मंगलवाले** नाम को छोडकर, कुत्ते ब्राह्मण (नायि ब्राह्मण) नाम बोललना तो शोचनीय बात हैं।

तीन विभूति रेखाएँ

उस ज़माने के बडे लोगों का उद्देश्य यह हैं कि पूर्व में परमात्मा के ज्ञान को बताने वाले कामों को ही सांप्रदाय की तरह चुनले कर अमल करने से नये से पैदा हुये लोगों को परंपरा की तरह ज्ञान को पहुँचासकते हैं। उस तरीके से ही पिशानि पर तीन विभूति रेखाओं को डिज़ैन करना हुआ। तीन सुफेद रेखायें रखना ही नहीं बल्कि उनमें बीचवाली रेखा को सिंदूर से टीका या तिलक लगाते थे। इसतरह बीचवाले रेखा को तिलक लगाने से तीन रेखाओं

में से बीचवाली रेखा को प्रत्येकता मिला हैं। इतना कारस्तानि करने में ज़रुर कुछ न कुछ तो उद्देश्य होगा ना। अब हम उस ज़माने वालों का उद्देश्य क्या हैं मालूम करते हैं? मनुष्य के लिये मुख्य शरीर के भाग सर और मुख हैं। अगर किसी को पहचाननी होतो उनके चहरे को देखकर ही पहचानते हैं। अगर किसी के मनोभाव को जाननी हो तो मुख को देखकर मालूम करसकते हैं। मुख सबकेलिये एक पहचान की कार्ड जैसी हैं। इसीलिये किसी को भी पहचानने केलिये ज़रुर मुख को देखना ही पडेगा। बाहर की व्यक्ति की पहचान केलिये, अंदर की व्यक्तित्व मनोभाव की पहचान केलिये मुख मुख्य प्रतिबिंब हैं। इसीलिये पूर्व के ज्ञानी लोग मुख के ऊपर ही अति मुख्य ईश्वर की विषय को एक निशानि के सूरत में बतायें। मुख के ऊपर निशानि की तरह रखके बतायी हुयी चिह्न ही **तीन विभूति रेखायें** हैं। मुख पर पिशानि के भाग में सबको थोडी जगह होती हैं। नाक के ऊपर के भाग में रहने से दिमाग को समान भाग में पिशानि का भाग हैं। शिरस दैवनिलय भी है और माया का भी निलय हैं। हमारे सर में ही ईश्वर हैं और माया भी हैं। गुण माया का प्रतिरुप हैं। माया गुणों की सूरत में हैं। इसीलिये माया के बेहिसाब विकारों के निशानि के तौर पर सर के बेहिसाब बालों से कम्पार किये। और हम ने यह भी जानलिया कि उनको (बालों को) गांठ बांधना,बाल काट के गंजा करलेना यह सब माया पर जीत हासिल करने की निशानियाँ हैं। अगर मनुष्य माया से बाहर निकलपाया तो उसे ईश्वर मालूम होजायेगा। इसीलिये ईश्वर ने हमें इसतरह बनाया कि पहले माया की निशानि के तौर पर बेहिसाब बालों को सर पर रखा, फिर नीचे खालि (एम्टी) पिशानि के भाग को बनाया। सिर पर अनेक टुकडों में रहनेवाली माया पर जीत हासिल किये तो बाद में यह मालूम होजायेगा कि ईश्वर किसतरह हैं सिर्फ यह बात बताने केलिये ही दैवस्थान पिशानि

के भाग में ईश्वर की जानकारी बतानेवाली तीन विभूति रेखाओं को रखें हैं।

स्वच्छ सुफेद रंग को चुनले कर सुफेद रेखाओं को पिशानि पर यह बतानेकेलिये डिजैन किये कि ईश्वर बिना कल्मष के स्वच्छवाला हैं, संपूर्ण ज्ञानवाला हैं। हमने तो यह देखा होगा कि मंदिर के प्रतिमाओं के ऊपर के हिस्से में माया की निशान विकृताकार को रखा हुआ होता है इससे साफ जाहिर हैं कि ऊपर माया और नीचे ईश्वर हैं। उसीतरह के मतलब के साथ हमारे सर में माया ऊपर हैं और नीचे ईश्वर है कहे जैसा ऊपर बेहिसाब बाल और नीचे पिशानि का भाग हैं। कुछ लोगों को यह शक होसकता हैं कि इसतरह तीन रेखाओं को रखा क्यों?उसका जवाब यह है कि ईश्वर हर शरीर में भी तीन खिसम से हैं। **एक जीवात्मा, दूसरी आत्मा, तीसरी परमात्मा।** ईश्वर जो तीन खिसम से मौजूद हैं उस ईश्वर के निशानि के तौर पर तीन विभूति रेखाओं को पिशानि पर रखना हुआ। उस जमाने के बडे ज्ञानी लोगों का भाव यह हैं कि ऊपरवाली रेखा परमात्मा, बीचवाली रेखा आत्मा, नीचे की रेखा जीवात्मा है। तीन रेखाओं में से नीचेवाली रेखा जीवात्मा परमात्मा की अंश ही हैं उसके बावजूद भी वह कर्मबद्ध होकर है। जब तक कर्म रहता हैं तब तक कोई भी जीव हो परमात्मा को मालूम नहीं करसकता। जब तक सजीव से भूमि पर रहते हैं तब तक कोई भी परमात्मा को मालूम नहीं करसकते हैं। परमात्मा के बारे में जाननेकेलिये कर्म खत्म होजाना चाहिये। कर्म खत्म करलेने केलिये जिसकी आरधना करनी चाहिये, जिसके बारे में मालूम करनी चाहिये वह दूसरी आत्मा को ही हैं। आत्मज्ञान मालूम होने से ज्ञानाग्नि पैदा होकर कर्म को जलादेता हैं। जब कर्म सशेष से खत्म होजाता हैं तब परमात्मा में दाखिल होसकते हैं। हमें जिसके

बारे में मालूम करनी हैं वह दूसरी आत्मा ही हैं इसीलिये पिशानि पर दूसरी रेखा को सिंदूर से टीका लगाया था। पिशानि पर विभूति रेखाओं को पहने हुये पूर्वज दूसरी रेखा पर सिंदूर से टीका लगालेकर,यह बताते थे कि हमें जिसके बारे में जान कर आराधना करनी हैं वह यही (यानि आत्मा ही) हैं।

विभूति रेखायें इंदू सांप्रदाय हैं उन विभूति रेखाओं को लगालेने वाले आज भी मौजूद हैं। आज भी विभूति को पहनने वाले होने पर भी वे स्पष्ट से तीन रेखाओं को लगाये बिना पूरे पिशानि पर विभूति को थोपले रहे हैं। अगर कहीं पे भी तीन रेखाओं को अलग अलग से दिखे जैसा पहनने वाले रहने पर भी वे लोग बीचवाली रेखा को सिंदूर का टीका नहीं लगा रहे हैं। तीन रेखाओं को छोडकर नीचे लगा रहे हैं। विभूति को तीन रेखाओं की तरह लगाये बिना सबको मिला कर लगाना, रेखायें रहने पर भी बीचवाली रेखा को न पहचानना सांप्रदाय विरुद्ध होगा। विभूति रेखाओं का मतलब न मालूम होना ही सक्रम आचरण न रहने की वजह है। विभूति धारण दूसरों को व्यर्थ इसलिये लग रहा हैं क्योंकि उनलोगों को यह नहीं मालूम कि विभूति रेखाओं का अलंकरण सांप्रदाय हैं, और उसका असल मतलब नहीं जानते हैं। इस ज़माने में विभूति धारण सिर्फ स्वामियों के हद तक ही रहगयी। आखिर स्वामियाँ भी विभूतिधारण को सांप्रदाय बद्ध से नहीं पहन रहे है। कुछ लोग विभूति पहनने पर भी रेखायें भी नहीं रहते, अगर रेखायें होंगे तो टीका नहीं रहता। अगर ऐसा कुछ वक्त गुज़र गया तो आखिर में विभूति पहनने का सांप्रदाय ही गायब होजाने का प्रमाद हैं।



नथ

(नाक में पहननेवाला रिंग)

सर पर बाल बाँधना, पिशानि पर विभूति रेखाएँ लगाना, नाकों को नथ पहनाना इन तीन आचरणों को पूर्व में मुख पर लगायेजानेवाले तीन मुख्य सांप्रदाय समझते थे। इंदुओं में मुख पर लगाये जानेवाले तीन आचरणों में से दो आचरण पुरुष, दो आचरण स्त्रीयाँ सांप्रदायबद्ध के साथ अमल किया करते थे। बाल बाँधना, विभूति रेखायें लगाने का आचरण पुरुष किया करते थे तो, बाल बाँधना, नाक में नथ पहनने का आचार स्त्रीयों को रहता था। स्त्रीयाँ भ्रूमध्यस्थान में नाक के ऊपर के कोने पर कुंकुम तिलक को रखते थे। वे इस उद्देश्य से उस जगह पर तिलक लगाते थे कि ऐब्रोस के बीच के हिस्से में आत्मा निवास होकर हैं, और हम उस आत्मा की पूजा ही कर रहे हैं। मरद लोग भी विभूति रेखाओं में आत्मा को ही पहचान कर सिंदूर का टीका लगाया करते थे। मरद लोग सिंदूर से आत्मा को, औरतें कुंकुम से आत्म स्थान को पूज्य भाव के साथ पहचानते थे। औरतों को विभूति धारण करना नहीं रहता था। उसीतरह मरदों को नथ पहनना नहीं रहता था।

नाक में नथ पहनना औरतों केलिये मुख्य सांप्रदाय है वह आज भी थोडे तद तक बाकी हैं। फिर भी उन्हे नथ लगाने के पीछे जो अंतरार्थ है वह नहीं मालूम । अब हम यह मालूम करते हैं कि औरतें नथ पहनने के पीछे क्या आध्यात्मिकता हैं और उसका असली मतलब क्या हैं? हमारे शरीर में तकरीबन साढे तीन लाख नाडियाँ हैं। उनमें आत्म चैतन्य शक्ति प्रवाह करते हुये शरीर में हर एक परमाणु (॰दतण) को हिलाकर काम करवारही हैं। लाखों नाडियों में बह रही आत्म चैतन्य शक्ति एक केंद्र से आ रही हैं। वह केंद्र ब्रह्मनाडि में हैं। इसके मुताबिक यह मालूम हो रहा हैं कि आत्मा

ब्रह्मनाडि में निवास होकर हैं। ब्रह्मनाडि से आत्मा पहले दो नरों के द्वारा पूरे शरीर में फैल रही हैं। उन दो सूर्यचंद्रनाडियों के बारे में बताना ही **नाक में नथ पहनने का सांप्रदाय हैं** जो पहली आत्म प्रवेश के द्वारें हैं। शरीर में जब जनम शुरु होता हैं तब ब्रह्मनाडि से आत्म पहले दायें बायें रहनेवाले दो नाडियों में एक ही बार प्रवेश कर रही हैं। दायें तरफ रहनेवाली नाडी को सूर्य नाडि, बायें तरफ रहनेवाली नाडी को चंद्र नाडि कहते हैं। बीच में रहने वाली ब्रह्मनाडि को सुशुम्न नाडि कहते हैं। सीधे तरफ रहने वाली सूर्य नाडि को इडनाडि, बायें तरफ रहने वाली चंद्र नाडि को पिंगल नाडि भी कहते हैं।

इसतरह से हमारे शरीर में आत्मा निवास कर रही हैं कहकर बतानेवाली सांप्रदाय ही नाक के नथ पहनने की आचरण की तरह रहा करती थी। औरतों के नाक के सुराको (रंद्रो) में दायें रंद्र को सूर्यबिंब जैसी गोल आकारवाली नथ रहती थी। ऐसा ही बायें नाक के रंद्र को अर्थचंद्रआकृतिवाली नथ पहनते थे। पूर्व में अगर नथ होते हैं तो वे सूर्य चंद्र आकार के सिवा अलग क़िस्म से नहीं रहते थे। इस ज़माने में उनके आकार पूरा बदलजाकर कई प्रकार के नाक के रिंग्स तय्यार होगये। आज वहाँ वहाँ आकार बदले हुये नथ रहकर यह साबित कर रहे हैं कि पूर्व में नाक के रिंग्स रहा करते थे। पूर्व में सूर्य चंद्र आकार के नथ ही नहीं बल्कि ब्रह्मनाडि को बताते हुये दो रंद्रों के बीच में नाक के कोने के हिस्से में **बुलाकी** नाम का एक रिंग जैसी सोने की अंकुडा (हुक) को लगाके उसे एक मोति को लटकाते थे। दो रंद्रों के बीच में लटकायी गयी हुक ब्रह्मनाडि की निशानि हैं। ब्रह्मनाडि में स्वच्छ आत्मा हैं इसलिये आत्मा को सुफेद मोती के रुप में दिखाते हुये बीच में लटकाये। इस तरह के अलंकार से सूर्य चंद्र नाडियाँ और ब्रह्मनाडि मालूम होते हैं। इसतरह मालूम होने केलिये ही नथ पहनने का आचार रहता था। आज भी भरतनाट्य करनेवालों

के अलंकरण में नथ दो अलग आकार में रहने पर भी बीच में रहने वाली ब्रह्मनाडि की निशानि मोती के साथ पद्दती के प्रकार वैसी ही हैं। यह जानलें कि बहुत ही महत्व मतलब रखनेवाले नथ और बुलाकी इंदू सांप्रदायों में मुख्य अलंकरण हैं। कम से कम अब से तो हमारे घर में रहने वाले स्त्रीयों से सूर्य चंद्र नथों को पहनाकर सांप्रदाय को बचालेते हैं।



धोती बांधना, साडि बांधना

मरद कमर के गोल बांधलेनेवाली धोति बांधने के तरीके में, औरतें बांधलेने के साडि के तरीके में भी ज्ञान को बसाकर बडों ने एक आचरण को पूर्व में रखा था। आज के जमाने में टौंजर्स आकर मरद लोगों को धोति बांधना ही मुशकिल होगया। ऐसा ही पंजाबि ड्रेस्सेस आकर औरतें साडि बांधना ही भूलगये। कुछ वक्त के बाद ऐसा भी एक वक्त आयेगा कि मरदों को यह तक मालूम नहीं होगा कि धोति क्या चीज़ हैं, ऐसा ही औरतों को यह तक मालूम नहीं होगा कि साडि क्या चीज़ हैं। आज भी कुछ जगहों में वहाँ वहाँ धोति बांधनेवाले मरद,साडि पहनने वाले औरतें मौजूद हैं। धोति साडि बांधनेवाले प्रजायें कहीं पे भी रहने पर भी यह कहसकते हैं कि उनमें बसाहुआ आध्यात्मिक रहस्य बांधनेवालों को नहीं मालूम। पूर्व में रहकर आज कहीं भी नज़र न आनेवाले धोति बांधना, साडि बांधने के आचारों का अंतरार्थ को अब बयान करलेते हैं।

जब मरद लोग धोति बांधा करते थे तब पेट के सामने फोरस्कर्ट बनाकर बांधते थे। फोरस्कर्ट का मतलब धोति को फोल्ड करके रखना। धोति को कमर के गोल बांधने पर भी, जो धोति का

कपडा बचा हुआ होता है उसे सात मरतबा फोल्ड करके पेट के सामने जमाते थे। ऐसा ही औरतें भी थोडी साडि को सात बार फोल्ड करके फोरस्कर्ट बनाके कमर के पीचे जमाते थे। औरतें पीछे, मरद सामने इसतरह फोरस्कर्ट को जमाने का तरीका आज भी कर्नाटका प्रांत में बाकी हैं। कुछ सांप्रदाय ब्राह्मण परिवारो में भी हैं। कर्नाटका ग्रामीण प्रांतो में आज भी औरतें मरदें फोल्ड करके बांधना हैं। आचार थोडा बच कर रहने के बावजूद भी सात फोल्डिंग्रस् का तरीका उन्हे नहीं मालूम। सात फोल्डिंग्रस् रखे बगैर ज्यादा कम फोल्डिंग्रस् रख रहे हैं।

शरीर को लपटे हुये कपडे को सात फोल्डिंग्रस् यह बताने के लिये रखा गया कि हमारे शरीर को हिलाकर चलानेवाली आत्मा सात केंद्रों में फैली हुयी हैं, सात केंद्रों में से आनेवाली शक्ति से ही हमारे शरीर में सांस खेल रही हैं। एक एक नाडिकेंद्र के द्वारा थोडी देर तक शरीर के सांस को आत्मा चला रही हैं। एक केंद्र की सांस के शुरुआत को, अंत्य को एक फोल्डिन्ग की तरह हिसाब करके, दिन में सात केंद्रों के द्वारा खेलने वाली सांस से ही शरीर जी रही हैं इसलिये शरीर को लपेटने वाले कपडे को सात बार फोल्ड करके सात नाडिकेंद्रों के बारे में सबको मालूम हुये जैसा किये थे। पूर्व में जब मरद लोग धोती पहनते थे, औरतें साडि उस समय उनके वस्त्रों को सिर्फ सात फोल्डिंग्रस् ही मतलब जानकर खयाल से रखलिया करते थे। ऐसे करने से यह याद लालेते थे कि यह शरीर आत्मा के सात नाडिकेंद्रों के द्वारा ही जी पारहा हैं। पूर्व में ज्ञान से जुडे हुये आचरण को ही बडोंने निर्णय करके रखा। पूर्व में ऐसे लोग रहते थे कि उन आचरणों का पालन करते हुये ज्ञान को बढालेते थे। कालगमन में उसका असली मतलब खत्म होजाने पर भी आचरण कुछ प्रांतों में बच कर हैं। बिना मतलब के आचरण उस शरीर के बराबर हैं

जिसमें सांस चलागया हो। कम से कम थोडे हद तक तो पहन-सहन सांप्रदायों को हम आचरण करके,उनको जान डालकर ऐसा करते हैं कि दूसरे भी उन सांप्रदायों पर अमल करें।

इंदू सांप्रदायों में ऐसे कुछ आचरण हैं जिन्हे इनसान ने अपने शरीर को चिपकालिये, जिनके बारे में हमें मालूम करनी भी चाहिये। इसतरह के कई आचरण और उनके अर्थ हमारे रचनाओं में से **देवालय के रहस्य** नाम के ग्रंथ में मौजूद हैं। हम चाहते हैं कि जिज्ञासी लोग (जिन्हे ज्ञान को मालूम करने की दिलचस्पि हैं वे) देवालय रहस्य पढकर मालूम करलें।



शव यात्रा

प्रपंच में हर जीव (प्राणि) निर्णय किया गया हुआ वायु (आयु) के प्रकार जीवनयात्रा करके मरजाना सहज ही हैं। यह जीवनयात्र निर्णीत वायु के प्रकार एक शरीर में चल रहा हैं। शरीर कहलानेवाली गाडि में जो वायु का माप निर्णय किया गया उतने दूर सफ़र करके, जहाँ वायु का माप खत्म हो रहा हैं वहाँ शरीर में से जीव को उतरना ही पडेगा। उसीको मरण कहते रहते हैं। यह स्टोरी तो हर एक जीव के साथ हो ही रहा हैं।

जब हम एक गाँव को जाने के लिये शुरु होते हैं तब इस बात को याद रख के सफ़र करते हैं कि वह गाँव कितना दूर हैं, हमें कहाँ उतरना हैं, ये सब याद रखलेके जर्नी करते हैं। अगर गम्य ज्यादा दूरवाला होतो खर्चों के लिये जितना पैसा चाहिये उतना ही हमारे पास रखलेते हैं। ऐसा ही उस सफ़र में किसी से भी दोस्ती की होतो यह जानकर दोस्ती करते हैं कि उतरने के हद तक ही यह दोस्ती

रहेगी फिर उसके बाद किसका रास्ता उसका हैं। (यह खूब याद रखलेते हैं) यह सफ़र का गम्य तो हमें मालूम हैं इसलिये यह प्रयाण (सफ़र) में रिश्ते (बंधन), अनुबंधन कुछ भी नहीं रखलेते।

सबको यह बात अच्छी तरह मालूम है कि जीवन के सफ़र में मरण कहलानेवाला **गम्य** हैं। लेकिन किसी को यह नहीं मालूम कि वो गम्य कितने दूर हैं। वह कब आयेगी यह भी नहीं मालूम। अगर हम ५० कि.मी स्पीड से जाने वाली गाडि में सफ़र कर रहे हैं तो, दिल्ली जाने केलिये आठ दिन, अमेरिका जाने केलिये एक महीना सफ़र का वक्त लगेगा कहकर मालूम होने के बावजूद भी हम हमारे साथ जो लोग टॉवेल कर रहे हैं उनसे हाय हाय बाय बाय वाला दोस्ती ही करेंगे (यानि टेम्पररी दोस्ती ही करेंगे)। लेकिन शरीर कहलानेवाली गाडि में हम यह नही ंजानते हैं कि हमारा (जीव का) सफ़र शरीर **में कितना वक्त तक** है फिर भी हम हमारे साथ सफ़र करनेवालों के साथ पूरे तरीके से रिश्ते जोडलेना हो रहा हैं। जब हमें यह तक नहीं मालूम कि हमारा सफ़र एक दिन का हैं या आधे दिन का तो फिर इसतरह हम रिश्ते बनालेने में तो कुछ मतलब ही नहीं हैं। जब यह जानते हुये भी कि दिल्ली का प्रयाण एक हफ्ते का हैं उसके बावजूद भी हमारे साथ सफ़र करनेवालों से हम रिश्ते नहीं जोडते। तो हमें इस बात का भी यकीन नहीं हैं कि हमारा देह का सफ़र का वक्त हफ्ता भी हैं या नहीं तो फिर ऐसी सूरत में रिश्ते बनालेना तो ज्ञान रहित यानि अज्ञान हैं। अगर ज्ञान सहित से योचना करें तो साथ के प्रयाणियों की तरह शरीरों के अंदर हम जीवित गुज़ार रहे हैं फिर भी किसका गम्य उसीका हैं। (यानि हर एक का गम्य या मनज़िल अलग अलग होता हैं) **जिस गम्य तक सफ़र है वहीं तक जाकर रुकजायेगा। तेरे साथ गारेन्टी के साथ तेरे गम्य तक सफर करनेवाले**

कोई भी नहीं रहेंगे। यह बात तो सबको खुबूल करना ही पडेगा। लेकिन यह थोडे तद तक वास्तव ही हैं। तो और एक ऐसा सच है जिसके बारे में हम नहीं जानते। वह सच यह है कि सहज से दिखनेवाले आपस में तेरे साथ सफ़र किये हुये लोग तेरे गम्य तक न आने पर भी तुझे दिखे बगैर तेरे साथ सफ़र करनेवाले और **दो** जन हैं। उनमें से एक जन का तो नाम हैं,लेकिन दूसरे का तो कोई नाम ही नहीं हैं। एक का नाम **आत्मा** हैं तो दूसरे वाले का कोई नाम नहीं हैं इसलिये उसे **परमात्मा** कहते हैं यानि आत्मा से परे (अलग) रहनेवाला,उसीको ईश्वर(अधिपति), शिव, देवुडु, अल्लाह इसतरह कई नामों से पुकार रहे हैं।

तुझे भी यह बात मालूम हैं कि तू **जीवात्मा** हैं। लेकिन तू यह भूलगया कि तू शरीर में प्रयाण (सफ़र) कर रहा हैं। और तुझे यह भी नहीं मालूम कि तेरे साथ भी हमेशा और **दोनों** रहते हैं। यह बात किसी को भी नहीं मालूम कि तेरे शरीर में **तीनों** सफ़र कर रहे हैं।

ऐसा ही सब जीवरासियों के शरीरो में भी तीनों की सफ़र हो रही हैं। शरीर में आत्मा परमात्माओं के साथ तेरा (यानि जीवात्मा) का क्या बंधन (रिश्ता) हैं? उनसे तुम कितनी दोस्ती निभा रहे हो? अगर हम इन बातों पर योचना करें तो यह मालूम हो रहा हैं कि जीवात्मा बिलकुल भी उनसे किसी भी तरह का संबंध नहीं रखले रहा हैं। दूसरों के तक क्यों तुम यानि अब इस वाक्य को जो पढ रहे है क्या तुम उनसे कुछ रिश्ता रखे हो (अपने आप में सवाल करलो) तो तुम्हे यहीं जवाब मिलेगा कि नहीं बिलकुल भी तुमने उन दोनों के बारे में नहीं सोचा। जो कुछ रिश्ता हैं वह हमारे आँखों के सामने मरनेवालों के साथ या हमारे बाद में मरनेवालों के साथ ही रिश्ता रखलेकर, उनसे ही पूरा वक्त गुजर जा रहा है तो, अंदर के आत्मा,

परमात्माओं को और उनसे रिश्ता जोडने की फुरसत, सबर किसी को भी नहीं हैं। चाहे वह तुम हो, कोई और हो अंदर रहने वालों के तरफ नहीं देखें तो भी उनका रिश्ता हमेशा तेरे साथ ही हैं। अगर उनका बंधन नहीं हैं तो शरीर में हम एक मिनट भी ज़िंदा नहीं रह सकते। शरीरवाहन में जीवात्मा, आत्मा, परमात्मा सफ़र करते हुये गम्य (मनजिल) को पहुंचते ही शरीर बंधन से जीवात्मा उतर जाता हैं। वह एक ही नहीं उसके साथ आत्मा भी उतर जाती हैं। **तेरे साथ सफ़र शुरु करके तेरे साथ ही मनज़िल में उतरजानेवाला आत्मा एक ही हैं।** यह विषय **भगवद्गीता पुरुषोत्तम प्राप्ति योग** अध्याय ८ श्लोक में कहा गया हैं।

तेरे गम्य में तेरे साथ सफ़र करनेवाले आत्मा, परमात्मा इन दोनों में से सिर्फ एक जन ही उतर जाता है। परमात्मा आत्मा से अलग हैं इसलिये परमात्मा वैसे ही शरीर में रहता हैं।

सजीव यात्रा में जीव सुख दुखों का अनुभव करता रहता हैं। उन सुख दुखों के अनुभवों के लिये ज़रुरी कार्यआचरणों को चैतन्य देकर शरीर को जिसने हिलाया वह आत्मा ही है। तीसरा वाला गवाह की तरह सबको देखते हुये कुछ न किये बगैर मौन से रहता हैं। सिर्फ एक परमात्मा ही शरीर में हमेशा मौन से रहता हैं तब भी जब जीव शरीर में रहता था और तब भी जब जीव शरीर में नहीं रहता हैं। उसीको **शिव या ईश्वर या परमात्मा** कहते हैं। अब हम यह जानगये ना कि वो तीसरा वाला जो कुछ भी नहीं हैं उसे परमात्मा कहने के पीछे क्या अंतरार्थ है! उसी तरह अब यह मालूम करते हैं कि उसे ईश्वर क्यों कह रहे हैं।

अधिपति यानि बडा या सबसे बडा, महान का मतलब होता हैं। उसी तरह लक्षाधिपति (लखपति) का मतलब लक्षा (लाख) का

अधिपति या लाख से ज्यादा (पैसे) रखनेवाला,लाख रखनेवाला कह कर समझमें आता हैं। लक्षाधीश्वर, कोटीश्वर (करोडपति) कहने में यह मालूम हो रहा हैं कि करोड का, लाख का मालिक या अधिपति हैं या उनसे भी बडा है। इस प्रपंच में लाख, करोड, यह, वह कहे बगैर सबका समस्त का अधिपति सिर्फ एक परमात्मा ही हैं। इसलिये यह कहे बगैर कि वो फलाना चीज़ का ही ईश्वर है उसे कुल्लि तौर पर एकै क शब्द से **ईश्वर** कहना हुआ। उसका नाम शिवम भी इसलिये रखा क्योंकि कोई भी उसे पहचान नहीं सकते, वह सब जगह मौजूद है, वह किसी को मालूम नहीं होता, जिंदे रहनेवाले ज्ञानियों को भी, योगियों को भी मालूम नहीं होता, वह अगम्यगोचर हैं, इसीलिये उसे शिवम कहा हैं। जिसके बारे में मालूम नहीं उसीको शिवम कहते हैं। ज्ञानियाँ योगियाँ यह जानते हैं कि शिवम कहलानेवाली चीज़ एक हैं। लेकिन उन्हे यह नहीं मालूम कि वह क्या हैं? जीवात्मा ज्ञानयोग के ज़रिये शरीर में रहनेवाली आत्मा को मालूम कर सकता हैं, लेकिन **शिवम** को किसी भी हालत में मालूम नहीं करसकता। कर्म खत्म होजाने के बाद बिना जनमवाली हालत को पहुँचे हुये योगियाँ शिवम में ऐक्य होजाते हैं। वो क्या है उसके बारे में तब ही मालूम होगा लेकिन उससे पहले मालूम नहीं होगा।

शरीर में की जीवयात्रा में मरण कहलानेवाली गम्य में आत्मा, जीवात्मा शरीर से बाहर आजाने पर आखिर में शरीर में बाकी रहनेवाला सिर्फ शिवम ही हैं। अब शरीर में वह जीव नहीं रहा जिसने ज़िन्दा रहते वक्त नीच गुणों के साथ संबंध रखा था। वह शरीर जिसमें जीव और आत्मा नहीं हैं उसमें किसी तरह के भी नीच भाव नहीं हैं। जब वह शुद्ध **शिव** निलय है। सिवाये परमात्मा के कोई भी नहीं हैं। इसलिये वे ज्ञानियाँ जो इस विषय को जानते हैं एक व्यक्ति मरजाने के बाद अंत्यक्रिया से पहले उस शरीर को भक्ति भाव

के साथ पूजते थे। मृतदेह (लाश) को दैव संबंध विभूति नाममों से अलंकार करके, गोविंद नामस्मरण से पूजा करके, सबको कहते थे कि उसे नमस्कार करें। इसतरह की सांप्रदाय आज भी रहने पर भी वे बेमतलब का आचार हुआ। अब लेग लाश को भक्ति से नहीं बल्कि डर से नमस्कार कर रहे हैं। और इसतरह के भाव से वो नमस्कार कर रहे हैं कि अगर अब यह लाश को नमस्कार नहीं किये तो वह वापिस शैतान या भूत होकर आयेगी, फिर उसका पीडा पूरे घर को लपेटलेगा, अगर नमस्कार करडालें तो यह झंझाठ ही नहीं रहेगा समझकर नमस्कार कर रहे हैं।

लेकिन पूर्व में ऐसा नहीं किया । वे लोग हर काम मतलब जानकर किया करते थे। वो अच्छी तरह जानते थे कि जीव शरीर में से बाहर जाने के बाद आखिर में शरीर में सिर्फ शिव (ईश्वर) ही बचता हैं। इसीलिये मरा हुआ शरीर को (मृतदेह) शिवम कहते थे। कालक्रम में भाव बदलगया। आखिर में **शिव** का शब्द **शव** शब्द में बदल गया। शिवम शवम में बदलजाने पर भी पूर्व से जो पूजायें थे वे वैसे के वैसे ही हैं। इसीलिये यह मालूम हो रहा हैं कि उसका असली अर्थ आज बदलगया हैं।

वे योगि जिनका कर्म निश्शेष से खत्म होगया वे दूसरे जनम को नहीं जाते बल्कि तीसरे पुरुष परमात्मा में ऐक्य होजायेंगे। ऐसेलोग मरते वक्त अपने शरीर को छोडकर नहीं जाते। शरीर में रहनेवाले शिव (परमात्मा) में ही ऐक्य होजाते हैं। ऐसे लोगों के शरीर को आखरि दिन में पूजा करना ही नहीं बल्कि समाधि में रखकर नित्य पूजायें करना भी बडों का निर्णय ही हैं। क्योंकि वे जानते हैं कि इसतरह करने से साक्षात इतना फलित मिलता है कि जितना परमात्मा की आराधना करने से मिलता है।

शव (लाश) के बारे में अब हमने थोडा मालूम किया। यह निज (सच) मालूम हुआ कि वह शव नहीं हैं बल्कि शिव हैं। इसीलय लाश को शुभसूचक मानना चाहिये। सब की तरह पीडा या पिशाच नहीं समझना चाहिये। किसी पूजा विधान में शामिल न हुये तो भी कोई बात नहीं। **शव** को **शिव** की तरह देखिये। उनकी मदद कीजिये जो अंत्यक्रिया नहीं करसकते। आप लोगों ने मुस्लिम समाज में देखा ही होगा कि उनको उस क्रिया के बारे में कुछ मालूम न होने पर भी शव को देखते ही सब कामों को छोडके जाकर एक से बडकर एक शव पेटी को उठाते हैं। वही अगर ईसायि मत में होतो मत गुरु बैबिल पडते हुये भक्ति के साथ अंत्यक्रिया करना देख ही रहे हैं। सबसे पहले पैदाहुयी (इंदू) हिंदू मत में नाममात्र आचार के साथ घर के लोग ही पसंद न होतो भी मृतदेह को स्नान करवाकर टीका लगाकर भेज रहे हैं। बे मतलब वाले आचार के साथ पूजा करते हुये शिव को शव कह रहे सबलोग शव को शिव की तरह देखकर असली भक्ति से यह भाव रखना चाहिये कि हम मरेहुये शव को नहीं बल्कि उसमें बसा हुआ शिव (ईश्वर) को अंत्यक्रिया कर रहे हैं। अगर मरे हुये लोग योगि है तो समझो कि ऐसा शरीर मिलना ही हमारा सौभाग्य हैं फिर उसे प्रत्येक जगह पर समाधि करके नित्य पूजायें करना अच्छी बात हैं। ऐसी शरीर समाधि दैवशक्ति की निलय होकर रहती हैं। उस समाधि को जो लोग पूजा करते हैं उनके कर्म जलजाते हैं।



दिंपुडु कल्लमु

(शवयात्रा में शव को एक जगह उतारकर फिर वापिस शव को उठाकर लेकेजाना)

हमलोगों ने यह मालूम करलिया कि शव को शिव की तरह समझकर पूजा करके गोविंद नाम स्मरण के साथ स्मशान को लेकर जाना पूर्व में रहता था। नित्य हमारे सामने रहने वाला व्यक्ति सडन्ली मरजाने से, उस व्यक्ति को एक ही बार शव की तरह देखने से, उस शरीर को देखकर ऐसा समझते हैं कि वह फलाना व्यक्ति है लेकिन कुछ लोग उसे महत्ववाला शिव जैसा कम्पार नहीं करले सकते। ऐसे लोग मरे हुये व्यक्ति पर रहने वाला मोहगुण से कुछ लोग मेरा बेटा है कह कर दुखित होते है तो कुछ लोग मेरा भाई कहते हुये दुखित होते हैं, ऐसा ही कुछ लोग मेरा रिश्तेदार कह कर दुखित होते ही रहते हैं। ममकार (मोह गुण) को न छोड सकनेवाले मनुष्य अपने गुणों से गत (पास्ट) को याद करलेते हुये रोते ही रहते हैं। मृतदेह को सांप्रदाय के प्रकार शिव की तरह समझकर उसको सजाकर, पूजा करके, नमस्कार करके शवयात्रा करते हुये भी कुछ लोगों को मरे हुये व्यक्ति पर ममकार को न छोड सकके मृतदेह को महत्व भाव के साथ नहीं देखपा रहे हैं। स्मशान तक लेके जाने की रास्ते में एक जगह मृतदेह को उतार कर वापिस उठाके लेकर जाने का आचार है। इसतरह एक उतारनेवाली जगह को दिंपुडु कल्लमु कहते हैं। घर के पास से दिंपुडु कल्लमु तक का शवयात्रा एक भाग है तो, बाद में दिंपुडु कल्लमु से स्मशान तक एक भाग की तरह समझते थे। जो व्यक्ति मरगया उस पर प्यार को न खोयेहुये मनुष्य दिंपुडु कल्लमु तक आते थे। दिंपुडु कल्लमु में शव को उतारकर मुख को बांधा हुआ कपडा निकालकर सभी लोगों से कहते थे कि आऊ देखिये। पाँच मिनट के बाद वैसा ही ढक कर बाकी शवयात्रा को पूरा करते थे।

रोनेवाले लोग सिर्फ दिंपुडु कल्लमु तक ही आते थे। बाद वाले हिस्से में वह शामिल हुये बगैर घर वापिस चले जाते थे।

सिर्फ वे लोग ही बाकी शिवयात्रा में शामिल होते थे जो शव को पूरे तरीके से शिव की तरह मानकर, मोह गुण को छोडकर, मन में पूरी तरह से उसे ईश्वर की तरह मानने वाले ही दिंपुडु कल्लमु के बाद शवयात्रा में शामिल होते थे। शव को बीच में उतार कर फिर से उठाने वाली जगह का नाम **दिंपुडु कल्लमु** रखने में पूर्व में एक मतलब हुआ करता था। जंगल में पिकी हुयी फसल मकई (भुट्टे) की सूरत में रहती है। भुट्टों की सूरत में रहनेवाली फसल **कल्लमु** में ही बींज अलग होजाते हैं (**कल्लमु** एक ऐसी जगह है जहाँ पर भुट्टे सूखने के बाद सूखे हुये भुट्टों से बीज को अलग करनेकेलिये उन सब भुट्टों को एक जगह पर डालके बीज अलग करते हैं उस जगह को ही तेलुगु ज़बान में कल्लमु कहते हैं) । जबतक बीज भुट्टे को चिपक कर रहता है तब तक वह भुट्टे की आधीन में ही रहती हैं। भुट्टे में रहनेवाले परदों (लेयर) से चिपकायि गयी बीज परदे से कल्लमु में अलग किये जारही है। इसतरह एक बार अलग की गयी बीज वापिस कभी भी भुट्टे की आधीन में नही जायेगी, उसके परदो (लेयर्स) में नही फसती। एक बीज अपने साथ रहनेवाले कई बीजो में भुट्टे में फसीहुयी हैं। कल्लमु में बीज के नीचे का भुट्टे का परदा जब रगडजाता है तो उस परदे से बीज बाहर निकल सकरहा हैं। यह तो सब जानते ही हैं कि इसतरह बाहर निकला हुआ बीज वापिस भुट्टे में नहीं पहुँचसकता। पूर्व में बडे लोगों ने यह बतानेकेलिये ही भुट्टे का उपमान दिया था कि भुट्टा कहलानेवाले कर्म के परदो में जीव फसा हुआ है। और यह बातनेकेलिये उदाहरण की तरह कल्लमु को बताना हुआ कि कर्म से छुटकारा पाया हुआ या अलग हुआ जीव वापिस कर्म में फसे बगैर स्वतंत्र होजाता है।

पूर्व में बडे लोग यह बात अच्छी तरह जानते थे कि जो लोग ज्ञान से अपने कर्म को निश्शेष से खत्म करलिये वे लोग जब मरजाते हैं तो, उसका मतलब यह है कि वह व्यक्ति ने मोक्ष पालिया है फिर वापिस जन्म नही लेगा। यह बात बताने केलिये ही शवयात्रा में दिंपुडु कळ्ळमु कह कर नाम रखके एक जगह उतारते थे। इसतरह उतारकर बाद में उठाकर लेके जाने में वह यह सूचना देरहे हैं कि मराहुआ व्यक्ति वापिस जन्म को नहीं आयेगा, **वह योग कहलानेवाली कळ्ळमु के ज़रिये कर्म कहलानेवाली भुट्टे से अलग होगया है।** अगर जब तक भी उसकेलिये कोई रो रहा है तो उनसे कहते थे कि अब इस काम से (दिंपुडु कळ्ळमु) वह ईश्वर होगया हैं, इसलिये अब से उस पर किसी तरह के प्रपंच संबंध ममकार नहीं रहना चाहिये। अगर कोई दिंपुडु कळ्ळमु तक रोये तो भी कोई बात नहीं मगर दिंपुडु कळ्ळमु के बाद कोई भी नहीं रोना चाहिये। जब तक अलग क़िस्म का भाव रहने पर भी तब से यानि दिंपुडु कळ्ळमु के बाद पूरा भाव में बदलाव आकर शव को पूरे तरीके से शिव की तरह समझना होगा। इसीलिये रोनेवाले वहाँ से पीछे आजाते थे। बाद में सिर्फ वो लोग जो पूरे तरीके से शव को शिव समझते थे स्मशान तक जाकर मुक्ति पाये हुये व्यक्ति के शरीर को भूस्तापित करके आते थे। जिस स्थल का नाम दिंपुडु कळ्ळमु रखा गया वह प्रत्येक से नहीं रहता। बीच में कहीं एक जगह उतारकर दूसरों को उसका मतलब समझाकर वापिस उठाकर लेके जाते थे। यह तरीका सिर्फ मोक्ष पाये हुये योगियों को ही करना सांप्रदाय हैं। इसतरह करने की वजह से योगियों की अहमियत,मोक्ष की पद्दती दूसरों को मालूम होता था। दिंपुडु कळ्ळमु का सांप्रदाय योगियों के सिवा दूसरों को नहीं करना चाहिये। दूसरे कर्मबंधन में रहनेवाले ही हैं इसलिये वे उन भुट्टों के समान है जो कळ्ळमु मेें नही आये यानि कर्मबंधन से छुटकारा नहीं पाये। इस ज़माने

में दिंपुडु कल्लमु का सांप्रदाय कुछ प्रांतों में मौजूद हैं। दिंपुडु कल्लमु नाम रखके उन सामान्य प्रजाओं को भी उतार कर उठारहे हैं जो असल में योगियाँ नही हैं। इसतरह करने में दिंपुडु कल्लमु का उद्देश्य खराब होकर बेमतलब वाली होगयी। कुछ जगहों में तो योगियों को भी दिंपुडु कल्लमु नही हैं। यह मालूम हो रहा हैं कि इन सबकी वजह सांप्रदायों में से दिंपुडु कल्लमु का सांप्रदाय मालूम न होना ही हैं। अब तो मालूम किये है ना! कम से कम अबसे तो सांप्रदाय को सक्रम तरीके से अमल करके ऐसा करना चाहिये कि अगर मरे हुये लोग मोक्ष पाये हुये योगियाँ हैं तो बीच में उतारना, अगर वे योगियाँ नहीं है तो उतारे बगैर ही लेकर जाना ।

पिंडाकूडु (कर्मकांड)

कर्मकाण्ड को तेलुगु ज़बान में पिंडाकूडु कहते हैं। कर्मकाण्ड शब्द को तो शायद सब सुने हुये ही होंगे। पिंडाकूडु के बारे में हमलोगों को जो मालूम है वह यह है कि! लोग कहते हैं कि अगर एक मनुष्य मरगया तो कर्मतंत्रों के नाम से मरे हुये व्यक्ति की भूक को मिटाने के लिये रखनेवाली आहार को पिंडाकूडु या कर्मकाण्ड कहते हैं। एक एक प्रांत में एक एक क़िस्म से ये कर्मतंत्र ब्रह्मणों के ज़रिये करवाते हैं। कुछ लोग मनुष्य मरजाने के बाद तीन दिन को, ग्यारह दिनों को, संवत्सर को पिंडाकूडु रखना करते हैं। कुछ लोग महीने को एक बार क्तत्दङ्कुणी ॲठज्ञठणतती (नेला मासिका) के नाम से पिंडाकूडु रखना भी हो रहा है। और कुछ लोग साल को एक बार पुण्य क्षेत्रो में तर्पण (संतुष्टि) के नाम से, तद्दिन (मरे हुये व्यक्ति की सालगिरह) के नाम से इसतरह कई क़िस्मों के नामों से ये कार्य करते हैं। यह बात को लेकर कुछ लोगों को पूछने पर उनका जवाब

यह है कि! मरे हुये व्यक्ति को यमदूत अपने साथ बुलाकर लेके जाते हैं, इसतरह साल भर उनको चलाते हुये लेकर जाने से वह जीव भूक से तकलीफ उठाता है, महीने को एक बार कूडु (खाना) डालने से जीव का भूक मिटजाता है। और कुछ लोग कह रहे हैं कि मरा हुआ जीव यमलोक को पहुँचने के लिये एक साल लगता है, उस दिन को ही संवत्सरीक कहते है उसीदिन पिंडाकूडु रखने से उसकी भूक मिटजाकर यमलोक को चलाजायेगा। यमलोक को जाने के रास्ते में यमदूत तो जीव को खेद करके लेकर जाते हैं ना तो फिर वह खेदी किसतरह वह आहार को खापायेगा जो हम रखरहे हैं? अगर इसतरह सवाल पूछते हैं तो वे ऐसा बात करते हैं कि मरा हुआ व्यक्ति कव्वे के रुप में आकर खाके जायेगा। क्या इतना भी नहीं जानते वह भी पूछ रहे हो हमसे! क्या तुम अपने बाप को हो, अपने दादा को हो पिंडाकूडु नहीं रखे हो क्या?क्या तुमने यह नही देखा कि कव्वे खाकर जाते हैं।

वह कहते हैं ना कि गुंटूर का तंबाकु घोंसले में रहे या मुंह में रहे दोनो एक ही बात हैं। उसीतरह कुछ लोग किसी भी विषय को जानने की कोशीष न करते हुये कहीं भी हो कैसे भी हो बिना टेस्ट के तंबाकू की तरह रहते हैं। वह कहते हैं ना कि गुडिवाडे की तंबाकु घोंसले में रहे या मुंह में रहे तीखा ही रहता हैं उसीतरह कुछ लोग ऐसे रहते हैं कि हर एक विषय के बारे में मालूम करने की तीखी आक्टिवनेस रखते हैं। वैसे लोगों के मन में कई सवाल उद्भव होते हैं। हर एक विषय को जानने की उत्सुकता (दिलचस्पि) उनमें रहती हैं। उनके प्रश्नों का परंपरा इसतरह रहता हैं। **१) पिंडाकूडु का मतलब क्या हैं? २) पिंडाकूडु कहे बगैर सिर्फ कूडु (खाना) कहसकते हैं ना! ३) क्या मरेहुये लोग पिंडाकूडु खाते हैं? ४) साथ लेके जाने वाले यमकिंकर पिंडाकूडु खानेकेलिये हमारे पोलिसों की तरह कुछ**

रिश्वत लेकर उसे छोडते हैं क्या? ५) मराहुआ व्यक्ति उसके बेटों ने रखी हुयी पिंडाकूडु केलिये कव्वे के अवतार में क्यों आता हैं? ६) मैं तो हमेशा एक लंगडे कव्वे को स्मशान में देखता हूँ उस कव्वे ने बहुत से लोगों का पिंडाकूडु खाया था, अब उस लंगडे कव्वे को हम क्या कहना चाहिये? ७) हर दिन कई लाखों के लोग कई करोडों के प्राणियाँ मरजा रहे हैं। अगर एक व्यक्ति को लेकर जानेकेलिये दोनों यमकिंकरों की ज़रुरत है तो उस हिसाब से मरे हुये सबको लेके जानेकेलिये कितने करोडों के संख्या में यमकिंकर होनी चाहिये? ८) जब लेकर जानेवालों की संख्या ही कई करोडों में है तो यमलोक में पापों को भुगतवाने केलिये और कितने जन रहना चाहिये? ९) वहाँ के यमकिंकर, यहाँ से जानेवाले यमकिंकर सब कितने करोड होंगे? १०) क्या यमलोक उतना विशाल हैं? ११) आपने कहा कि यमकिंकर जब जीव को लेकर जाते हैं तो रास्ते में जीव को भूक लगता हैं। १२) अगर जीव को भूक लगी तो क्या यमभटों को भूक नही लगती? १३) अगर उनको भूक लगी तो क्या वो अपने साथ कुछ खाने की पोटली लेकर आते हैं क्या? १४) वरना क्या वे भी जीव के साथ नीचे आकर कुछ खाना खाकर जाते हैं? १५) हमने देखा कि अगर मराहुआ व्यक्ति शराबी है तो पिंडाकूडु रखनेवाले उसकेलिये शराब हो या ब्रांदि हो रखते हैं। अगर पितायें कव्वे बनकर आयें तो वहाँ पर जो शराब रखा गया उसे क्यों नही पिये। १६) अगर हमारे बडे बुजरुग पिंडाकूडु खाने केलिये कव्वे के रुप में जब आते हैं तो उसे पकड कर युं क्युं नहीं समझते कि यह तो हमारा बाप है ना! इसतरह का प्यार रखते हुये उस दिन से उस कव्वे को अच्छा खाना खिलासकते हैं ना! इसतरह पकडकर हमारे पास ही उसको रखलेंगे तो उसे यमलोग जाने का दुख,वहाँ जाकर पाप को भुगतने की सब तकलीफों से छुटकारा

मिलजायेगा ना! तो फिर क्यों कोई भी इसतरह नहीं कर रहा हैं? १७) जब माँ बाप जिंदे थे उसवक्त (भूक की हालत में)खाना नही खिलाया हुआ बेटा मरने के बाद पिंडाकूडु नहीं रखे भी तो क्या होगा? १८) जब बाप जिंदा था उसवक्त उस पर प्यार नहीं जताया तो फिर कर्मकाण्ड के दिन प्यार कहाँ से आ रहा हैं? १९) क्या ये सब सांप्रदाय पूर्व में ज्ञान जाने हुये बडे लोगों ने रखा है या नहीं? अगर रखे हैं तो किस मखसद से रखे हैं? २०) असल में पिंडाकूडु क्यों रखना चाहिये? २१) कितने दिनों को रखना चाहिये? २२) असल में इस कार्य में कुछ सारंश वाली बात है क्या? २३) क्या यह काम वास्तव में इंदू सांप्रदाय है? इसतरह अनेक प्रश्न तेज़ अखलवालों में पैदा होते हैं। क्या सच में इसतरह के सवालों के जवाब है या नही? इस बात को लेकर हमलोगों को योचना करने की ज़रुरत हैं। अब हम देखते हैं कि इसतरह योचना करने से हमें क्या जवाब मिलेगा ।

पिंड का मतलब शरीर है कहसकते हैं। क्योंकि माँ के गर्भ में जो रहता हैं उसे पिंड कहते हैं। हम यह बात भी सुनते रहते हैं कि माँ के गर्भ में पिंड आडे फिर गया है। माँ के गर्भ से जनागया शरीर में आत्मचैतन्य रहकर बडाहोकर अनेक कर्म भुगतना,नये से अनेक कर्मों को कमालेना दो भी हो रहे हैं। जो काम हो रहा हैं उसमें कितना कर्म आरहा हैं यह मालूम न होने पर भी उसवक्त जो काम हो रहा है उसमें जो अनुभव किया जा रहा है सिर्फ वही मालूम होरहा हैं। जब कुछ कर्म भुगतते हैं तब कुछ लोग इसतरह कहते हैं कि यह सब मेरा करम हैं। पिछले जन्मों में जो करम हमने करलिये उनको भुगतने केलिये ही हम पैदा हुये हैं। क्षण क्षण में जो भुगत रहे हैं वह सब कुछ कर्म ही हैं। जो कर्म पहले से मौजूद है उसको निश्शेष से खत्म करलेने को हो या भुगतने को ही कर्मानुभव कहते हैं।

जिसतरह आहार पदार्थ खाकर खत्म करते हैं उसीतरह कर्म को भुगतके खत्म कर रहे हैं। जो आहार हम खाते हैं उसे असली (अच्चा) तेलुगु ज़बान में **कूडु** कहते हैं। खाने को **कुडुचुटा** कहते हैं। खाना खाने को कूडु कुडचडमु कहते हैं। जैसे खाने को खाकर खतम कर रहे हैं उसीतरह कर्मो को भी भुगत कर खत्म कर रहे है। इसलिये पूर्व में बडे लोग कहते थे कि जीव कर्मों को कुडुच रहा हैं यानि कर्मों को खा रहा हैं। हम खाकर खत्म करनेवाले खाने से कर्म को कम्पार करके कूडु कहते थे। पूरे कर्मों को सजीव शरीर को ही भुगतना हैं इसलिये शरीर को पिंड,अनुभव करनेवाले कर्मों को कूडु (आहार) कहा हैं इसतरह एक मनुष्य के कर्म को पिंडाकूडु कहते थे। शरीर से अनुभव करनेवाले कर्म को ज्ञानी लोग पिंडाकूडु कहा करते थे। यह ज़माने में भी संदर्भ के अनुसार तेरा पिंडाकूडु या तेरा कर्मकाण्ड कहना हो रहा हैं। हर जीव नित्य भुगतनेवाले कर्म को ही पिंडाकूडु या कर्मकाण्ड कहा करते थे। आज भी कभी कभार वह सब तेरा करम है कहने के बदले में **तेरा पिंडाकूडु** कह कर स्वयं हम ही कहरहे हैं। कुछ लोग मालूम न होने पर भी इस शब्द को बोलते रहते हैं।

एक व्यक्ति मरजाने के बाद बाह्यार्थ से पिंडाकूडु रखना पूर्व से होरहा सांप्रदाय ही हैं। लेकिन पूर्व में मरेहुये सबलोगों को पिंडाकूडु नहीं रखते थे। जैसे भगवद्गीता में कहा कि मराहुआ व्यक्ति अपने जीवित में योगी की तरह रहते हुये मोक्ष पर दिलचस्प से रहा तो,बडेलोग ऐसा समझते थे कि जैसे भगवद्गीता ने कहा वैसे सुबह,शुक्ल पक्ष,उत्तरायण में जब सूर्यरश्मी होती है तब अगर उसका मरण हुआ तो,उस वक्त मराहुआ योगी वापिस पैदा नहीं होता हैं,वह मोक्ष पाकर ईश्वर में ऐक्य होगया हैं। कर्मतंत्र के नाम से पिंडाकूडु या कर्मकाण्ड यह बताने के लिये किया करते थे कि इसतरह मराहुआ व्यक्ति का

कर्म खत्म होगया हैं, वो वापिस पैदा नहीं होगा। सजीव से रहनेवाले हर जीव को नवग्रहों के द्वारा ही कर्म अमल में आ रहा हैं। जो व्यक्ति मोक्ष को पाया है उसे नवग्रहों से किसी भी तरह का संबंध नहीं रहता। जीव जिंदा रहते समय कर्म को पहुँचानेवाले नवग्रह मोक्ष पाये हुये व्यक्ति को कर्म न रहने की वजह से ग्रह उसे कुछ नहीं करसकते, उस व्यक्ति को फिर से जनम को ला नहीं सकते। इसलिये यह बताने के लिये ही मोक्ष पाये हुये व्यक्ति को नौ वीं दिन कर्मतंत्र किया करते थे कि वह कर्म से छुटगया है, फिर से उसे जनम नहीं हैं।

मोक्ष पाये हुये व्यक्ति को कर्म नहीं रहता, सिर्फ यह बात बताने केलिये ही ठीक नौ वीं दिन आहार जो कर्म के समान है यानि पिंडाकूडु कहकर नाम दिया गया आहार को बाह्य प्रांत में रखकर, वो भी ऐसा रखते थे कि जानवर हो, परिंदे हो उसे खाये, इसतरह रखके उस आहार को खत्म हुये जैसा देखते हैं । इसतरह करने में अंतरार्थ यह है कि पिंडाकूडु कहलानेवाला कर्म अब बाकी नहीं हैं इस अंतरार्थ को समझाने के लिये बाह्यार्थ से ऐसा करते थे कि थोडा खाना बाहर रखके उसको परिंदे खाकर खत्म किये जैसा करते थे। जो कूडु (आहार) मोक्ष पाये हुये व्यक्ति को रखा गया उसको दूसरे कोई भी जानवर खासकते हैं।

इसतरह बोललेना गलत है कि सिर्फ कव्वे ही खाना चाहिये। पूर्व में बडों ने रखेहुये तमाम आचार रास्ते से हटकर जिसतरह अधर्म बनगये यह विषय भी काल गमन में मालूम न होते हुये ही दूसरे भावो में बदलगया। मरेहुये लोग कव्वों के रुप में आकर खाना खाके जायेंगे कहना एक बनी बनायी हुयी कहानि हैं उसके सिवा उसमें जरा भी सच नहीं हैं। मरा हुआ व्यक्ति वापिस कव्वे की तरह आना

असंभव हैं और असत्य भी। वेमन योगि सहाब भी इस बात का खंडन करते हुये इसतरह कहा हैं कि

तेलुगु ज़बान में :-

पिंडमुलनु जेसि पितरुल दलपोसि
काकुलकु बेट्टु गाड्देलारा
पिय्य तिनेडु काकि पितरुडेट्लायेरा
विश्वदाभिराम विनुर वेमा।

अनुवाद हिंदी में :-

पिंडों (आहार) को बनाकर पिताओं के
नाम पर कव्वों को खिलानेवाले गधे लोग
गंदगी को खानेवाला कव्वा पिता कैसे हुआ
विश्वदाभिराम विनुर वेमा।

इस ज़माने में मरेहुये बडों को कव्वों की तरह कम्पार करना, उन कव्वों को पिंडाकूडु रखने को देख कर, ऐसे लोगों को गधे कहकर गालि देते हुये पद्य में इसतरह सवाल किया कि गंदगी को खानेवाला कव्वा पिता या दादा कैसे होसकता है? यह तरीका गलत है कहकर वेमना योगि ने भी अपने पद्य में कहा हैं। कर्म के ओर इशारा करनेवाली आहार को सिर्फ बिना तरीके वाले कव्वे ही खाना चाहिये कहना ठीक बात नहीं है। वहाँ पर रखा गया खाने को परिंदे खासकते हैं, जानवर भी खासकते हैं। यह तरीका बाहर की जगह में अमल करनेवाले लोगों केलिये है तो, नदी के किनारे कर्मतंत्र को करनेवाले नदी में मिलाया करते थे। जब नद्दी में रहनेवाले जलचर (पानि के जानवर) उस खाने को खाते थे। हमने पहले ही

बयान करलिया ना कि पिंड का मतलब शरीर है, मरा हुआ व्यक्ति मोक्ष पाकर है। वैसे व्यक्ति को अब शरीर की कोई ज़रुरत नहीं है समझकर पिंडाकूडु नाम से यह कार्य करना अच्छी बात ही हैं। लेकिन मराहुआ व्यक्ति मोक्ष को नहीं पाने पर भी, वह अज्ञानी होने के बावजूद भी, उसको कर्मतंत्र करना, क्या यह मूर्खत्व नहीं है! पूर्व में नौ वीं दिन कर्मतंत्र को बडों ने इसलिये किया करते थे ताकि लोगों को यह मालूम होजाये कि अब से नवग्रहों का असर इस व्यक्ति पर नहीं रहेगा, तो आज बिना कुछ तरीके के कुछ लोग ग्यारवी का दिन, कुछ लोग दसवी का दिन, कुछलोग पाँचवी का दिन, कुछलोग तीसरा दिन, सबसे मुख्य कुछलोग संवत्सर का दिन कहते हुये करना विचित्र नहीं हैं क्या?पूर्व में बडेलोगों ने बाह्यार्थ से शरीर भुगतनेवाले कर्म को पिंडाकूडु या कर्मकाण्ड नाम रखके किया तो आज पिंडाकूडु के नाम पर शराब, विस्की, बीडी, सिगरेट रखना विचित्र नहीं है क्या! जो कार्य मोक्ष पाया हुआ योगी के लिये किया जा रहा है ताकि लोगों को यह मालूम हो कि मोक्ष पाया हुआ व्यक्ति को जैसे आहार खत्म होगया वैसे उसका कर्म खत्म होजाने से उसे जन्म लेनी नहीं पडेगी। लेकिन आज इस बात को भूलकर ऐसा कहना क्या अज्ञान नहीं है कि यमभटों से यमलोक को लेकर जायेंगे । अगर बाहर हो तो दूसरे जानवर, परिंदे पिंडाकूडु को खाना, पानि में हो तो जलचर पिंडाकूडु को खाने से वहाँ पर जो भी रखा गया वह खत्म हो जा रहा है। जो कर्म शरीर को था वह खतम होगया इस बात को बताने केलिये कर्मकाण्ड या पिंडाकूडु रखे थे तो उसके खिलाफ इसतरह कहना बिलकुल भी समंजस नही है कि जिसके नाम से पिंडाकूडु रखा वही वापिस आकर खायेगा।

पूर्व में बडे लोग पिंडाकूडु इस अर्थ के साथ किया करते थे कि शरीर ही पिंड है, शरीर जो कर्म अनुभव करता है वह कर्म ही पिंडाकूडु है, बिनाशेष के कर्म खतम होजाना ही पिंडाकूडु खतम होजाना, नवग्रहों के आधीन में अब वह नही है यह बताना ही मरे हुये दिन से नौ दिनों को मरे हुये व्यक्ति के नाम पर इस कार्य को करना। बडों ने कहा कि मोक्ष पाये हुये व्यक्ति को ही यह कार्य करना चाहिये, जो भी ज्ञान जानेते है वे कोई भी हो इस कार्य को करसकते हैं तो यह कहना अज्ञान है कि सिर्फ बेटे ही यह कार्य करना चाहिये, बेटों के ज़रिये खानदान वालों के ज़रिये करवाना भी अज्ञान ही होता है। जो व्यक्ति मरगया है वह मोक्ष पाया है और मोक्ष पाने का तरीका यहीं हैं कहकर अगर थोडा बहुत ज्ञान रखनेवाला व्यक्ति इसतरह दूसरे लोगों को समझाते हुये इस कार्य को किया होता तो आज यह सांप्रदाय सबको मालूम होता था । इस ज़माने में भी कर्मकाण्ड या पिंडाकूडु का कार्य करना बाकी है लेकिन कोई भई यह नहीं जानता कि क्यों करना चाहिये? कैसे करना चाहिये? इसकी जानकारी किसी को नहीं मालूम। कम से कम अब तो ज़िंदगी में ज्ञान को मालूम करके, योग के बारे जानकर मोक्ष को पाना चाहिये इसतरह का उद्देश्य रखनेवाले अगर मरगये तो जैसे भगवद्गीता में कहा वैसे अगर वक्त (काल) का सूत्र उन पर लागू होगया तो, वैसे लोगों को थोडा ज्ञान रखनेवालों के हाथों या ब्राह्मणों के हाथों या योगियाँ हो यह विधान करनी चाहिये। वह व्यक्ति मोक्ष पाया है कहकर बाहर ज़ाहिर करनी चाहिये। लेकिन साधारण अज्ञानों को डेत सेरेमनि या पिंडाकूडु रखना नहीं करना चाहिये। कुछ लोग समझते हैं कि अगर ऐसा नहीं किये तो इसका पीडा हमें लपेटलेगा समझकर ज़रुर उस कार्य को करके इसका पीडा इतने से जाने दो कहकर पानी नहाके आना

सांप्रदाय विरुद्ध होता है। पूर्व में बडे लोगों ने कहा कि इस कार्य को पवित्रता के साथ अमलकरनी चाहिये। लेकिन यह समझकर नही करना चाहिये कि यह अपवित्र है, पीडा है,पिशाच है। इतना कहने के बावजूद भी कुछ लोगों को शक सताते हुये अंदर कह रही है कि क्या यह सब सच है? आज इतने लोग है, कई स्वामिजियाँ है क्या उनको भी यह बात नहीं मालूम! अगर मन में इसतरह का शक है तो हम कुछ नहीं कह सकते।

इंदू सांप्रदायो में मनुष्य अपने शरीर को चिपकालिये हुये आचारों में से कुछ आचारों को मालूम करने की ज़रुरत है। ऐसे आचरणों में से कई आचरण उनके अर्थ हमारे रचनाओं में के **देवालय के रहस्य** नाम के ग्रंथ में मौजूद हैं। हम चाहते हैं कि जिज्ञासी लोग देवालय के रहस्य ग्रंथ पढकर मालूम करें।



दक्षिण दिशा के तरफ सर रखना

जो लोग योगी होते हैं वे किस वक्त मरने पर मोक्ष को पायेंगे उसीतरह किस वक्त मरने से जनम पायेंगे यह बात भगवद्गीता में बताया गया जो लोग योगि नहीं होते वे सर्वसाधारण से कभी भी मरे जनम ही लेते रहते हैं। सिर्फ योगियों को ही मोक्ष को पाने का मौका हैं, इसलिये उनमें से कौन मोक्ष को पाया है? यह मालूम करने केलिये काल के गतों को गीता में कहा हैं। उसके प्रकार मोक्ष पायेहुये व्यक्ति को आसानि से पहचान सकते हैं। इसतरह मोक्ष पाया हुआ व्यक्ति को **काल होगया** है कहते थे (यानि वह भी वक्त की तरह बदलगया या वक्त बनगया या ईश्वर बनगया)। काल होगया मतलब

परमात्मा में मिलगया, यानि जनम को नहीं गया, मोक्ष को पालिया। परमात्मा काल स्वरुप हैं। गीता में उसने कहा कि **कालोस्मि** मैं ही काल (वक्त) हूँ। इसलिये मुक्ति पाये हुये व्यक्ति को काल होगया कहना ठीक बात है। मोक्ष पाया हुआ व्यक्ति को **मरगया** या **मुरदा** नहीं कहना चाहिये। सर्वसाधारण व्यक्तियों को और जो योगि मोक्ष नहीं पाये उन पर **मरगया** शब्द लागू होता हैं। जिन लोगों ने मोक्ष को पाया,और जिनलोगों ने मोक्ष को नही पाया उनदोनों के बीच का फरख सबको मालूम होने केलिये मरते वक्त, कर्मकाण्ड करते वक्त, स्मशान में दफनाते वक्त फरख रखे थे।

पूर्व में बडे लोग जिन लोगो ने मोक्ष नहीं पाया उनकेलिये मरगया शब्द इस्तेमाल करते थे, मोक्ष पाये हुये व्यक्ति के लिये काल होगया (मतलब वक्त में मिलगया या ईश्वर में मिलगया) शब्द इस्तेमाल किया करते थे। ऐसा ही जो व्यक्ति मुक्ति नहीं पाया उसकेलिये पिंडाकूडु का कार्य नहीं किया करते। जो व्यक्ति मोक्ष पाया था सिर्फ उसकेलिये ही पिंडाकूडु रखते थे। कर्म से छुटकारा पाकर जिसने मुक्ति पाया सिर्फ उसीकेलिये शवयात्रा में **दिंपुडु कल्लमु** रेहता था। जो व्यक्ति मरगया उसकेलिये दिंपुडुकल्लमु नहीं रखते थे। ऐसा ही मृतदेह को जब जमीन में दफनाते थे तब भी साधारण से मरेहुये लोगों को गड्डे में दक्षिण दिशा के तरफ सर रखकर सुलाते हैं तो, काल होकर मुक्ति पाये हुये लोगों को उत्तरदिशा के तरफ सर रखकर दफनाते थे। इसतरह मरेहुये लोगो में सब तरीको में भी फरखे दिखाकर मोक्ष को एक पहचान और अहमियत दिये थे। पूर्व में बडे लोग बहुत ही अर्थसहित धर्मयुक्त से बनाये हुये कार्य भी पूरे तरीके से अर्थहीन होकर अधर्म आचरण की तरह बदलगये। पूर्व में सांप्रदायबद्ध से रखे

गये अचरणो में से कुछ आचरण आज भी रहने पर भी उन आचरणों को क्यों करना चाहिये? किन केलिये करना चाहिये? यह बात किसी को भी मालूम नही हो रहा है। अब तक मनुष्य मृत होने के बाद शवयात्रा का, दिंपुडु कल्लमु का अर्थ इंदू सांप्रदाय के प्रकार बयान करलिये। अब मृतदेह के खनन (खुदायि) के बारे में बयान करलेते हैं।

भूमि पर सूर्योदय पूरब के तरफ हो रहा है। पूरब के दिशा से शुरु करके देखें तो पूरब की पूरी व्यतिरेक दिशा को पश्चिम दिशा कह रहे हैं। ऐसा ही पूरब की तरफ मुडकर देखे तो पीछे जो है वह पश्चिम है तो सीधे तरफ को दक्षिण दिशा, बायें तरफ को उत्तर दिशा कह रहे हैं। पूरब और दक्षिण के बीच के कोने को आग्नेय दिशा, दक्षिण और पश्चिम के बीच के कोने को नैरुति दिशा, पश्चिम और उत्तर के बीच के कोने को वायुव्यदिशा,उत्तर और पूरब के बीच के कोने को ईशान्य दिशा कहते हैं। पूरे आठ दिशाओ में दक्षिण और उत्तर ये दो दिशायें ही मनुष्य मरजाने के बाद देखने के मुख्य दिशायें हैं। जब मनुष्य जिंदा होता हैं तब मुख्य से गौर करनेवाले दिशायें पूरब और पश्चिम हैं। हर हमेशा उदय होने वाले सूर्य को, अस्तमय होने वाले सूर्य को देखकर मनुष्य के पैदाइश को उदय होने वाले सूर्य से कम्पार करते थे, उसीतरह मनुष्य के मौत को अस्तमय होने वाले सूर्य के बराबर कम्पार करके बोललेते थे। प्रतिनित्य होने वाले सूर्योदय सूर्यास्तमय जनन मरणों की सूचना दे रही है तो वे दिशायें पूरब मनुष्य के पैदाइश की, पश्चिम मरण की निशानि है। ऐसा ही उत्तर दिशा मनुष्य की

मोक्ष की प्रतीक है तो दक्षिण दिशा मनुष्य की जनम की प्रतीक है। कुछ लोग वहाँ वहाँ पुराणो में भी बोललेते रहते हैं कि दक्षिण में यमपुरि है, दक्षिण दिशा में यमधर्मराज है। वास्तव में दक्षिण दिशा में यमपुरि हो, यमधर्मराज हो नही हैं। लेकिन दक्षिण दिशा में यमधर्मराज है कहने में थोडा मतलब है। गीता में भगवान ने यह कहा कि दंडनाधिकारो में यम मैं ही हूँ। हमने यह बात तो पहले ही जानलिये कि परमात्मा हमारे शरीर में ही आत्मस्वरुप से मौजूद हैं। हमारे रचनाओ में से **प्रबोधा ग्रंथ** में हम लोगों ने बयान करलिया कि आत्मा ही शरीर में यम की तरह है, दूसरों के शरीर से यमकिंकरों की तरह चलामण हो रही है। इसके मुताबिक यह जानलें कि शरीर में निवास कर रही दूसरी आत्मा ही यमधर्मराज है। यहाँ सबको मालूम न होनेवाली और एक बात भी है। वह यह है कि! पूरे शरीर में फैली हुयी आत्मा ब्रह्मनाडि में सातवें केंद्र में सर के अंदर केंद्रीकृत होकर हैं। आत्मा सर में केंद्रीकृत होकर अपने ताकत को पूरे शरीर में फैला रही है। सर के बीच में रहनेवाली आत्मा पूरा बीच में रहे बगैर थोडा सीधे तरफ ज्यादा रहने से शरीर के ताकत में भी थोडा फरख पैदा हुआ। दाये बाये ताकत (शक्ति) में फरख तो सब जानते ही है। आत्मा साधारण से सबको सीधे तरफ थोडा ज्यादा रहने की वजह से आत्मा को दक्षिण, यम नाम आये है। सीधे तरफ ज्यादा निवास करने से पूर्व में कहते थे कि यमपुरि दक्षिण में है। दक्षिण मतलब शरीर के बाहर नही समझना चाहिये। शरीर के अंदर ही दक्षिण दिशा में (सीधे तरफ) कह कर समझना चाहिये।

कर्म बाकी रहने से जो लोग फिर से जनम पाये उनका आत्मा से संबंध रहता ही रहता है। जब तक जीव शरीरधारि है तब तक आत्मा साथ में रहकर करनेवाले कर्मों को कर्म के खाता में

चढालेना, वापिस उनको कालानुगुण की तरह भुगतवाना भी आत्मा ही कर रही है। शरीर में यम की तरह कर्म को भुगतवाने में, कर्म को नमोदु (रिकार्ड) करके रखने में चित्रगुप्त की तरह काम कर रही हैं। जिन को शरीर होता हैं सिर्फ उन्ही के साथ यह पूरा ततंग होता है। इसलिये जब यह मालूम करलेते हैं कि मराहुआ व्यक्ति वापिस जनम को जाता है, उसे दक्षिण दिशा के तरफ सर रखकर दफनाते थे ताकि लोगों को यह मालूम हो कि यह व्यक्ति मोक्ष नही पाया है, यह आत्मा के साथ मिलकर जनम ले रहा है। आत्मा के तरफ जाने वाले को दक्षिण को,परमात्मा के तरफ जानेवाले को उत्तर की तरफ सर रखकर दफनाते थे। गीता में जो काल कहा गया उसके प्रकार जब योगि मरजाते हैं, अगर वे मोक्ष के हखदार है तो ऐसेलोगों को दक्षिण के तरफ सर रखकर नही दफनाते थे। मोक्ष पाये हुये योगियों के शरीरों को उत्तरदिशा के तरफ सर रखके दफनाया करते थे। इस जमाने में सबको दक्षिण के तरफ दफनाना होरहा है। पूर्व मे बडी महत्व से निर्माण किये हुये शरीर को दफनाने का सांप्रदाय पोशीदा होकर सिर्फ आचरण रास्ता बदलकर बाकी हैं। जनम को जानेवालों को दक्षिण दिशा के तरफ, जो लोग मोक्ष को पाये हैं उनको उत्तरदिशा के तरफ सर रखके दफनाने में जो ज्ञान है अगर उस ज्ञान को हम मालूम करलिये तो बहुत ही अच्छा है। अगर हम दूसरों को बताये तो उसका मतलब यह है कि हमने ज्ञान सेवा किया है।



झूट को हज़ार लोग कहने पर भी वह सच नहीं होता
सच को हज़ार लोग इनकार करने पर भी वह झूट नहीं होता

हिंदू रक्षण ! या हिंदू भक्षण हिंया ण !!

जिसने भगवद्गीता ही नहीं पढा क्या वह हिंदू रक्षक है?
जिन्हे हिंदू धर्म ही नहीं मालूम क्या वे हिंदू रक्षक है?

यह सत्य को तो सब जानते ही हैं कि हिंदू लोग आज जातियों में चीरे जाकर, उसमें भी ऐसा वर्णन किये कि कुछ जातियाँ बडे हैं तो कुछ जातियाँ छोटे हैं। ईश्वर ने सब मनुष्यों को बराबर पैदा किया तो कुछ मनुष्य अपने स्वार्थ बुद्धि से हिंदू (इंदू) समाज को टुकडे टुकडे करके चीरके बलहीन करके ऐसा प्रचार किये कि पूरे हिंदू समाज केलिये हम ही बडे हैं,जैसे हम कहते हैं वैसा ही सब लोग सुन कर कार्य करलेनी चाहिये। वह हिंदू समाज जो कई वर्णों की सूरत में हैं उसमें अपना कुल ही अग्रकुल है कह कर बोललेना ही नहीं बल्कि, यह ऐलान करलिये कि हम ही दूसरे कुल के सबलोगों के लिये मार्गदर्शक है,गुरु है। भविश्य में उनको कोई आढ न आये जैसा, सब कुलवालों को नीच कुल बनाकर, हिंदूसमाज के साथ बडा अन्याय किया है। उतने से रुके बगैर आज तक भी अपने आप को हिंदू समाज के रक्षकों की तरह बोललेते हुये, हिंदू समाज को सर्वनाश करते हुये, हिंदू समाज दूसरे मतों की तरह बदलने केलिये पहला कारक होरहे है। ऐसे लोग हिंदू समाज केलिये नुकसान पहुंचानेवाले कीडे होने पर भी, बाकी कुल के लोग उनकी असली स्वरुप को न मालूम होने से जैसे वे कह रहे हैं वैसे सुनने की वजह से,हिंदू समाज को पूरे तरीके से अज्ञान दिशा के तरफ, अधर्म मार्ग के तरफ मोडकर, लोगों को किसी भी हाल में दैवज्ञान को मालूम न होने दिया फिर उन्हे ऐसा यकीन दिलाया कि जो कुछ वे कह रहे हैं वही असली दैवज्ञान हैं।

ऐसी हालत में आज त्रैत सिद्धांतकर्ता श्री आचार्य प्रबोधानंद योगीश्वर जी ने अज्ञान दिशा के तरफ ठहरी हुयी हिंदू समाज को सही रास्ते में रखने केलिये, **भगवद्गीता में पुरुषोत्तम प्राप्ति योग अध्याय में बोधा की गयी क्षर, अक्षर, पुरुषोत्तम कहलानेवाले तीन पुरुषों के विषय को त्रैतसिद्धांत नाम से प्रतिपाद (निरुपण) करके दैवज्ञान सबको समझमें आये जैसा ग्रंथरुपमें लिखना, बोधा करना हो रहा हैं।** इन ग्रंथों के ज्ञान से आज लोग खुश हो रहे हैं कि हमें अब असल ज्ञान मालूम हो रहा है। जो लोग अग्रकुल में हैं वे लोग भी अपने अज्ञान के अंधेरों को छोडकर, इस बात से खुश हो रहे हैं कि अबतक जो ज्ञान हमें मालूम नही हुआ वह ज्ञान आज हमलोगों को योगीश्वर जी के द्वारा मालूम हो रहा है और वे खुशी से उनके शिष्यों में दाखिल हो रहे हैं। तो अग्रकुल में सिर्फ कुछ लोग योगीश्वर जी जो ज्ञानविषयों को बता रहे हैं उनको देखकर यह ज्ञान से तो लोग ज्ञान चैतन्य होकर, ज्ञान नही जाननेवाले हमलोगों की इज़्ज़त तक नहीं करेंगे, इससे समाज पर हम जो हुकूमत कर रहे हैं वह पूरा चली जायेगी समझकर उन्होने ऐसा प्रचार करना शुरु किया कि योगीश्वर जी जो ज्ञान बता रहे हैं वह त्रैतसिद्धांत हो, त्रैतसिद्धांत भगवद्गीता हो हिंदुओं का ज्ञान ही नही है, वह ईसायियों के मज़हब से संबंध रखने वाला ज्ञान है, कोई भी उस ज्ञान को पढना नहीं चाहिये। इतना ही नहीं हम हिंदू धर्म रक्षक है कहते हुये थोडा राजकीय का रंग लगालेकर, वहाँ वहाँ हमारे ज्ञान प्रचार को आढे आना भी हो रहा है। अपनी बात को सुनने वाले दूसरे कुल के लोगों से भी यह कह रहे हैं कि जो ज्ञान प्रबोधानंद योगीश्वर बता रहे हैं वह हिंदू ज्ञान ही नहीं है, ईसायियों का ज्ञान है, हिंदुओं का परदा लगाले कर ईसायियत का मत प्रचार कर रहे हैं इतना ही नहीं बल्कि उनको उक्साकर हमारे प्रचार को आडे आये जैसा कर रहे हैं।

योगीश्वर जी ने स्थापना की हुयी हिंदू (इंदू) ज्ञानवेदिका इसतरह के रुकावटों को थोडे वक्त तक सबर के साथ देखना हुआ। हम में सबर खतम होजाकर हमें अन्यमतप्रचारक जैसा वर्णन करनेवाले अग्रकुल के लोगों को, उनके अनुचरों का सामना करके सवाल करना हुआ। हमने पूछे हुये एक सवाल का भी उन्होने सही जवाब नहीं दिया। वे जवाब कैसे थे पाठकों की तरह आप देखिये।

हमारा सवाल :- हम गाँव गाँव फिर कर, गाँव में घर घर फिर कर हिंदू धर्म ऐसा प्रचार कर रहे हैं कि अबतक कोई भी हिंदू ने नहीं किया! इसतरह प्रचार करनेवाले हमें देखकर आप क्यों अन्यमत प्रचारक कह रहे हैं?

उनका जवाब :- हिंदू मत में कई स्वामीजियाँ हैं। उनमें से कोई भी घर घर जाकर प्रचार नहीं किये। हिंदू इसतरह प्रचार नहीं करते। ईसायियाँ ही बाज़ार बाज़ार, घर घर फिर कर प्रचार करते हैं। आप हिंदू का परदा पहनकर घर घर घूम कर ईसायियत का प्रचार कर रहे हैं।

हमारा सवाल :- अगर हम ईसायि है तो भगवद्गीता क्यों प्रचार करेंगे?

उनका जवाब :- आप जिसका प्रचार कर रहे हैं वह त्रैतसिद्धांत भगवद्गीता हैं,वह ईसायियों का है । आपने बैबिल को ही ऐसा नाम रखा है।

हमारा सवाल :- ईसायियाँ तो अपने आप को ईसायी ही बोललेते हैं। ऐसा ही बैबिल को बैबिल की तरह ही बोललेते हैं। जब उनका प्रचार ईसायियत, बैबिल है तो वे लोग उसी नाम से प्रचार करेंगे मगर हिंदुओं की तरह भगवद्गीता के नाम से क्यों प्रचार करेंगे? अबतक इसतरह कहीं भी नहीं हुआ। जिस मत के लोग उनके अपने मत का

नाम ही बोललेते हैं मगर दूसरे मत का नाम नहीं कहते। उतने दूर तक क्यों क्या तुमलोगों ने हमारी भगवद्गीता को खोलकर देखा हैं क्या? उसमें भगवद्गीता के श्लोक है या बैबिल के वाक्य है?

उनका जवाब :- त्रैतसिद्धांत कह कर है ना! हम यह अच्छी तरह जानते हैं कि त्रैत का मतलब त्रित्व है या त्रिनिटि है।

हमारा सवाल :- हिंदू धर्मों में अद्वैत सिद्धांत को आदिशंकराचार्य ने प्रतिपादन किया। विशिष्टाद्वैत को रामानुजाचार्य ने प्रतिपादन किया,द्वैत को मध्वाचार्य ने ऐलान किया। अब आचार्य प्रबोधानंद योगीश्वर जी ने त्रैतसिद्धांत का प्रतिपादन किया। सिद्धांतकर्तायें, सिद्धांत अलग होने पर भी सब हिंदू ही है कह कर तुम लोगों ने क्यों नहीं समझा?

उनका जवाब :- आपने आपके त्रैतसिद्धांत भगवद्गीता में लिखा कि यज्ञों को नही करना चाहिये हेना! असल में तो भगवद्गीता में वैसा नही हैं ना!

हमारा सवाल :- तुमलोग हिंदुओ में मुख्य होकर इतनी मूर्खत्व से कैसे बात करसकते हो? पूरे प्रपंच केलिये एक ही भगवद्गीता होती है मगर, इसतरह तुम्हारा भगवद्गीता, हमारा भगवद्गीता कह कर अलग नहीं रहता। भगवद्गीता का विवरण एक एक जन एक एक तरह जिसको जैसे समझमें आया वैसे बोले होंगे मगर,यह बात याद रखें कि सबकेलिये भगवद्गीता मूलग्रंथ एक ही है। जिन ज्ञानियों ने पढा वे सब उसकी तारीफ ऐसे कर रहे हैं कि त्रैतसिद्धांत भगवद्गीता सबसे बढकर सही भाव के साथ है तो, तुम्हारे समाज में कई लोग उसकी प्रशंसा भी कर रहे हैं तो, सिर्फ तुम थोडे लोगों को ही वह भगवद्गीता व्यतिरेक से दिख रहा है कहने के पीछे आपकी हसद और स्वार्थ साफ नज़र आ रहा है। हमने यह कहीं पे भी नहीं कहा कि यज्ञ मत कीजिये। हमने साफ कहा कि यज्ञों से पुण्य हासिल

होता है, स्वर्ग मिलता है। हमने कहा कि यज्ञों से मोक्ष नहीं मिलता, ईश्वर मालूम नहीं होगा (यानि ईश्वर को नहीं पायेंगे)। तुमलोग अपने आप को सब जातियों से स्वच्छ हिंदू बोलले रहे हैं ना! चलिये कम से कम एक हिंदू धर्म को तो बतायिये जो भगवद्गीता में कहा था।

उनका जवाब :- यह सब बातें हमें नही चाहिये....आप हिंदू नहीं है बस इतना ही....

हमारा सवाल :- इसतरह जिद्दी से बात मतकीजिये आप अग्रकुल वाले हैं कह कर जैसे आपकी मरज़ी है वैसे बात मत कीजिये। हम हिंदू नहीं है कहनेकेलिये क्या आप इसका कोई आधार या सबूत दिखापायेंगे? हमारी कहानि सैड में रखके अगर आप सच्चे हिंदू है तो भगवद्गीता में विश्वरुप संदर्शयोग अध्याय में ४८ श्लोक में,५३ श्लोक में भगवान ने क्या कहा आप ही बतायिये?

उनका जवाब :- हमने अबतक भगवद्गीता को नहीं पढा। अगर आप को चाहिये तो संपूर्णआनंदस्वामि से कहलवायेंगे।

हमारा सवाल:- कम से कम भगवद्गीता को भी आपलोगों ने नहीं पढा तो फिर तुम जैसे लोग योगीश्वर प्रबोधानंद स्वामि का दूषण करना अच्छी बात है क्या?कम से कम एक हिंदू धर्म को भी न जाननेवाले तुमलोग हिंदू धर्म रक्षक है कहना अच्छी बात है क्या? योगीश्वर जी ने जो ग्रंथ लिखे उनमें से एक ग्रंथ को भी पढे बगैर हमारे सिवा पूज्य,गुरुओं की तरह कोई और नहीं रहना चाहिये, इसतरह का हसद अपने अंदर रखलेके ऐसा बात करेंगे तो ईश्वर बरदाश नहीं करेगा।

उनका जवाब :- हिंदू मत में कई देवतायें है। शिव भी ईश्वर ही है,शिव का बेटा गणपति भी ईश्वर ही है, राम भी ईश्वर ही है,राम का सेवक

आंजनेय भी ईश्वर ही है। वैसे हिंदू मत में आप कहरहे हैं कि ईश्वर एक ही हैं तो फिर इसतरह कहना गलत नही है क्या?

हमारा सवाल :- हमने मत के बारे में नहीं कहा। हिंदू मत में कई ईश्वर रहना सही है, तो हमने यह कहा कि हिंदू ज्ञान में, हिंदू धर्म के प्रकार पूरे विश्व केलिये ईश्वर एक ही है। भगवद्गीता में ईश्वर ने जो कहा वही हमने कहा है उसके सिवा हमने यह कब कहा कि देवतायें नहीं है! हमने कहा कि सब देवताओं का भी मालिक एक है उसीको ईश्वर या परमात्मा या सृष्टिकर्ता कहते हैं, वही देवों का भी देव हैं, सब उसीकी आराधना करनी चाहिये।

उनका जवाब :- आप राम का नाम नहीं कहते,शिव का नाम नहीं कहते,विनायक का नाम भी नहीं कहते। किसीका नाम न कहते हुये ईश्वर,सृष्टिकर्ता है कह कर बहुत बार बतायें। ईश्वर शब्द को,सृष्टिकर्ता शब्द को ईसायियाँ ही इस्तेमाल करते हैं। हिंदू इस्तेमाल नहीं करते। इसीलिये आप को हिंदू नहीं ईसायि कह रहे हैं।

हमारा सवाल :- ईसायियत पैदा होकर दो हजार साल हुआ है। यह कोई भी नहीं बतासकते कि सृष्टी पैदा होकर कितने करोड साल हुये। सृष्टादि से सृष्टिकर्ता शब्द को, ईश्वर शब्द को हिंदू समाज इस्तेमाल करही रही हैं। तो हम यह पूछ रहे हैं ईश्वर, सृष्टिकर्ता कहलानेवाले शब्द पहले से हिंदू समाज में मौजूद थे तो उन शब्दों को क्या हिंदुओ ने ईसायियों को लीज़ पर दिया है? या पूरा बेच दिये? यह पूछ रहे हैं कि ऐसा कहाँ पर लिखा गया कि हिंदू लोग ईश्वर, सृष्टिकर्ता शब्दों को बोलना नहीं चाहिये?

उनका जवाब :- आपने कभी भी अपने आप को हिंदूओं की तरह नहीं बोललिये, हिंदू के बदले में हमेशा इंदू कहा था यह काफि है इस बात केलिये कि आप हिंदूमत की नहीं बल्कि अन्यमत की बोधा कररहे हैं।

ऐसी सूरत में क्या आप ने हिंदू मत को चीरे जैसा नहीं हैं क्या! प्रत्येक से इंदू मत कहनेवाली की प्रचार किये जैसा नहीं हुआ क्या! जब आप हिंदू ही है तो आप अपने ग्रंथों में हो, अपने बोधाओ में हो प्रत्येक से इंदू कह कर क्यों बोल रहे है?

हमारा सवाल :- हम सीधे एक सवाल पूछते हैं जवाब दीजिये। हिंदू,इंदू लफ़ज़ में थोडा शब्द के सिवा क्या फरख है आप ही बतायिये। तेलुगु भाषा लिखनेवाले सब कहते हैं कि हिरण्यकश्यप को **नरशिंह** स्वामि ने मारा और वैसा ही लिखते भी हैं। प्रस्तुतकाल में जिस व्यक्ति का नाम नर**शिं**ह होता है वह भी अपने नाम को नर**शिं**ह ही कहकर लिखता है यह बात तो सब जानते हैं। तो हम कह रहे हैं कि वह बात गलत है उस नाम को वैसा लिखना नहीं चाहिये उसे **नरसिंह** कह कर लिखना चाहिये। और हम यह भी कह रहे हैं कि जंगल में मृगराजा को **सिं**ह कहते हैं लेकिन **शिं**ह नहीं कहते हैं। और हमने यह भी कहा कि **सिंह** शब्द का अर्थ है मगर **शिंह** शब्द का कोई मतलब नहीं हैं। उसीतरह अगर जो सच है वह कहे तो **इंदू** शब्द का अर्थ है मगर **हिंदू** शब्द का कोई मतलब ही नहीं हैं। सृष्टादि में जो पैदा हुआ वह इंदू समाज है (यानि पूरा विश्व जब पैदा हुआ उसवक्त ही इंदू समाज पैदा हुआ), लेकिन बीचमें वह जिसतरह **दृष्टि** शब्द **जिष्टि** शब्द में बदलगया वैसा ही इंदू शब्द हिंदू में बदलकर आज **इंदू** को **हिंदू** कह कर पुकार रहे हैं। इंदू लफ़ज़ ही क्यों इस्तेमाल करनी चाहिये हिंदू क्यों इस्तेमाल नहीं करनी चाहिये यह बात भी हमने अपने ग्रंथो में साफ तौर पर विवरण दिया है। जो सत्य है वह आप अच्छी तरह से जानते हैं उसके बावजूद भी तुम लोग इस हसद (असूय गुण) से बात कर रहे हैं कि हमारे सिवा समाज में और कोई बडे नहीं रहना चाहिये।

अग्रकुल में कई बडे लोग हमारे त्रैत सिद्धांत ज्ञान को मालूम करके खुशी व्यक्त कर रहे हैं तो, कुछ लोग गल्लियों में घूमनेवाले गुंडों की तरह इसतरह कहना अच्छी बात नहीं है कि हम मारेंगे, भोकेंगे, जलादेंगे आप प्रचार नहीं करना चाहिये । हमारे ग्रंथ पढे बगैर ही बात करना, हमने जो बातें कहीं है उनको सुने बगैर ही यह सब ड्रामा,नाटक है कहना अच्छी बात नहीं है। हम यह पूछ रहे हैं कि आप में से कोई भी हो यह साबित करके दिखायिये कि हमारे ग्रंथो में कहीं पे भी हो दूसरे मतों का प्रचार किये जैसा,या फलाना मत में दाखिल होजायिये जैसा कहा हो। जिसने यह साबित किया उसे **इंदू ज्ञानवेदिका के तरफ से दस लाख रुपये दे सकते हैं। अगर साबित नहीं करपाये तो तुम लोग किसी भी गाँव में हो श्रीकृष्ण के मंदिर के लिये लाख रुपे देना चाहिये।** क्या कोई भी इस शर्त के लिये आगे बडेंगे?

इंदू ज्ञान वेदिका और
प्रबोध सेवा समिति

**१) चार अधर्म दस प्रतिशत मनुष्यों में हैं तो,
सिर्फ एक मत कहलानेवाला अधर्म ९९ फीसद है ।**

२) यज्ञ, दान, वेद, तपस्याएँ चार है तो, पाँचवाँ अधर्म मत है ।

३) मत दैवमार्ग में बडी रुकावट है ।

४) मत ऐसी अधर्म है जो सब अधर्मों से बढकर है ।

५) अगर प्रपंच मार्ग में मत है तो दैव मार्ग में खत्म होजाऊगे ।

६) कलियुग में नये से पैदाहुयी पाँचवीं अधर्म ही मत है ।

इंदू सांप्रदाय

प्रमुखों की लेखा

साक्षि न्यूस पेपर २१-०१-२०१४



इंदू देश ही इंडिया है!

हिमालय, विंद्यापर्वतों के बीच उस ज़माने का, आर्यों का भूभाग कहाँ रहता था, उस जगह को तुमने हमारे देश के चित्र में देखा था। उसका आकार ऐसा दिखता था कि जैसे उगताहुआ चांद दिखता है, इसीलिये आर्यवर्तक को इंदूदेश नाम आया था। इंदू देश ही हिंदू देश हुआ हैं।

रामायण पैदा होने के बहुत वक्त के बाद महाभारत पैदा हुई थी। वह रामायण से भी बडी ग्रंथ हैं। उसमें जो कहा गया था वह आर्य द्राविडों का युद्ध नहीं था। आर्यों के बीच जो कुटुंब कलह पैदाहुआ वही भारत कथा हैं। महाभारत में कही गई कहानियाँ, धर्म इतने उतने नहीं हैं। वे बहुत ही खूबसूरत, गंभीर से रहते हैं। इन सबसे बडी महत्व वाली भगवद्गीता नाम की महाग्रंथ महाभारत में रहने की वजह से वह हम सबकेलिये प्रियतम हुई हैं। कई हज़ारों सालों पहले ही हमारे देश में ऐसे महत्व ग्रंथ पैदा हुये थे। इन्हे बडे महान लोग ही लिखे हुए होंगे। ये ग्रंथ पैदा होकर इतना वक्त गुज़रने पर भी उनके बारे में मालूम न किये हुए बच्चे हो, फायिदा नहीं पाये हुए बडे हो नहीं रहते।

* उस लेखा में से जो नेहरू ने इंदिरा को लिखा